दानचिंतामणि

(एक ऐतिहासिक उपन्यास)

दानचिंतामणि

(एक ऐतिहासिक उपन्यास)



जी ब्रह्मप्प, एम ए
रीडर, कन्नड - विभाग
सरकारी कालेज, मडकेरी

एम के भारतीरमणाचार्य, एम ए
हिंदी प्राध्यापक
सरकारी कालेज, कोलार



प्रकाशक
मैसूर रियासत हिंदी प्रचार समिति
जयनगर - बेंगलोर - 11

प्राप्ति स्थान

मैसूर रियासत हिंदी प्रचार समिति

जयनगर बेंगलोर 11

और

विद्या साधन केंद्र

III मेन रोड

हनुमंतनगर, बेंगलोर 19

मुद्रक

श्री कृष्णा प्रिंटर्स,

266/8 III मेन हनुमंतनगर

बेंगलोर 19

प्रथम संस्करण] [मूल्य: 3-50

अपनी दो बातें

एक हजार वर्ष-पूर्व चालुक्य राज्य में महामहिमामयी अत्तिमब्बे जीवित थी। इस महिलामणि का यशोगान रन्न ने अपनी अमर कृति अजितपुराण में किया है। उस से प्रेरणा पाकर श्री जी ब्रह्मप्प ने इस उपन्यास की रचना कन्नड में की है।

श्री जी ब्रह्मप्प कन्नड विभाग के प्राध्यापक हैं। आजकल मडकेरी के सरकारी कालेज के रीडर हैं। आपने जैन-साहित्य का गहरा अध्ययन किया है। उपन्यासो के द्वारा अपने ज्ञान का प्रसार जनता में कर रहे हैं।

अजित पुराण के अतिरिक्त लेखक ने पोन्नकवि रचित शाति पुराण, सर्वश्री वि एस कुलकर्णी की साहित्य-सुधा, आचार्य ती न श्रीकठय्य, के समालोकन, डॉ एस श्रीकठ शास्त्री के सोर्सस आफ कर्नाटक हिस्टरी, नीलकठ शास्त्री के ए हिस्टरी आफ साउथ इडिया एव लक्कुडी के शासन S I-1, XI-1, बाबे कर्नाटक इन्स्किप्क्षन्स जिल्द 1 भाग 1 –आदि से भी विषय सग्रह करके बचे-कुचे अश को कल्पना द्वारा भर कर इस दानचितामणि का ढाचा तैय्यार किया है।

ब्रह्मप्प और हम सरकारी कालेज में 1962–67 तक सहोद्योगी थे। 1966 में दानचितामणि का हिंदी-रूप तैय्यार हुआ।

मैसूर रियासत हिंदी प्रचार समिति ने अपने पाठ्यक्रम में इस को स्थान देकर छपाने का अवसर दिया और। स्वय प्रकाशन का भार भी उठाया। समिति के कार्यकर्ताओ के हम कृतज्ञ हैं।

अनिरीक्षित विघ्नबाधाओ के आने पर भी श्री कृष्णा प्रिन्टस् की मालकिन अमृता नागराज ने इस की सुदर छपाई कर दी है। अकेली अमृता नागराज ने अक्षर-जोड से लेकर छपाई तक का पूरा कार्य दिन रात काम करके संभाला। उनकी पचवर्षीय पुत्री उषा कुमारी से लेकरहमारे घर के छोटे बडे सभी व्यक्तियो ने इस कार्य में किसी

न किसी रूप में हाथ बटाया है।

हम इन सब की शुभ-कामना करते हैं।

प्रिय पाठकों से सविनय निवेदन है कि पुस्तक की छपाई शीघ्रता में हुई। अतएव त्रुटियों का होना स्वाभाविक है। प्रार्थना है कि क्षमा करें और छोटी-बड़ी सब प्रकार की त्रुटियों को सुधारकर पढ़ें और उनकी सूचना हमें भी दें ताकि अगले संस्करण में सुधार कर सकें। ऐसे महात्माओं के सुझाव को धन्यवाद स्वीकार करेंगे।



प्रकाशकों की ओर से

पूज्य बापू के सन्मानोत्सव के अवसर पर श्री बह्मण्य के उपन्यास रामचिंतामणि को पाठकों को भेंट करते हुए समिति असीम आनंद का अनुभव कर रही है। रामचिंतामणि की वस्तु ऐतिहासिक है और कन्नड साहित्य के स्वर्णयुग से संबंध रखनेवाली है।

इसका हिंदी अनुवाद श्री भारतीरमणाचार्य से तैयार हुआ। श्री आचार्य जी हिंदी और कन्नड के सधे हुए लेखक हैं। सैकड़ों लेख और दर्जन से भी अधिक मौलिक और अनुवादित ग्रन्थ इस बात के साक्षी हैं। आप 25 वर्षों से हमारे साथ हैं समिति के सक्रिय कार्यकर्ता एवं आजीव सदस्य हैं।

लेखक के इच्छानुसार पुस्तक दि रत्नवर्मा हेग्गडे और श्रीमती रत्नम्मा को समर्पित है जो आधुनिक चामुंडराय और रामचिंतामणि से हैं। श्री गोम्मटनाथ की फुट की पाषाणमूर्ति बनवाने का कार्य प्रारंभ करके स्वर्गवासी हो गए। आप के सुयोग्य पुत्र वीरेंद्र हेग्गडे आदि इस कार्य को आगे बढ़ा रहे हैं। परमात्मा की कृपा से यह कार्य पूर्ण हो और हमें समवशरण देखने का सौभाग्य प्राप्त हो। आप के परिवार तथा पाठकों की शुभ कामना करते हुए आशा करते हैं कि साहित्य के आदान-प्रदान रूपी इस कार्य का समादर राष्ट्रभाषा प्रेमियों द्वारा होगा।

जय हिंद — जय हिंदी

सेवा में,

आदरणीय
दि रत्नवर्मा हेग्गडे

और

आप की धर्मपत्नी
श्रीमती रत्नम्मा





को

सादर समर्पित

जिनचद्रमुनि पूर्वाभिमुख करके पीठ पर वैठे थे । होमकुड के भस्म से मुनि के मुख और सिर अच्छी तरह मले गए। तदनतर जिनचद्र ने अपनी मुट्ठी में केशराशि पकड इस भाति जड से उखाडी मानो कर्म की जड ही उखाड रहे हो । दाढी-मूँछ तक ऐसे ही उखाडी गई । फिर भी वे हँसमुख थे । अन्य भक्तवृन्द बचे-कुचे वाल उखाडने लगे, पर बहुत सभल सभलकर । इस कार्य में अत्तिमब्बे एव उसकी बहन गुडुमब्बे का उत्साह वर्णनातीत था। पीठ पर चढकर मुनि के सिर से वाल उखाडने में वे बडी उत्सुकता एव कौशल दिखा रही थी । कभी-कभी इस कार्य के लिए मुनि जी की जाघो पर भी चढ जाती थी । तब नागमय्य उन दोनो को रोकते हुए कहते 'छी' कैसा अनर्थ ! वडो पर मत चढना, क्षमा माँगकर नमस्कार करो। वे दोनो नमस्कार करती और मुनिजी मन ही मन असीसते कि तुम दोनो सम्यक्त्व चूडामणि बनो । वे दोनो इस तरह काम कर रही थी मानो जिनमूर्ति का निर्माल्य उतार रही हो। इन वहनो का उत्साह सांक्रामिक वना, औरो ने भी इस कार्य में हाथ वटाना शुरू किया। पर महामुनि जिनचद्रजी महाशिल्पि के हाथ पडी प्रतिमा के समान वैठ थे। भक्तवृद ने मुनि के सिर और मुख के सभी वाल उखाड दिए। इस लोच के समाप्त होने पर जिन-गधोदक अच्छी तरह मल दिया गया। इससे मुनिजी इतना प्रसन्न हुए मानो उनको सजीविनी का स्पर्श ही प्राप्त हुआ हो । शरीर पर पडे हुए वाल पिच्छ से झाड लिए । अत्तिमब्बे एव गुडुमब्बे को अपने पास विठाकर मुनि जिनचद्रजी ने आशीर्वाद दिया — तुम दोनो सम्यक्त्व चूडामणि वनो ।

पुगनूर में जिनचद्रजी की यह लोच-क्रिया बडी धूम से मनाई गई । तब चालुक्य महामन्त्री नागमय्य के नेतृत्व में काय

आयोजित था तो कहना क्या ? नागमण्य के पुत्र मल्लप और पुन्नमय्य भी सारा राजकाज छोड परिवार सहित उस समारोह में सम्मिलित थे। जिनचंद्रजी उस समय के धर्मगुरु थे। आप सदा सपत्ति समुद्र में तैरनेवाले नागमय्य के परिवार को सही रास्ते पर ले चलनेवाले कर्णधार का काम किया करते थे। महा पराक्रमी मल्लप और पुन्नमय्य पर भी आप का अंकुश था। आप की अनुमति और आशीर्वाद के बिना न नागमय्य किसी कार्य में प्रवृत्त होता न उनके बेटे ही किसी काम में हाथ लगाते।

लोच के बाद मुनि के केश गुच्छों का नदी में विसर्जन करना था। अतएव सभी राज-मर्यादाओं के साथ जुलूस निकला। राजकीय पूरीण नागमय्य और उनके पुत्र नंगे पाँव चल रहे थे। उनकी भक्ति सराहनीय थी। इस प्रकार केश-विसर्जन क्रिया भी समाप्त हुई।

उस दिन जिनचंद्रजी ने व्रत रखा। उस समारोह में सम्मिलित भक्तवृंद को नागमय्य ने प्रीति भोज दिया। भोजन के उपरांत प्रमुखों की सभा हुई। वे सब जिनचंद्रजी के दर्शनार्थ आए थे। जिनचंद्रजी के साथ जटाधारी श्रमण पोन्न भी विराजमान थे। पंप कवि भी उपस्थित थे। उन्होंने इन दोनों को साष्टांग किया। दोनों ने आशीर्वाद दिया धर्मवृद्धिरस्तु कवि पंप ने एक-एक करके अपने परिवार के सभी व्यक्तियों का परिचय करा दिया।

जिनचंद्रजी ने वार्तालाप प्रारंभ किया –

पंपदेव ! इन दिनों में तुम क्या लिखते बैठे हो ?

आचार्य ! वे तो महाज्ञानी थे। वे कहाँ और मैं कहाँ ?

पंपदेव विनम्र थे।

हमारा मतलब भी यही था। पूर्णज्ञानी बनने के बाद ही मौन मुकुट-सा शोभायमान बनेगा। तुमने इधर कुछ रचना नहीं की ? क्यों ? पारस (पारेसे) से रहनेवाले तामस बनते जा रहे हो ?

मुनिजी के कथन मे आक्षेप सूचक ध्वनि थी।

महाप्रभु अरिकेसरी के चल बसने के बाद मुझे कुछ भी नही रुच रहा है।

पप का गला बैठ गया।

अरिकेसरी सचमुच महान थे। उनकी मृत्यु से ससार को बडी क्षति उठानी पडी है। यह तो ठीक है, पर हमलोगो का कर्तव्य तो है कि जितने दिन जीते रहें तब तक सास लेते रहें।

ठीक है। पर क्या सूरज के डूबने पर कमल खिले रहेंगे? मेरी स्फूर्ति की साकार मूर्ति थे अरिकेसरी! मेरे उत्साह के उद्गम थे अरिकेसरी! मेरे उल्लास के फूल थे अरिकेसरी! ऐसे व्यक्ति को खोकर जिन्दा रहना निलज्जता है। यह जीवन व्यर्थ है। अब किस के लिए जीऊँ?

पप की बातो में जीवन के प्रति अनासक्ति का भाव था।

पपदेव! एक व्यक्ति के पीछे लोक व्यापार रुक नही सकता। यह ससार प्रवाह है। यहाँ आनेवाले आते रहते हैं जानेवाले जाते रहते हैं। चन्द दिनो के लिए साथ रहते है और कुछ दिन बाद विवश होकर अपने प्रिय बन्धुओ को छोडकर जाना ही पडता है। आदिपुराण के कवि हो तुम! तुम ही अगर ऐसे बन बैठो तो लोगो का मार्गदर्शन कौन करें? ऐसे आर्तभाव से क्या तुम्हारा भला होगा?

महात्माजी! मैंने भी कई बार इसी प्रकार सोचा है। औरो को ऐसे ही उपदेश दिया भी है। पर अरिकेसरी का निर्वाण मेरे लिए दुस्सह बना है। उनसे प्रदत्त वस्तु वाहन वस्त्रादि को सजा कर देखा करता हूँ तो क्षणभर के लिए विरह व्यथा लुप्त सी दिखाई देती है। पर दूसरे ही क्षण मुझे ऐसा लगता है मानो एक एक वस्तु मुझे धिक्कारते हुए कह रही हो---देख अरिकेसरी नही रहे न क्यो रह गया? अरिकेसरी के दिए गए नवरत्नो को तब देखता था अब भी देखता हूँ पर आँसू बहाते हुए। यह बात स्पष्ट हो गई है कि अरिकेसरी

के बिना मेरे लिए स्वर्ग भी नरक ही रहेगा ।

कवि के आँसू फूट निकले । गला बैठ गया । सारे सभासद भावोद्रेक से काँप उठे ।

पद्मदेव ! आँसू बहाने से तो केवल आँख दुखने लगेगी अरिकेसरी तो नहीं आएगा । इस दुर्बलता को दूर करो । आत्मा की अमरता की बात सोचो । इस में तुम्हारा भी हित है और लोक का भी । सुनो ! शान्तिपुराण सुनने का मेरा भाव दिन-दिन बढ़ता जा रहा है । तुम्हारा शान्तिपुराण एक महान कृति है । तुम्हारा भारत सचमुच हमारे भारत-सा महान एवं अमर्त्य है । अतएव तुम शान्तिपुराण रचो ।

पप को कार्योन्मुख करने के भाव से जिनचन्द्रजी को भी कहना पड़ा ।

पर पप ने उत्तर दिया

क्या मैं लिखने बैठूँ ? क्या यह सम्भव है ? अरिकेसरी की चिता में ही मैंने काँटा भी जला दिया । क्या कभी विधवा भी सन्तान पा सकेगी ? पाये ही पाये पर क्या उसका समादर होगा ? पद्मदेव से आगे बोलते नहीं बना । उत्तरीय से आँसू पोंछने लगे । इस दृश्य को देखकर सात-आठ वर्ष की बालिका अत्तिमब्बे पप के पास आई और बोली मामाजी आप क्यों रोते हैं ? आप को क्या चाहिए ? आप का कुछ खो गया है ? ऐसे कहते कहते अपने लहँगे की छोर से आँसू पोंछने लगी । दूसरी ओर से गुण्डमब्बे यह कहते कहते रोने लगी कि मामा ! तुम्हें क्या हुआ है ? हमारे यहाँ तो कोई नहीं रोता ।

इन दोनों बालिकाओं को पद्मकवि ने हाथ पसार कर अपनी ओर खींच लिया । उनकी आत्मीयता से प्रभावित हुए । दोनों को अपनी गोद में बिठा लिया । भावोद्रेक में उन बालिकाओं के आँसू उमड़ पड़े । महाकवि ने उनके आँसू पोंछे । बोले — मैं अब नहीं रोऊँगा । तुम्हारी । आगे कह नहीं सके ।

अत्तिमब्बे ने फिर पूछा — मामा, तुम्हें क्या चाहिए ?

बेटी, जिस वस्तु को खोकर मैं दुखी हूँ उसे कोई ला कर नही दे सकता पप की वाणी खिन्नता से सनी हुई थी।

मैं ला सकती हूँ -- गुडुमब्बे ने आश्वासन दिया।

मैं भी ला सकती हूँ -- अत्तिमब्बे ने दृढता से कहा।

मामाजी ! कहो न ? क्या खो गया है ?

• दोनो ने प्रश्न किया।

बेटी तुम सुनकर क्या करोगी ? हमारे महाराजा चल बसे। समझो ? अब उनको कौन ला सकता है ?

पप की माँग अत्यत जटिल थी।

पर क्षणार्ध में अत्तिमब्बे ने इन का समाधान ढूँढ निकाला। और बोल उठी : ", हाँ, तुम्हारे राजा चल बसे, पर हमारे राजा तो हैं ! मैं उनको बुला लाती हूँ।

गुडुमब्बे का उत्तर सीधा था—

मामाजी, तुम हमारे यहाँ ही ठहर जाओ।

कौन खिलाएगा ? पिलाएगा ? — पप ने तक किया। भोली भाली लडकियो की बातो में विनोद पा रहे थे।

मैं करूँगी। — अत्तिमब्बे ने दृढता से उत्तर दिया।

मुझे कपडे ? ---- पप की माँग बढती गई।

मेरे दादाजी के कई कपडे हैं, पहन लीजिए। पिताजो की धोतियाँ भी मैं दूँगी – गुडुमब्बे ने आश्वासन दिया।

इन दोनो की बातो से पपकवि का दुःख दब गया। अरिकेसरी जैसी उदारता की मूर्तियाँ इस कर्नाटक म कई हैं—ऐसा सोचकर प्रसन्न हुए।

देखो पप जी ! बच्चे कितने नादान होते हैं ? इन्ह क्या अभाव है ? केवल हम सारी दुनियाँ की झझटो को ढोए दबे जाते हैं,

तुम्हारी कीर्ति छूटती जाती है। सच बात तो यह कि जो बच्चों का लालन हो वही सच्चा ज्ञानी है। और! तुम पुराण लिखना शुरू करो। तुम्हारा लोक यहाँ रस प्रवाह समझा देगा।

जिनचन्द्रजी ने इन शब्दों से पंप को प्रेरित करने का प्रयत्न किया।

फिर वही आज्ञा! मुझसे लिखते नहीं बनता। इस जन्म में पुनः न लिखने की मैंने कसम खाई है। आप की इच्छा तो शान्ति पुराण लिखवाने की है न?

जी हाँ।

यह कोई बड़ी बात नहीं। आप की बगल में ही बैठे हैं न ये पोन्नजी, ये रामायण की रचना कर चुके हैं। ऐसे कवि चक्रवर्ती के लिए यह कोई बड़ी बात नहीं होगी। ये शान्ति पुराण लिखेंगे। आज्ञा हो।

पोन्न ने उत्तर दिया — देखिए। प्रश्न सीधा है। आप को शान्ति पुराण लिखने का आदेश हुआ है। आप लिखिए।

स्वामी जी मेरा आशय समझिए। मैंने एक लौकिक और एक पारमार्थिक — दोनों रचनाएँ की हैं। आप भी एक पुराण की रचना करें तो बड़ा अच्छा होगा। रामायण सफल लौकिक काव्य है। शान्ति पुराण आप का अलौकिक अर्थात् पारमार्थिक काव्य बन जाए। —यों युक्ति पूर्वक खिसक जाने का प्रयत्न पंप ने किया।

पोन्नजी भी लिखें और आप भी लिखिए अत्तिमब्बे बोली।

हाँ हाँ आप दोनों लिखें। एक मैं लूँगी, एक मेरी दीदी।

गुंडमब्बे ने स्फूर्ति से कहा। अपनी बात पर आप फूली न समाई। नाच उठी। वहाँ उपस्थित सभी लोग इनके भोलेपन से असीम आनंद का अनुभव करने लगे।

पंप ने उन दोनों को प्यार से पास बुलाया और कहा बच्चियो चलो हमारे साथ। हम अपने यहाँ ले जाएँगे।

क्यों मामाजी ! तुम्हीने कहा की वहां राजा की मौत हो गई है। यहां राजा हैं। हम यहीं रहें । —अत्तिमब्बे ने कहा ।

क्यों मामाजी, यह स्थान आप को पसंद नहीं आया ?
—गुंडुमब्बे ने प्रश्न किया ।

बडा अच्छा है । तुम्हारा यह देश बडा उत्तम है ।
पंप ने आश्वासन दिया ।

तो यहीं रह जाओ न — अत्तिमब्बे ने दृढता से कहा ।

तुम्हारी मामी को तो वुला लाना होगा ।
पंप ने मुस्कुराते हुए कहा ।

हां हां, उनको वुला लाना है — गुंडुमब्बे ने स्वीकृति दी ।

यह मामाजी का वहाना है। यहां से जाने के वाद फिर नहीं लौटेंगे अत्तिमब्बे ने ताड लिया ।

ठीक कहती हो वेटी, जिनचंद्रजी के ओठ खिल उठे ।

तब तक चुपचाप बैठे हुए नागमय्य ने पंप कवि को अपने यहां ठहरा लेने के इरादे से कहा — देखिए, आज रात को कविजी के श्रीमुख से आदिपुराण सुनने का चाव उमड रहा है । कौन दरवाजे पर आए इस सुअवसर को जाने देगा ? हमारा अहोभाग्य है । आप हमारी प्रार्थना स्वीकार कीजिए।

यह वहुत ही उत्तम प्रस्ताव है। शिवरात्रि के दिन प्रथम तीर्थंश का चरित हो । सो भी महाकवि के श्रीमुख से ही । क्या ही आनंद की वात है ! —जिनचंद्रजी ने समर्थन किया ।

वहन ! मामाजी कहानी सुनाएगे अत्तिमब्बे ने संतोष प्रकट किया ।

ओह ! तव तो हम इनको ओझा जी कहें — गुंडुमब्बे बोल उठी। दोनों आनंद से पुलकित हो रही थी ।

नागमय्य का परिवार बडा था। महा साहसी मल्लप और

चतुर पुन्नमय्य दोनों उनके पुत्र रत्न थे। उनकी पत्नी न थी। परमात्मा की कृपा से मुहामोची सुहागिन की मौत कभी पा चुकी थी। नागमय्य की कोई सन्तान नहीं थी। पर मल्लप की गोद कभी खाली नहीं रही। नागमय्य को पत्नी उनकी भावज अक्कब्बे थी। मल्लप की इस धर्म पत्नी ने कई सन्तानों को जन्म दिया। पुन्नमय्य एळमय्य विक्रमोदमय्य जाहवमल्ल और वस्त — ये पांच पुत्र थे। इनके बाद अत्तिमब्बे और गुण्डमब्बे का एक साथ जन्म हुआ था। अक्कब्बे की तीसरी लड़की थी नागियब्बे। इस प्रकार आठ सन्तानों की माँ बन कर उस साध्वी ने नागमय्य का घर भर दिया था।

नागमय्य और जिनचन्द्र समवयस्क थे और बचपन के साथी थे। नागमय्य ने जिस समय लौकिक कार्यक्षेत्र अपनाया था उसी समय जिनचन्द्रजी ने आध्यात्मिक क्षेत्र को अपनाया था और सन्यास स्वीकार किया था। नागमय्य ने लौकिक में यश प्राप्त किया जिनचन्द्रजी ने पारमार्थिक साम्राज्य में अद्वितीय स्थान प्राप्त किया।

नागमय्य के पूर्वज वेदवेदांत में पारंगत कौण्डिन्य गोत्र के ब्राह्मण थे। इस वेद विद्या में नागमय्य की काफी पहुँच थी। जिनचन्द्रजी के प्रभाव से उन्होंने यज्ञ-याग का त्याग किया था और जैनागमों का अध्ययन किया। जैनधर्म के अहिंसातत्त्व से नागमय्य अत्यन्त प्रभावित थे। अतएव उन्होंने अपनी इच्छा से जैनदीक्षा ली। बाद को इनके परिवार के लोग एक एक करके जैनदीक्षा लेते गए। उधर देवेन्द्र मुनिजी ने पम्प के पिता अभिराम को जिनदीक्षा दी थी।

सर्वत्र जैनधर्म फैल गया। यज्ञवेदी के स्थान में दयाधर्म के चबूतरे बनाए गए। मानस्तम्भ पर अहिंसा का ध्वज फहराने लगा।

नागमय्य चालुक्यों के महाअमात्य थे। चालुक्यों की दूसरी शाखा के आश्रय में पम्पकवि थे। पोन्नजी यद्यपि समय थे फिर भी राष्ट्रकूट सम्राट के कवि के रूप में प्रसिद्ध थे। कभी कभी जैनधर्म उनकी

महोत्सवो में से सभी सम्मिलित हुआ करते थे। उन दिनो के सन्यासी राजकीय परिवार में से धर्म रूपो मदराचल के सहारे कन्नड सस्कृति रूपी अमृत निकालने में लगे हुए थे। उन दिनो के राजा महाराजाओ का सिर अहिसा के सम्मुख आप झुका करता था। वैसे ही उनके अमात्यगण दयावृक्ष के माली बने रहते थे।

जिनचद्र मुनि ऊँचे आसन पर विराजमान थे। उनकी बगल में समण पोन्नकवि विराज रहे थे। वेदिका पर पप कवि आदिपुराण का पाठ कर रहे थे। सुदर लिखावट थी। सहस्रो पत्र थे। उनको श्रीगध के पटल के बीच मे जोडकर ग्रन्थ बनाया था। श्रीगध के उन पटलो के चौकोर सोने से मढे गए थे। सोने में सुगध की बात यहाँ चरितार्थ दिखाई दे रही थी। उस सुगध में मानो धर्म की शीलल्ता ने चार चाद लगा दिए थे। आदिपुराण ग्रन्थ बडा मनमोहक था। कदली-गभ-श्याम पप कवि भी बडे आकषणीय व्यक्ति थे। न अत्यत ऊँचे कद के थे, न छोटे ही। देखनेवाले देखते ही रह जाए ऐसा व्यक्तित्व था। खिले कमल-सा मुख, नीलोत्पल से विकसित नेत्र, विशाल और उन्नत भाल, घुघुराले केश, अखाडे की साधना से गठित सुदर शरीर—इस प्रकार वे कन्नड देश के नव मन्मथ से थे। यो तो ढलती उम्र थी, पर देह की काति में जरा भी मलिनता नही आई थी। दो महर्षियो के बीच में रस-सेतु के समान पपकवि विराजमान थे। एक ओर कमबध से मुक्त जिनचद्र जी थे। उनके केश-लोम रहित सिर और मुख देखते ही बता देते थे कि यहाँ कम की जड कट गई है। दूसरी ओर जटाधारी समणपोन्न थे। उनके जटाबध देखते ही ऐसा भासित होता था कि कम भल ही हो, पर मेरा कुछ नही बिगाड सकेगा क्योंकि मैंने उसको अपने हाथो कस लिया है। ऐसे दोनो के बीच में सम्मार सारोदय की भाति पप महाकवि आमनारूढ थे।

नागमय्य के यहाँ आंगन में उस ग्राम के सभी श्रावक एकत्रित थे। वहाँ एक चबूतरा बना था। उस पर समवसरण का दृश्य सजाया गया था। सोने का समवसरण था। रत्नों का तोरण बना था। चाँदी के खंभे थे। स्फटिक मणि के तीन पीठ रखे हुए थे। अंतिम पीठ पर केसर फैलाए हुए चारों ओर मुँह किए चार सिंह थे। सिंहों के पीठ से लगे खिले हुए रक्त कमल थे। इन कमलों पर जिन बिंब रखा हुआ था। वह पारदर्शक चंद्रशिला की मूर्ति थी। उस मूर्ति के पीछे भी का दिया प्रज्वलित था। उस मूर्ति से छनकर आनेवाली दीप-किरणों ने सुवर्ण रश्मि का भ्रम फैला दिया था। श्रावकों को ऐसा लगा मानों वे सचमुच समवसरण ही देख रहे हों। जब कभी नागमय्य का भक्ति भाव उत्कर्ष दशा तक पहुंच जाता ऐसे दृश्यों को सजाकर चरितार्थ हो जाता। नागमय्य ने इन दिनों में राजकाज का सर्वथा त्याग किया था। अपने सुयोग्य पुत्रों पर वह भार डाल कर आप आध्यात्मिक साधना में लगे हुए थे। परिवार के लोग नागमय्य से स्पर्श के समापन में भय मान रहे थे। अतएव कोई उनसे बातें नहीं करता था। केवल अतिमब्बे और गुंडमब्बे में इतना साहस था कि दादाजी को गले लगाकर बातें करती थीं। यह देख घर के लोगों ने इन्हीं दोनों के जिम्मे नागमय्य की सुख-सुविधाओं की बात छोड़ रखी थी। नागमय्य की आध्यात्मिकता का प्रभाव इन दोनों पर भी पड़ा था। जब चाहे तब वे बालिकाएँ आप ही समवसरण की झांकी सजा देती थीं। और स्वयं इन्द्राणी बन जातीं और जिनमूर्ति को गोद में लेकर खिलाती थीं। आज तो इनके उत्साह का पारावार उमड़ पड़ा था।

समवसरण की एक ओर जिनचंद्र और पोन्न के बीच में पंपकवि सुखासीन थे तो दूसरी ओर नागमय्य एवं दो-एक भव्य व्यक्ति बैठे हुए थे। अतिमब्बे और गुंडमब्बे के अभिनय का प्रबंध भी हुआ था।

अत्तिमब्बे इन्द्र बनी हुई थी। गुडुमब्बे बनी थी इन्द्राणी। आदि देव के गर्भावतरण-कल्याण का जब अभिनय हुआ तो देखनेवालो को इतना आनद हुआ मानो बाझ ने सतान को जन्म दिया हो। निर्मल अत करणवाले बच्चों का खेल ही मनमोहक होता है। ये दोनो मानो नई चमेली थीं। दोनो की देह अत्यत सुदर और एक ही साचे में ढली सी थी। मुक्तिद्वार-सी अहिसा-काति से आकर्षक मुखाकृति थी। मूर्तिवत् दयादाक्षिण्य से दो नेत्र थे। सृष्टि के रहस्य को बाहर ला रखनेवाली पैनी ठुड्डी थी। उनकी उभरी हुई ठुडडी से पता चलता कि ये दोनो देखने में जितनी कोमल हैं उतनी ही व्रत - नियमो के पालन में दढ भी हैं। भरे हुए गाल थे। लता को भी लजानेवाली देह देखनेवालो का चाव क्षण क्षण बढाती रहती। कारण यह कि ये सुदरियाँ अभिनय करते समय जिस किसी मुद्रा में खडी होती वही एक नूतन आकर्षक भगिमा बन जाती थी।

गर्भावतरण का अभिनय पहले हुआ। जब तीर्थकर पुरि में रत्नवृष्टि होने के दृश्य का अभिनय हो रहा था तब दर्शको के सम्मुख असली रत्नो की झडी लगा दी। गई थी क्योकि नागमय्य ने इस का प्रबध कर दिया था। पर श्रावको का मन इन सुदर बालिकाओ के कलापूर्ण अभिनय में इतना मग्न था कि ये रत्न ज्यो के त्यो पडे रहे। अत्तिमब्बे और गुडुमब्बे दोनो ने अजलियो में भर भर कर श्रावको की ओर रत्नो को उछाला। नखशिख तक नवरत्नो से अलकृत कुसुम कोमलता में भी व्रतनियमादि मे दृढता के द्योतक उभरी ठुडियो वाली ये कन्याएँ साक्षात् कुसुमित कल्प बेली सी लग रही थी। यद्यपि ये दोनो हथेलियो में रत्नो को भर भर कर श्रावको की ओर फेंका करती थीं पर वहाँ कोई इन जड रत्नो की ओर ध्यान नही दे रहा था। जिस प्रकार उस समवसरण में तृप्ति का साम्राज्य था उसी प्रकार की तृप्ति इस समवसरण में भी थी। तृप्ति और आनद का ही साम्राज्य था।

जन्माभिषेक कल्याण का अभिनय प्रारंभ हुआ। सब भावकों के नेत्रों से आनंद बाष्प बह निकला। देवेन्द्र बनी अतिमब्बे ने इन्द्राणी बनी हुई गुण्डमब्बे को अंदर भेजा और आप उसकी प्रतीक्षा करती हुई सी उत्कंठ मुद्रा में खड़ी रही। इन्द्राणी का कार्य बड़ा मुश्किल था। क्योंकि जिन-शिशु को ले आना था। वहाँ पहले उस की माँ को मोहनिद्रा में सुलाकर दूसरे मायावी शिशु को वहाँ रखना था। तब जिन शिशु को गोद लिए आना था। उस दृश्य का अभिनय इस सफलता के साथ उसने किया कि उसमें अभिनय का भ्रम ही नहीं रहा। सब के सब पुलकित हुए। बाहर जिन-शिशु के दर्शनार्थ उत्कंठित होकर खड़े हुए इन्द्र ने अर्थात् अतिमब्बे ने उस शिशु को देखते ही इस ममता के साथ उसे गोद में उठाकर गले लगाया कि सचमुच वहाँ उपस्थित माताएँ भी मात मानें। तत्पश्चात् उस जिन शिशु को ऐरावत पर बिठाकर मेरुपर्वत से जाने का अभिनय हुआ। वहाँ ले जाने पर पांडु शिला पर बिठाकर और क्षीर समुद्र के पवित्र पय से क्षीराभिषेक हुआ यों तो जिन मूर्ति पर सचमुच क्षीराभिषेक कर दिया। इस मोहक दृश्य में भावक ऐसे तल्लीन थे कि उसे अभिनय और यथार्थ में अंतर का अनुभव ही नहीं हो रहा था। इस प्रकार इन बालिकाओं ने पंचकल्याण महोत्सव का अभिनय कर दिखाया कि भावकों का चित्त रसप्लावित हुआ और देह आनंद पुलकित। उस दृश्य को देखते हुए नेत्र टकटकी बांधे रह गए।

पंप महाकवि यह दृश्य देखकर पुलकित हुए। उनकी दृष्टि में अतिमब्बे और गुण्डमब्बे दोनों काव्य-कलिका सी लगीं। जिनभक्ति का अतिरेक व्याप्त था। पोन्नकवि रस प्रवाह में बह गए। नागचन्द्र के नेत्रों से आनंदबाष्प बह निकला। अभिनय समाप्त हुआ कि वहीं नागमय्य ने इन दोनों बालिकाओं को वेशभूषा उतारने का भी समय नहीं दिया यों ही गोद में बिठाकर वात्सल्य भाव से

गद्गद् हो गए। स्त्रियो की पंक्ति में सत्र के सामने बैठी हुई अब्बकव्वे मानो पयोबुधि में तैर रही थी। चालुक्य महामात्य दल्लप नागमय्य की बगल में ही बैठे थे। अतएव ज्योंही नागमय्य की गोद में इन बालिकाओ को देखा त्योंही उनको अपनी गोद मे बिठा लिया और उनको इस भांति कसकर गले लगाया मानो यह बताना चाहते हो कि वे कभी अपने हाथ लगी इन निधियो को पराए हाथ नही सौंप सकते।

पप कवि के काव्यवाचन सुनने का चाव श्रावको में क्षण-क्षण बढ़ रहा था। कवि के सम्मुख ग्रन्थ सजा हुआ था। अरिकेसरी ने श्रीगंध एवं सोने के पटलो पर काव्य लिखवाया था। पंप कवि को सुवर्ण-संपुट भेंट में दिया था।

प्रथम तीर्थेश के दिव्य जीवन चरित को एक ओर पंप महाकवि ने महाकाव्य में निबद्ध किया था तो दूसरी ओर अरिकेसरी ने उस महाकाव्य का सुवर्ण संपुट निकाला था। पंप कवि के सुवर्ण संपुट में चांदी के रत्नजटित चौखट थे। पंप कवि ने सर्वप्रथम काव्य से मंगलाचरण के पद्य सुनाए। पंचपरमेष्ठियो का स्मरण भक्ति भाव से किया। पंप की वाणी दुंदुभी-ध्वनि के समान लग रही थी पंप कवि के श्यामल मुख की सित दंत पंक्ति शुक्ति में स्थित मोती का स्मरण दिला रही थी।

आदिदेव का दिव्यदर्शन, स्वयं कवि के श्रीमुख से जो सदर्भानुसार रागरागिनियो में अभिव्यक्त हो रहा था तो, सुननेवाले श्रावको के भाग्य का द्वार ही मानो खुला हुआ था।

यद्यपि जयवर्मा ज्येष्ठ पुत्र थे पर उनके पिता अपने कनिष्ठ पुत्र को राज्य देकर चल बसे। इससे जयवर्मा को बड़ा आघात पहुंचा। नागरिक जीवन से जी ऊब उठा, कानन की ओर आकृष्ट हुए। विरक्त बने। अपने हाथ से अपने सिर के बालों को कसकर उखाड़ लिया और

निरपेक्षता की चमत्कार जपते जपते जयवर्मा उन केशों को अपने हाथ से बाँबी में डालने लगे तो सहसा साँप ने काट खाया। उसी समय आकाश में एक खेचर विमान दिखाई दिया। एक ओर विष की लहर चढ़ रही थी दूसरी ओर खेचर दम्पति की रसीली प्रेम भरी बातें सुनाई दे रही थी उनकी मनमोहक आकृति मन को बरबस अपनी ओर खींचे जा रही थी। परिणाम यह हुआ कि जयवर्मा के मन में वैसे ही खेचर बनने एवं ऐसे ही विषय भोग करने की लालसा प्रबल हो उठी। उस खेचर विमान के साथ इन के अंतरंग की कल्पनाएँ भी उड़ने लगीं। इसी धुन में जयवर्मा के प्राण पखेरू उड़ गए—इस कथा का सुंदर निरूपण पंप महाकवि ने किया। वहाँ उपस्थित सहृदयों पर मानो जादू फिर गया। कुकर्म के उत्थान पतन रूपी उत्पात का साक्षात्कार केवल चित्रपटी को हुआ अतएव आप बड़े खिन्न बन। अतिमब्बे और गुण्डमब्बे की समझ में यद्यपि कोई बात नहीं जमी फिर भी पंप कवि की गंभीर ध्वनि में कुछ सी गई थी। अतएव वे एकाग्र भाव से सुन रही थीं।

कथा आगे बढ़ी। जयवर्मा अगले जन्म में महाबल खेचर बने। उनके अंतःकरण में जो जो लालसाएँ अंतिम क्षण में जाग्रत हुई थी सभी व्रत के प्रभाव से सब पूर्ण हुईं। उन्होंने अपने को धन्य समझा। उनके स्वभाव के अनुरूप सचिव भी मिले जिससे महाबल की भोगलालसा दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ने लगी। पर स्वयंबुद्ध नामक एक अमात्य भी था जो कभी कभी भोगों की नश्वरता का स्मरण दिलाया करता था। परिणाम यह हुआ कि महाबल खेचर अपने अंतिम दिनों में परम विरक्त बने। उन्होंने भोगों का त्याग किया। दिगंबर बने इस प्रकार अंतिम साँस छोड़ी—पंप महाकवि ने महाबल के धार्मिक जीवनोत्कर्ष का बड़ा आकर्षक वर्णन सुनाया। श्रावकों के मन पटल पर उसका चित्र अंक गया। यहाँ तक कि अतिमब्बे और गुण्डमब्बे

भी पप महाकवि के काव्य की कमनीयता का अनुभव करने लगी।

महाबल खेचर का जीवन समाप्त हुआ। ईशानकल्प में एक सहस्र दल कमल आप विकसित हुआ। उस मे से पोडश वर्षीय एक देव प्रकट हुआ। स्वय आश्चर्य चकित हो वह चारो ओर देखने लगा। तब वहाँ उपस्थित वद्धो ने कहा—तुम पूर्वजन्म में महाबल थे। अब तुम्हारा जन्म देवयोनि मे हुआ है। तुम्हारा नाम ललिताग रहेगा।

सहस्रो देवागनाओ के साथ नित्य रास लीला में ललिताग का जीवन चाव से ढलने लगा। नित्य नया रग रचा जाता। स्वयप्रभा नामक देवागना पर ललिताग विशेष आसक्त रहा। चिरकाल तक उसके प्रणय सिन्धु में पैठा रहा। देवलोक में भी मृत्यु आ धमकी। ललिताग को मृत्यु की सूचना मिली। उसके सहजाभरण और सहज कुसुम मालाएँ मलिन हो गई। शरीर की काति फीकी पड गई। मौत की आहट पाकर ललिताग काप उठा। कसकर कल्पवृक्ष पकड लिया और आयु की माग की। कामधेनु के चरणो पर लिपटकर मृत्यु से बचाने की प्रार्थना की। चूडामणि को गले बाधकर गिडगिडाया। अत में अपनी प्रेयसी स्वयप्रभा की शरण में गया। उसे सब की सहानुभूति यथेष्ट प्राप्त हुई पर कोई उसे एक दिन के लिए भी नही बचा सका। वहाँ के वद्धो ने कहा—यद्यपि यह देव लोक है फिर भी यह नाशवान है। मरने के लिए ही हमारा जन्म होता है। अतएव शोक का त्याग-करे और बचे हुए दिनो को जिनेंद्र के भजन में बिताओ। ललिताग में विवेक जाग्रत हुआ। बचे हुए छ महीनो को जिनबिंब के दर्शन और पूजा में लगाया। देवागनाओ ने पूजाद्रव्य जुटा कर हाथ बँटाया। कल्पवृक्ष ने फल दिया। कामधेनु से जिनाभिषेक के लिए अमृत धारा प्राप्त हुई। जिनबिंब की चरण सेवा करते करते पचनमस्कार जपते जपते ललिताग ने प्राण-त्याग किया। महाकवि पप ने इस भाति ललिताग के स्वर्गच्युत होने के प्रसग का वर्णन

सुनाया कि सब अनुभव करने लगे मानो वे स्वयं स्वर्ग से वंचित हुए हों।

तदनन्तर पद्म कवि ने स्वयंप्रभा के विरह का वर्णन किया। इससे श्रोताओं का कोमल अन्तःकरण पिघल कर बह उठा। सब को आँसू बहाते देखकर अतिमग्न और गुणमग्न भी आँसू बहाने लगीं।

ललितांग का अगला जन्म मानवयोनि में हुआ। मर्त्य लोक में उसका नाम वज्रजंघ पड़ा। स्वयंप्रभा उसके विरह ताप से जल चली। वह भी इस लोक में आई। उसका नाम श्रीमती था। यहाँ श्रीमती और वज्रजंघ का विवाह हुआ। उन्होंने मनोवांछित रीति से अनन्तकाल तक अनन्तसुख भोगा। एक दिन की बात है। सेवकों ने शयन के भवनागार में सुगन्ध धूम लगाकर गवाक्ष बंद किया। ऐसा नित्य किया करते थे। पर उस दिन धुआं अधिक उठने लगा। इधर दैव प्रेरणा से उन्होंने खिड़कियों को इस भांति बंद किया कि सब धुआं रुक कर इन के प्रथम सुख में बाधा नहीं डाल सके। परस्पर गलबाहीं किए रात भर विहार करते रहे। पर उसी धुएं में न जाने कब इन दोनों के प्राण पखेरू उड़ गए थे। सबेरे सेवकों को कलेवर मात्र मिले। यही तो प्रणय जीवन का आदर्श है! पद्म कवि ने इस अध्याय को समाप्त किया। श्रोताओं की भावुकता रस-धारा बन बह चली।

अगले जन्म में इन दम्पतियों का जन्म भोग भूमि में हुआ। वहाँ चारण मुनियों को भक्ति से भिक्षा-दान करने के पुण्य प्रभाव से अगले जन्म में भोगभूमिजा स्वयंप्रभा स्त्री जन्म से निवृत्त होकर स्वयंप्रभ देव बन गई। तदनन्तर जन्म में श्रीधरदेव सुविधि नामक महाराजा बने। स्वयंप्रभ सुविधि का पुत्र केशव बना। इस प्रकार पद्म कवि ने आदिदेव बनने तक की जन्मावली का निरूपण संक्षेप में सुना दिया।

आदिदेव बड़े रस रसिक थे। उनकी रसिकता में उनकी

प्रथमी यशस्वती एव सुनदा के योग से चार चाद लगे। दिन दूनी रात चौगुनी वेग से उसकी रसिकता रग पकडने लगी। तीन लोक के गुरु बननेवाले आदितीर्थकर ससार में ऐसे मग्न हुए मानो ससार को ही जीवन का सार-सर्वस्व मान रहे हो। आप को जगाने के लिए देवेंद्र को नीलाजना के नृत्य की व्यवस्था करनी पडी। लता सी कोमल, मदन चाप सी, आमधुराकार, उस सुदरी को झूले पर झूलते हुए देखकर आदिदेव भी आसक्त बने। पर उस सुर-वारवनिता का अत उस रगशाला मे ही हुआ। मानो कला मे वह कमनीय काति लीन हो गई। रग मे भग न हो इस आशय से यद्यपि देवेंद्र ने उसकी प्रतिकृति सृष्टि करके अभिनय को चालू रखा। पर आदिदेव ने इसे ताड लिया। उनको अपने जीवन का लक्ष्य स्पष्ट दिखाई देने लगा। जातरूपधर बन षण्मास तक तप किया। भिक्षाटन करते और छ महीने विताए। पिछले भवो मे स्वयप्रभा, श्रीमती, भोगभूमिजा आदि बनकर आदिदेव के जीवन को रसमय बनानेवाली आत्मा, उस जन्म में श्रेयास बन, प्रतीक्षा कर रही थी। जैसे ही उसने आदिदेव को अपने द्वार पर देखा, ईख के रस से उनके अजली-पुट को भर दिया। उस का पान करके आदिदेव सतृप्त हुए। आगे चलकर कुछ समय तक आदिदेव तप करते रहे। अत में उनके घातिकर्मो का नाश हुआ और वे जिनेन्द्र बने। तीनो लोको में जीव के नाना जन्मो के कारणी भूत कर्म की जटिलता का स्वरूप उन्होने जाना और उससे निवृत्त होने का उपदेश दिया, कर्म से छुटकारा पाने का उपाय भी सुझाया।-

पप महाकविकी दिव्य वाणी ने इस प्रकार आदिदेव के दिव्य जीवन का, जीता जागता वर्णन सुना दिया।

तब तक रात बीत गई थी और उषकाल की रमणीय छटा छाई हुई थी श्रोतागण महाकवि का यशोगान करते करते अपने अपने घर गए।

अत्तिमब्बे दौड़कर पंप के पास आई और बोली— मामाजी बड़ी सुंदर कथा है !

इतना कह अपने कंठ से मुक्ता हार निकालकर पंप के गले में पहना देना चाहती थी कि उधर गुंडमब्बे भी भागते भागते आई और बोली— तुमने तो मामाजी हम दोनों को देवलोक के दर्शन करा दिए – यों कहते कहते वह अपनी रत्नांगूठी को उतारकर पंप कवि की अंगुली में पहनाने का उपक्रम करने लगी। देखो बेटा! तुम्हारे यह गहने मुझे नहीं चाहिए। क्या तुम मुझे मनचाहा दे सकोगी?— ऐसा कह कवि ने उनका कुतूहल-पूर्ण और उदार मुख देखकर उनको अपनी ओर खींच लिया और उनके मुखमंडलों का चुम्मा लेते हुए कहा— यह चाहिए, समझी! दोनों से अपनी मनचाहा पुरस्कार पाकर कवि अपने को धन्य समझने लगे। अवर्णनीय वात्सल्य रस में बह गए।

२

अत्तिमब्बे और गुंडमब्बे का विद्याभ्यास जिनचंद्र जी के यहाँ होने लगा। प्रतिभावान शिल्पि के हाथ में पड़ने पर कड़ा पत्थर भी सुंदर विग्रह बन जाता है तब अमृतशिला का कहना ही क्या? शिल्पि का श्रम कम होगा और मूर्ति भी सुंदर बनेगी। इन दोनों कन्याओं की शिक्षा सुदृढ़ धार्मिक नींव पर प्रारंभ हुई। उस नींव पर महाकाव्य के सौंदर्य और रीतियों का महल खड़ा कर दिया गया। सुमधुर शारीर भी थे सुख इन बालिकाओं को संगीत एवं नर्तन में भी शिक्षा दी गई। खिले हुए कमल से निकलने वाले मकरंद पान मस्त भ्रमर के समान स्वर उनके मुखारविंद से निकला करता था।

नागमय्य का घर बना था कवियों और कलाकारों का अड्डा था। वह उनके लिए आश्रयदाता साक्षात् सुरतरु थे। प्रातःकाल से

सध्या तक वहाँ रसधारा प्रवाहित रहती थी। धार्मिक सिद्धातो का निरूपण भी होता रहता था। ऐसे वातावरण में रहनेवालो पर, विशेष कर बच्चो के मन पर उसका प्रभाव पडना अनिवाय ही था। श्रीगध के कारखाने मे जाने पर चाहे या न चाहे शरीर सुगधि से लिप्त होता ही है।

अत्तिमव्वे और गुडुमव्वे दोनो वीर पुत्रियाँ थी। मल्लप इन के पिता थे, और परमवीर नागमय्य दादा। आगे चलकर इन लडकियो को किसी न किसी वीर की बहू बनना ही था। अतएव क्षात्र वातावरण में रहनेवाली इन लडकियो ने क्षत्रियोचित विद्याएँ भी सीख ली। तलवार की धनी बन गई। घुडसवारी मे सहज ही निपुण बन गई। भाइयो के समान दोना पहली श्रेणी की तीरदाज भी बन गई। मछलियो की सताने क्या किसीसे तैरना सीखती है?

वसत मारुत के स्पर्श से पुलकित कल्पना सी दोनो लडकियो ने तारुण्य में प्रवेश किया। सहज सुदर इन तरुणियो पर सस्कृति कालिकत और क्षात्र तेज की रोली खूब फब रही थी। इनको देखने मे अभी अभी सुनार के यहाँ से आई सुवर्ण प्रतिमा का भान हो रहा था। यद्यपि दोनो लडकियाँ नव यौवन में पदार्पण कर चुकी थी, पर नागमय्य की दृष्टि में अभी तक वे दुधमुही-सी थीं।

जिनचद्र मुनि अत्यत वृद्ध बने। कमर झुक गई। हाथ पैर कापने लगे। आँखें कम सूझ रही थी। बिना छाटे जिनमुनि अन्न स्वीकार कर नही सकते थे। इधर नागमय्य की उम्र भी करीब करीब वही थी। पर अखाडे में गठित बदन थी। अभी शक्ति कुठित नही हुई थी। पर आध्यात्मिक चितन में सदा व्यस्त अंतकरण ससार से ऊब उठा था।

एक बार जिनचद्रजी ने कहा-- नागमय्य! मुझे अब सल्लेखन दीक्षा लेनी होगी।

नागमम्म के सिर पर मानो बिजली टूट पड़ी। कुछ नहीं बोले।

क्या चुप हो ?— जिनचन्द्रजी ने और कहा।

जी जब आप सल्लेखना ग्रहण करेंगे तब मेरा क्या होगा ?

तुम्हारा क्या होगा ! यहां कौन किसका है सब अपना अपना वेश रूप है। अपना राग और अपनी डफली यही दुनिया की रीत है। अब मेरा जिन्दा रहना ठीक नहीं क्योंकि अब मेरा जीना क्या है अधिक से अधिक धर्म भ्रष्ट होना और औरों पर बोझ बन कर रहना है। जिस दिन शरीर मिथ्यात्व के लिए असमर्थ हो जाय उसी दिन सल्लेखना लेने की विधि है।

जो हो। जब तक मैं जिन्दा हूं आप को सल्लेखना ग्रहण करने की आवश्यकता नहीं है। आप के बिना मैं जीवित रहना नहीं चाहता।

यों कहते कहते नागमम्म का गला बैठ गया। बरसों वर्ष से साथ साथ जीवन बिताया था।

नागमम्म ! देखो यह मोह-कर्म तुम्हें सता रहा है। इतने दिनों तक धार्मिक क्षेत्र में साधना करने पर भी तुम्हारा अज्ञान दूर नहीं हुआ। बताओ मैं कौन हूं और तुम कौन हो ? जब शरीर तक हमारा अपना नहीं है तो और किस का भरोसा है ? शरीर तक कर्म का परिणाम है। आत्मविकास के मार्ग में यह भी बंधन है। इस कर्म का नाश करना ही होगा। जब तक व्याकरण अलंकार छन्द आदि रस के पोषक बने रहते हैं तब तक काव्य में उनका स्थान है। जब उनसे रसास्वादन में विघ्न हो या रसाभास का वे कारण बनें तो उनको काव्य से हटाना ही होगा। इसी भांति इस देह का स्थान-मान भी है। अब तक यह शरीर तपस्या के लिए उपयुक्त था। अब यह थका हुआ है। अब मानो यह कह रहा है कि अब मुझसे रहा नहीं जाता।

अधिक मत सताओ। बेचारे पर मैं अधिक बोझ डालकर दबाना नही चाहता। अतएव सल्लेखन ग्रहण करने की स्वीकृति दे दो।

महाराज, — नागमय्य बोले— आप बडे अनासक्त हैं। अनायास ऐसी बातें करते जा रहे हैं, पर मुझे कुछ नही सूझ रहा है।

नागमय्य! महर्षियो की महानवमी मौत ही है। क्या तुमने श्रवणबेलगोल में नही देखा? पद पद पर सल्लेखन की महिमा-द्योतक झलकें लगी हुई हैं। शिला पर अंकित सल्लेखन-व्रती महर्षियो की नामावली की भी कोई जन है? वे आज भी नक्षत्र की भांति जाज्वल्यमान हैं। जीवन भर समाधि-मरण की कामना करते हुए अंतकाल मे उसे पाकर धन्य बने महर्षियो के जीवन-वृत्त को अपने सिर आँखो पर रख कर विश्व को सुनानेवाली ये चट्टानें क्या भुलाई जा सकेंगी। श्रवण-बलगोल मानो इनका आगार है। समाधि-मरण का प्रधान केंद्र है।

जिनचन्द्रजी की वाणी में आवेग का कंपन स्पष्ट था।

गुरुजी, तब आप मुझे भी वह व्रत दे दीजिए। मैं आप का अनुचर हूं। जीवन भर आप के मुह से कभी न नही निकला है। पूजा समय साथ देनेवालो को क्या कोई प्रसाद बाँटते समय खाली हाथ बाहर कर देगा? मुझे भी सल्लेखन की दीक्षा दे दी जाय।

नागमय्य आंसुओ से मुनि के चरण धो रहे थे।

अरे नागमय्य, उठो। मैं तपस्वी हू और तुम भाव तापसी हो। तुमने साधु-संता की सेवा करते करते कर्म को मंगल स्रोत बना लिया है। कवियो के भाग्य का कल्पवृक्ष बन कर तुमने लोभ को कुचल डाला ह। दीनो के लिए कामधेनु बनकर तुमने विश्वानुकंपा की साधना की है। उस दिन जब तुम्हारी पोतियो ने गर्भावतरण का अभिनय किया था तुमने सचमुच की रत्न-वृष्टि करके पुराणो में लिखी बात को प्रत्यक्ष कर दिखाई थी। तुम बडे महानुभाव हो। यदि मैं चल बसू तो मुझ जैसे दस-एक विरक्त तुम्हारे आश्रय मे आ सकते हैं।

अब धैर्य पूर्वक मुझे सल्लेखना की अनुमति मिल जाय !

मुनिश्री ने धीरज बंधाया।

कुमारी ! आप का कहना यथार्थ है। पर आप सिसकन करते करते मुझसे जायें और मैं देखता रहूँ। यह नहीं हो सकता।

नागमल्ल की वाणी कांप रही थी।

नागमल्ल ! अनन्त काल से मेरे अनन्त जन्म हुए हैं। न जाने कितनी बार जन्मा और कितनी बार मरा हूँ। मरने के लिए जन्मा। जन्म लेने के लिए मरा। कितने भवों में कैसे कैसे निकृष्ट जीवन बिताए हैं? स्त्रियों के पीछे मरनेवालों की क्या कमी है? जमीन जायदाद के लिए हाय-हाय करनेवालों की क्या गिनती है? कनक के पीछे काम के कारण बननेवाले कापुरुष कितने नहीं होंगे? किसी ने इनका हिसाब लगाया है? पर धर्म के नाम पर मरनेवाले कहाँ मिलते हैं और मिले भी तो कितने मिलते हैं? जब मरना अनिवार्य है तो धर्म के नाम पर क्यों न मरें। आत्मोद्धार के निमित्त मृत्यु को क्यों न गले लगायें। मनोदौर्बल्य को दूर करो। उठो! हृदय से इस सल्लेखना का अनुमोदन करो। अनुमोदन पुण्य तुम्हारा हो!

जिनदासजी ने सांत्वना दी।

सुनिए! मैं आप के स्वार्थ का रोना नहीं रो रहा हूँ। मैं तो केवल अपने लिए सल्लेखना व्रत की दीक्षा मांग रहा हूँ। यदि उस महाव्रत से आप की भलाई होगी तो क्या मेरी भलाई नहीं हो सकती? आप के साथ मैं भी अलौकिक त्याग कर बैठ जाऊँगा। अर्जुन के साथ रहकर कायर उत्तरकुमार भी साहसी बन गया था। उसी भांति आप के साथ रह कर मैं भी वही बनना चाहता हूँ। आप अनुग्रह कीजिए। मेरी कामना पूर्ण हो!

पति के साथ चितारोहण करनेवाली सती के समान नागमल्ल अनुमति के लिए गिड़गिड़ा रहे थे।

जिनचन्द्रजी आवाक् बने। क्या किया जाय ? नागमय्य को सल्लेखन दीक्षा दें तो उस के परिवार के लोगो पर क्या बीतेगा ? वे क्या कहेगें ? ऐसे सोचते सोचते फिर भी नागमय्य की थाह लेने के सकल्प से बोले।

नागमय्य ! मैं तुम्हे सल्लेखन नही दे सकता। तुम गृहस्थ हो। तुम्हें अनवरत साधना करते करते क्रमश महामुनि का पद प्राप्त करना होगा। तभी महाव्रतो के अनुष्ठान का अधिकार प्राप्त होगा। क्षणिक आवेश में आकर सहसा व्रत ले बैठना ठीक नही। सल्लेखन। का अर्थ केवल अन्न जल का त्याग नही है। रागद्वेश का सर्वथा त्याग करना होगा। मृत्यु को प्रेयसी के समान गले लगाना होगा। विना सावना के ऐसे महाव्रतो की दीक्षा नही लनी चाहिए।

नागमय्य ने दृढता से उत्तर दिया —

गुरुदेव ! क्या मै कोई बच्चा हूँ ? भसुर कुल में मेरा जन्म हुआ है। क्षात्र में जीवन बिताया है। मन जैन धम की श्रेष्ठता पर मुग्व हुआ है। मेरे चारो ओर सदा धार्मिक वातावरण रहा है। उसीसे मेरा जीवन ओत-प्रोत है। तिसपर आप गुरु होते हुए अपने शिष्य पर सदेह करें तो मैं क्या कहूँ ? न जाने मेरी क्या दुर्गति होगी !

नागमय्य ! तुम्हारा आग्रह माना भी जाय तो एक वात विचारणीय है। सल्लेखन देने के सबध मे अनेक बातो पर विचार करना पडता है। जब चाहे तब दें या लें – ऐसा यह व्रत नही है। यदि देश में अकाल पडा हो या शरीर में असाध्य रोग घर कर वैठा हो या शरीर अत्यत दुर्वल हो गया हो तो साधक सल्लेखन ले सकता है।

ठीक है। यह तो सामान्य नियम है पर जिनचन्द्रजी के शिष्यो के लिए यह नियम लागू नही हो सकता। इसका अपवाद भी अवश्य होगा।

तुम्हारे पुत्र मानें तो मेरी कोई आपत्ति नही।

महाराज ! क्या यह ठीक है ? कटघरे में पडे हुए शेर को

छुटकारा पाने के लिए क्या [illegible] [illegible] [illegible] जन्म-मरण [illegible] होगी ? मौका पाने [illegible] [illegible] [illegible] मन में भी दर्द बसता है। आपने मुझे मित्र-भी [illegible] [illegible] [illegible] मन में आना कामी नहीं [illegible] मन ही मन [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] साथ [illegible] और भी सोचिए क्या आप [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] जो कर्मारण्य में भटकने छोड़कर आप [illegible] जाय — [illegible] नीति है ?

सिवाय [illegible] [illegible] [illegible] मौन रहा। चिन्ता-मग्न से बैठे रहे। [illegible] [illegible] नामसम्य की आँखों में [illegible] डाल कर देखा। अपने अवधिज्ञान से [illegible] [illegible] किया कि नामसम्य की आयु भी समाप्त होने आई है। तब वह [illegible] करके मस्कुराते बोले।

[illegible] [illegible] चिन्ता न करो। मैं तुम्हें भी सल्लेखना दूँगा पर कुछ सुधार के साथ। प्रतिदिन क्रम से आहार का प्रमाण कम करते जाना चाहिए। बत्तीस कौर से इसे आरम्भ कर और एक एक कौर कम करते जायें। इसी भाँति पानी का प्रमाण भी कम होते जाय। साथ ही आत्मचिन्तन में मन लगाते जाना चाहिए। देह की क्षण भंगुरता पर दृढ़ विश्वास रखना चाहिए। परमात्मा के अतिरिक्त अन्य सब वस्तुओं का स्नेह छोड़ देना होगा। अनुभव में यह लाना होगा कि बोलना सुनना रागद्वेष रोग आदि परम ज्योति स्वरूप आत्मा पर लगे कर्म पुद्गल हैं। इस देह की ममता त्याग कर परंज्योति के चिन्तन में मन लगाए रखना होगा। ऐसा करते करते स्वयं परंज्योति रूप बन जाओगे।

[illegible] नामसम्य ने यह सुनते ही नामसम्य ने भक्ति भाव से चरणों में दण्डवत किया और चरण धूलि लेकर उसे अपने माथे पर लगा लिया।

  

जिनचन्द्रजी के सल्लेखन की वाता हवा के साथ साथ चारो ओर फैल गई। लोगो ने नागमय्य के लघु - सल्लेखन की बात भी सुनी। मल्लप और पुन्नमय्य न उन व्रत की कठोरता के कारण उसका न रहना ही उचित समझा, यहा तक कि उसे स्वीकार करने के संबंध मे अपना विरोध भी व्यक्त किया। मल्लप के परिवार का परिवार ही आ कर जिनचन्द्रजी के सामने गिडगिडाया। अन्त मे कम मे कम, अपन दादा को इस धार्मिक घोर अत्याचार मे मुक्त कर देने की प्रार्थना की। नागमय्य के आठ पोते थे। अपन दादा का धर्म के नाम पर अन्न-जल लिए बिना मर जाना उनको भी अच्छा नही लगा। उन्होंने नागमय्य पर भर पूर दबाव डाला। रोए ! कलपे। सन्यासियो की बात अलग है। दादा तो गृहस्थ है। गृहस्थो को इस प्रकार कठोर दीक्षा देना सरासर अन्याय है — इस प्रकार जिनचन्द्रजी के सामने विरोध व्यक्त किया। अत्तिमब्बे ने आग्रह पूर्वक कहा — दादाजी चाहे तो काषाय धारण करें उन्हे सल्लेखन की आवश्यकता नही है। हम कभी इसे नही मानेंगी। गुडुमव्वे ने स्वय दादा के साथ अन्नजल त्यागकर बैठजाने की धमकी दी।

नागमय्य के परिवार रूपी नंदनवन पर भयकर आधी बह निकली। ऐसा लगा कि नाग उपवन उजड जायगा। मल्लप को जैन धर्म की यह निष्ठुरता खटकने लगी। पुन्नमय्य ने कहा दाना-पानी छोड आत्महत्या कर ले और उसे भी सल्लेखन महाव्रत कहकर सम्मान दे यह अनर्थ है, और अधर्म भी ! गुडुमव्वे ऐसे चुपचाप बैठे रही मानो सिर पर बिजली टूट पडी हो। एळमय्य ऐसे चटपटा रहे थे मानो उसे झपकी लगी हो। हारे हुए जुवारी की भाति चिक्कपोन्नमय्य सिर झुकाये बैठे थे। आहवमल्ल सोच रहे थे कि किस प्रकार इस धार्मिक अत्याचार को रोका जा सकेगा। मल्ल ने समझा कि अब दादाजी नही रहेंगे। इस कारण मे एक ओर खिन्न बैठे थे। औरो को रोते

कलपते देखकर नागकन्या भी रो पड़ी। अत्तिमब्बे को इतना दुःख हो रहा था मानो अपनी माता का देहान्त अभी अभी हुआ हो।

सहसा जल्दी आने की सूचना पाकर तीन कवि पुलगेरे दौड़े आए। पंप महाकवि सरपट चले आए मानो हवा में उड़ते उड़ते आए हों। सारी परिस्थिति समझ में आ गई। जिनचन्द्र मुनि जी और नागमय्य के अंतरंग की बातें समझने में देर न लगी। इन दोनों कवियों को एकांत में बुलाकर नागमय्य की अंतिम दिन की सूचना जिनचन्द्रजी ने दी। संस्कार संपन्न दोनों कविवरों ने सल्लेखना का अनुमोदन किया। सल्लेखना के पूर्व जिन नियमों का पालन करना ही था उन की ओर जिनचन्द्रजी का ध्यान पंप कवि ने खींचा। तत्काल अनिवार्य माना गया पर जानबूझ कर पंपकवि ने एक सप्ताह भर उस को किसी बहाने रुकवा दिया। निश्चय हुआ कि बनवसे से नागमय्य के मातापिता अर्थात् महादेवम्म और कलकला सभी को बुलाया जाय। नागमय्य के परिवारवालों को विशेष कर गोतियों को समझाने में सांत्वना देने में पंप और पोन्न दोनों को जमीन आसमान एक करना पड़ा। मठ में रहस्य में जिनचन्द्रजी ने अवधि ज्ञान से जानकर जो कुछ आयुर्दाय के बारे में बताया था उसका भी उल्लेख करना पड़ा। पोन्नमय्य बनवसे गया और मल्लप पुलगेरे में सल्लेखना के लिए आवश्यक प्रबंध करने लगे।

जिनचन्द्रजी दैवज्ञ थे। उन्होंने सल्लेखना के लिए शुभ तिथि वार, लग्न आदि का निश्चय किया। भक्ति पूर्वक अंतिम आहारादि की विधि पूरी की गई। मध्याह्न के पूर्व जिनचन्द्रजी भिक्षा के लिए निकले। उनकी बगल में पिछी था। बाएं हाथ में कमण्डलु था। और दाहिना हाथ कंधे पर था। मार्ग भरके सभी जैन गृहस्थों के यहां उत्साह उमड़ आया था। सब ने घर-द्वार खूब सजाए रखा था। बन्दनवार लहरा रहे थे। रंगोली से घर द्वार की शोभा अवर्णनीय

बनी थी।स ब ने मुनि जी को भिक्षा देने मृष्टान्न बनाया था। पानी और पक्वान्न लिए द्वार पर प्रतीक्षा करते खडे रहे। मगलद्रव्य लिए सुहागिनें खडी थी। पता नही रहता कि किसके यहाँ मुनिजी भिक्षा स्वीकार करेंगे। भाग्यवश अपने घर आ जायँ तो ? क्योकि श्रावको का विश्वास है कि जैन मुनि को भिक्षा देने से गोम्मटेश्वर को महामस्तकाभिषेक कराने के बराबर पुण्य प्राप्त होता है। तब सोचिए कि श्रावको का उत्साह क्यो न उमडे ?

इधर जिनचन्द्रजी निर्विकार भाव से रास्ते पर चले। कौन जाने ये कहाँ खडे होगे। सब की दृष्टि अपने अपने घर उनका स्वागत कर रही थी। धीरे धीरे मुनि जी आगे बढते गए। एक गृहस्थ के द्वार पर आ खडे हुए। दपति ने आकर पाद-प्रक्षालन किया पर न जाने क्या हुआ, वे आगे बढे। भिक्षादान का भाग्य यो अचानक खिसकते देख कर वे खिन्न हुए। पर करें क्या !

ऐसे ही दो-एक जगह और हुआ। अत मे जिनचन्द्रजी की सवारी नागमय्य के यहाँ आई। मल्लप और उनकी धर्म पत्नी अब्बकब्बे ने आगे बढकर अर्घ्य-पाद्यो मे मुनिवर्य की पूजा की। प्रतीक्षा कर ही रहे थे। झटपट जो कुछ करना था किया। तिष्ठ तिष्ठ कहते हुए मुनिजी की परिक्रमा की। दंडवत किया। न्योछावर किया और हृदय से स्वागत किया।

घर के अदर ले जाकर पादपूजा की। विधि है कि मुनि खडे खडे अन्न स्वीकार करें। विधि का पालन हुआ। घर के सभी लोगो ने आ आकर मुनिवर्य के हाथ में एक एक कौर अन्न दिया और अपने जन्म को ही सफल माना। मुनिजी बाई हथेली पर दाहिनी हथेली रखकर, अगूठे मे छान छानकर, परीक्षा करके, कौर मुँह में रख लेते थे। नागमय्य पप, आहाव, मल्लप एव उनके परिवार के सब लोगो ने अन्न-दान दिया। जो जो गृहस्थ अपने घर पर मुनि

को मिला न पाए थे वे दौड़ते दौड़ते यहाँ आए और मुनिजी की हथेली पर धीर रख कर परम मना का अनुभव करने लगे। लोभर कन्याओं के समान मधुर अमिमन्त्र और गन्धमय थे। इस अन्न-पान में सम्मिलित हुई। किसी पर अपनी आसक्ति न दिखाते हुए केवल अनासक्त भाव से मुनिजी अन्न खीरान्न ग्रहण करते थे। यथा अध्यात्माओं के लिए गए आगमन में जो पियता हो सकती है, वही पर उस महर्षी के स्पर्श से अमृत का किया तथा अनन्तर माना सिद्धरस में ओतप्रोत सा बना। जैसे ही महर्षि ने अपनाए वैसे ही अपनी दाहिनी हथेली उठा ली। श्रावकों ने कलश से पानी दिया। उस से हाथ मुँह धो लिया। कुछ ही क्षण में अन्तर्मुखी हुए। उस मुद्रा में उसी प्रकार अचल दिखाई दे रहे थे जिस प्रकार जड़ मुकने में लगी मूर्ति रहती है।

  

बहिर्मुख होते ही जिनचन्द्रजी ने चन्द्रप्रभतीर्थंकर की पूजा की। भक्ति सहित जिनगंधोदक का सेवन किया। उसे सिर आँखों पर लगाया। तीर्थंकर को साष्टांग प्रणाम किया और परमात्मा के सम्मुख समर्पण संकल्प किया। जिनालय के सभा-मंदिर में आसन-पाटा स्थाप कर धर्मोपासना में तन्मय बैठ गए।

यह कैसा साहस है! इसे देखने के लिए आसपास के गाँवों से लोग आने लगे। जैसे जैसे यह समाचार दावाग्नि के समान फैलते गया वैसे ही देश भर दूर से श्रावकों और आर्यिकाओं का दल आने लगा। साधु सन्तों का मेला पुनपुर में लग गया। जिनचन्द्रजी के बारे में प्रतिदिन समाचार प्राप्त कर देने का प्रबन्ध सर्व दिशा के राजा महाराजाओं ने कर लिया। चारों ओर भक्ति की बाढ़ सी उमड़ पड़ी। बलात्पूर से भक्ति धर्माचार्य भी आए। [illegible] से नेमिचन्द्राचार्य

जी पधारे। तलकाडु से महाबलय्य और उस की पत्नी काळलादेवी भी आई। उनके जाने तक दो सप्ताह बीत गए थे। प्रथम सप्ताह में महाव्रती जिनचन्द्रजी को कभी कभी दिन-चर्या के लिए उठना पडता था। वे हँसते हँसते धार्मिक चर्चा मे भी भाग लिया करते थे। मुख पर मदस्मिति अकित रहती थी। भव्यात्माओ से पूण अनुकपा से मिलते रहते थे। नेमिचन्द्राचार्य एव अजितसेनाचाय जी को जैन-धम तथा जैन सस्कृति के प्रसार के लिए कटिबद्ध रहने की आज्ञा दी। महाबलय्य को अपने निकट बुलाकर अहिसा-वृक्ष की जड की रक्षा करते रहने का आदेश दिया। काळलादेवी के कानो में कहा देखो बेटी, तुममें धार्मिक महत्वाकाक्षा की कमी नही है। वह और बढती जाएगी तुम कृतयुग मे भरतेश द्वारा स्थापित 520 चाप प्रमाण बाहुबली की मूर्ति की कल्पना करके नित्य उसकी मानसिक पूजा किया करो।

ऐसे ही राष्ट्रकूट सावभौम मुम्मडी कृष्णराय को बुला कर समझा दिया कि सार्वभौमत्व की अपेक्षा आत्मज्ञान का साधन ऊँचा है अतएव आत्मसिद्धि में मन लगाते जायें। गग मारसिग को बुलाकर आदेश दिया कि निस्सग बनने का अभ्यास किया करें।

सल्लेखन के प्रारभिक दिनो में बारी बारी से आकर पोन्न, पप नागमय्य आदियो ने तीर्थेशो के दिव्य चरितो को सुनाया। इन पुण्य-चरितो का श्रवण करके जिनचन्द्रजी दैहिक कष्ट भूल कर आनद सागर में तन्मय हुए। सतान का मुँह देखकर जिस प्रकार दारुण प्रसव पीडा को माताएँ भूल जाती हैं इसी प्रकार परज्योति स्वरूप अपनी आत्मा के चितन में मगन मुनि जी क्षुत् पिपासादि परिपहो को भूले। तीथकर पुराण श्रवण के बाद कुदकुदाचार्य के समयसार को सिद्धात चक्रवर्ति नेमिचन्द्राचार्य से पढवाया। अजितसेन से और एक बार उसे पढवाकर चाव से सुना। इस प्रकार शुद्ध जिन धर्म में तन्मय बने। जिस प्रकार शिकार के लिए तैयार खडे हुए साही

के पास कोई भटक नहीं सकता उसी प्रकार महर्षि के पास माया मोह मान लोभ आदि नहीं भटक सके। धीरे धीरे सदा निर्विकल्प समाधि में रहते हुए ज्ञानसागर जी [illegible] की भांति बन गए।

सल्लेखना का तीसरा सप्ताह बीता। अब उठना बैठना कष्टकर प्रतीत होने पर सोए रहते थे। पर उनका चित्त पंचपरमेष्ठियों में लीन था। शरीर कृश बना पर दृष्टि तेज थी। कभी कभी ओठों पर मुस्कान खिल जाती थी। जिस मंदिर में मुनिजी बैठे थे वह औरों के लिए एक बड़ा पवित्र तीर्थ बना। हजारों की संख्या में लोग आ आकर भक्ति पूर्वक दूर ही से मुनि जी के दर्शन पा कर सदा उमड़ उमड़ कर आनेवाले भक्तवृन्द को गदगद किये हुए जा रहे थे। एक ही बाजू पर सोए हुए मुनि जी की देह ठठरी मात्र बनी रही।

इधर नागमम्म नित्य अन्न सेवन कम करने का अनुष्ठान किया करती थी। मल्लप्प और पोलमम्म अन्य सभी व्यवहारों का त्याग करके जिन-सेवा में ही रहने लगे। उन्हीं के साथ सोते-जागते पहले उनको खिलाकर आप खाते। षोडशवर्षीय अतिमब्बे और गुंडमब्बे दादाजी को [illegible] करके बाद को माताजी के साथ मित आहार किया करती थी। एक ओर सदा अन्न-जल का त्यागकर पड़े हुए जिनचन्द्रजी थे। दूसरी ओर प्रतिदिन नियत रीति से एक एक कौर कम सेवन करनेवाले नागमम्म थे। इस कठिन व्रत के अनुष्ठान को देखते रहने पर भी धीरे धीरे अतिमब्बे जीवन के चरम रहस्य को समझने का सफल प्रयत्न करती रही। उधर भोगोपभोग पर उसके मन में विरक्त भाव दृढ होता गया इधर गुंडमब्बे की दृष्टि में मोह बढ़ानेवाला नहीं रही।

जिनचन्द्रजी के सल्लेखना लिए तैंतीस दिन बीत गए। नागमम्म का [illegible] पूर्ण हुआ। अंतिम दिन पूर्ण निराहार बीता। पर उनके चित्त में जरा भी क्षोभ नहीं था। समयसार को पढ़वाकर सुना करते

थे और आत्मचिन्तन का अभ्यास किया करते थे। अब उनकी भी समाधि लग रही थी। अत्तिमब्बे और गुडुमब्बे वीणावादन सुनाती थी और जिन-स्तुति का पाठ करती थी। इन कन्यामणियो के कलकंठ ने ध्वनिरूप में परज्योति के प्रकट होने का अनुभव नागमय्य करते थे। एक बार नागमय्य उस नादमाधुर्य मे आत्मरूप से लीन हो गए। वीणावादन के अंत मे जब इन्होने दादाजी के मुँह की ओर देखा तो वहाँ केवल मुस्कुराहट थी। शरीर निश्चेष्ट था। दोनो के मुंह से सहसा 'दादा दादा' शब्द निकल पडा। मल्लप और पोन्नमय्य दौड आए। देखभाल की। तब निश्चय किया कि अब प्राणज्योति शांत हुई है। पप पोन्न आदि सबने आ घेरा। इस झमेले मे क्षणभर के लिए जिनचन्द्रजी को वे भूल बैठे। मध्याह्न का सूर्य सिर पर चमक रहा था। उधर जिनचन्द्रजी के प्राण भी उडे। पहले अपने शिष्य को मुक्ति मार्ग का पथिक बना कर आप पीछे से गए।

सब के आँसू बह निकले। नागमय्य के परिवार में खलबली मची। चालुक्यो का ध्वज उतर गया। राष्ट्रकूटो का ध्वज भी उतरा। गंगो का ध्वज झुक गया। मल्लप पर मानो बिजली ही टूटी थी। पोन्नमय्य रणधीर था पर अब अधीर बन अबला-सा रो पडा। नागमय्य की पतोहू यो रो रही थी मानो उसके पिता ही चल बसे हो। सब के सब पोते आकर दादा के कलेवर से लिपट कर चीखने चिल्लाने लगे। अत्तिमब्बे की दशा ऐसी थी कि मानो उस पर वज्रपात हुआ हो। गुडुमब्बे छाती पीट पीट कर रोने लगी। नागमय्य की मृत्यु से जैन समाज की रीढ टूट सी गई थी। वेंगिमंडल नायक विहीन बना। सब लोगो का दुःख एक पलडे पर हो तो अत्तिमब्बे और गुडुमब्बे का दुःख दूसरे पर था। क्योंकि इन दोनो का शैशव, बचपन और तारुण्य माता-पिता के पास नही दादाजी के पास बीता था। दादा की गोद इनका सिंहासन था। दादा के साथ सैर सपाटे को

जाती सो भी उनकी कसौटीपर चढ़कर। बाबाजी के साथ खाती पीती बाबा की सीख सोती। यों कहूं कि बाबा ही उनके लिए सब कुछ था। ऐसे बाबा से विहीन यह लोक उनको कुंभीपाक सा डरावना दिखाई दे रहा था। अभी अभी यौवन में पदार्पण करनेवाली इन नव तरुणियों पर बाबा की मृत्यु वज्राघात बन कर आई।

महामुनि का पवित्र कलेवर उठाया गया। उठानेवाले थे मारसिंह, पंप और राज्यकर्ता के कम्मराय एवं लिंगमय्य। भक्ति भाव से उस कलेवर को ढोए जा रहे थे मानो जिनेश्वर की उत्सव-सामग्री ले जा रहे हों। और एक बात थी। भक्ति के क्षेत्र में राजा और रंक का भेद कहा? यहाँ यह बात चरितार्थ हुई थी।

इस अर्थी के पीछे पीछे नागमय्य की अर्थी निकली। मल्लिमय्य मुद्दमय्य अप्पणय्य और मल्लय्य उसे ढो रहे थे और किसी को छूने तक नहीं दिया। स्त्रियों को हटा ने का सब का प्रयत्न व्यर्थ हुआ। जुलूस का मार्ग आंसू से सिंचित था। जनता पीछे पीछे जा रही थी और अपनी श्रद्धांजली देती जा रही थी।

श्मशान में चंदन कर्पूर की चिताओं पर रखकर दोनों की अन्त्येष्टि की गई। जिनचन्द्रजी की चिता को पंप कविने अग्निसात् कर दिया नागमय्य की चिता को मल्लय्य ने। इस कार्य में उनके पुत्रोंने भी हाथ बँटाया।

जिनचन्द्र और नागमय्य दोनों महात्मा थे। जब तक जीवित थे तब तक लोकहित की साधना में तत्पर रहे। जब मृत्यु आई तो तत्पूर्व ही लोक हित साधना में अपने शिष्यों को नियोजित किया। और मृत्यु के पश्चात भी अपनी उसी लोक कल्याण कामना-की सुगंध फैलाकर चल रहे थे।

लोक हित कामना की सुगंध लोगों तक पहुंच रही थी।

नागमय्य के मरण से सारा पुगनूर अनाथ बना । लोग रो रहे थे । पर जनता की स्मरण-शक्ति बहुत शीघ्र कम्पित हो जाती है। जिसका जितना निकट सबध रहता है उतना ही अधिक उसका दुख होता है। पर काल का लेपन सब दुखो को भुला देता है। मल्लप तथा पुन्नमय्य को पितृ-वियोग का दुख भूलकर राजकाज सभालना पडा। अव्वकव्वे का दुख अवश्य इन दोनो के दुख की अपेक्षा अधिक दिनों तक बना रहा। कारण यह कि नागमय्य उसके ससुर नही थे मानो पिता थे, पिता से भी अधिक थे। सर्वाधिक दुख अत्तिमव्वे और गुडुमव्वे को था। दादा ही मानो इनके जीवन का सर्वस्व था। दादा के कमरे में जाती तो आँसू फूट निकलते। दादा के साथ ही खाया करती थी, अब भोजन के लिए बैठती तो खाते नही बनता था। उठकर बिना खाए यो ही चली जातीं। दिन दिन कृश बनती गई। शरीर की काति फीकी पडी। जीवन में अब कोई आकर्षण नही रहा। उत्साह तो बिलकुल नही था। प्राय दादा की चिता पर ही जीवन के उत्साह को भी जलाए आई थी। इनको देखकर अव्वकव्वे की चिता बढने लगी। सोचा करती कि उनका शोक कैसे दूर करें ? उसे भय था कि कही शोक के मारे कुछ और अनर्थ न हो। अतएव मन-बहलाने का प्रयत्न करने लगी। अपूर्व रत्नाभरण बनवा कर दिया। आशा थी कि और लडकियो के समान ये लडकियाँ भी इस पर मुग्ध हो जाएँगी और अपने दादा को भूलती जाएँगी। पर बात उलटी निकली। उन गहनो को देखते ही रत्नवृष्टि करानेवाले उस दादा को स्मरण करके फूट-फूटकर रो उठीं मानो अपने दादा पर मोतियो की वृष्टि करने में लगी हो। नाना प्रकार के दुकूल मगवाकर पहनने का आग्रह करते हुए अव्वकव्वे कहती कि लो य तुम्हें फबते हैं। इन्हे पहनो

पर अतिमब्बे कहती कि अब कौन हमें सजी हुई देखकर फूले न समानेवाला है। गुण्डमब्बे शोक करती अब यह सब व्यर्थ है। दादा ही नहीं रहे तो इन्हें लेकर क्या करें। माता ने आग्रह कर के एक बार चमेली की कलियों से वेणी पिरोई। वे दादा को दिखाने के लिए भूलकर, उनके कमरे की ओर दौड़ पड़ी। वहाँ जाने पर ही उनको होश आया कि दादा जी अब इस संसार में नहीं। धड़ाम से कटे हुए केले के समान गिर पड़ी। आहार की मात्रा प्रति दिन कम होते देख अप्पकब्बे चिन्तित हुई। सोचने लगी क्या ये भी दादा जी के समान ही अनशन व्रत करने का संकल्प कर बैठी है। जब से दादा जी की मृत्यु हुई तब से भूलकर उन्होंने वीणा पर हाथ नहीं फेरा। मधुर स्वर में गानेवाली इन युवतियों ने अब मौन धारण किया। मयूरी सी मस्त होकर मयूर-नृत्य करनेवाली इन को दादा की मृत्यु ने पंगु बना दिया था। ये अब घुंघरू देख कर कांप उठतीं। दादाजी के कमरे में दादाजी के चबूतरे पर वीणा घुंघरू आदि पड़े-पड़े धूल धूसरित हो गए थे।

पति से एक बार अप्पकब्बे ने कहा—

देखो! दादाजी के शोक में कलियाँ कैसे मुरझती जा रही हैं। इनका क्या होगा?

क्या करें? कुछ समझ में नहीं आता।

— मल्लप ने निराश हो कर उत्तर दिया।

पर क्या यों ही छोड़ दें?

छोड़ना नहीं चाहिए। मैं भी मानता हूं। पर बताओ तो सही कि क्या किया जाय?

देखो तुम्हारा सारा समय बाहर कट जाता है। तुम हमारा दुःख क्या जानो! आठों पहर घर में पड़ी हुई मैं जानती हूं। मुझसे यह देखा नहीं जाता। कहीं कुछ अनर्थ हो जाय तो पछताओगे।

क्या ऐसी बात है! ऐसी चिन्ताजनक स्थिति है?

क्या और कुछ बताना होगा ? `न ही रहे हो कि पद्म जैसे खाती नही और पहनती भी नहीं । गहना देखते ही इनका गला बैठ जाता है। हमेशा चुपचाप बैठी रहती हैं । वसत मारत के शीत ' स्पश से इठलानेवाली माधवी लता सी ये लडकियां अब भूलकर भी नहीं हँसती । इनकी ऐसी दशा हुई है कि में क्या करूँ, सदा मैं इसी शोक में घुल रही हूँ । सोचा करती थी कि इनका विवाह बडी धूम से करूंगी। पर न जाने हमारे भाग्य में क्या बदा है ?

क्या विवाह कर दें !

देखो, जो चाहे करो । मैं केवल यही चाहती हूँ कि वे पद्म जैसे थीं वैसे बन जाय ।

योग्य वर कहां हैं ?

क्या बिना पूछ-ताछ किए वर हमारे पास आप आएंगे ?

हाँ, आप ही आएंगे । पर समय चाहिए। जल्दबाजी में यह काम नहीं होगा ।

जी हो, पहले ऐसा कुछ तो करो कि ये शोक भूल जाय नही तो अवश्य ये पागल हो जाएगी ।

---- दृढता के साथ पति को चेतावानी दी ।

और एक काय आ पडा है न, नही तो —

लडकियो के विवाह से भी अधिक जरूरी काम है क्या ? वह कौन-सा है ? सुनूं तो ।

जरा असमाधान सूचक ध्वनि में पूछा ।

जिनचद्रजी की इच्छा थी कि कन्नड में शाति-पुराण सुनें । जीते जी आप की इच्छा पूरी नही हुई । कम से कम अब उस महात्मा की इच्छा पूण करनी होगी ।

करो । कौन मना करता है ? पर लडकियो के विवाह और इस को एक ही पलडे में न रखो । किसी कवि को बुलवाओ और

मिसवालों पर ... । म अजग ...

म भी मानता ... पर मानो तो सही क्या काम्य मिलाना कोई साधारण बात है ? क्या इस सुलभ मानती हो ? क्या जब चाहे तब हमें चांदनी मिलेगी ? और ... इच्छानुसार कभी ग्रमर भी सुधार करते ? किसी के कहने मात्र से ... निकलेगी ? यदि चाहो तो एक ... के ... भी ब्याह कर सकता हूँ पर मानी मनी के अनुसार नियंताओं ... को कहा से लाऊँ ?

म ... ने बराबी बात कह दी ।

क्या ... । किसी के ... मरवन हो तो भी वह भी के लिए तरसता रहे तो उसे कहा से समझा दें ।

म ... मक्खन ? तुम्हारा मतलब ?

तुम एक बार भाई ... से ... कि क्या वे नहीं मानेंगे ? पोप भी से प्रार्थना करने पर यह काम नहीं बन सकता ?

— ... ने मार्गदर्शन किया ।

ठीक है ! इन दोनों ... लें । दोनों की मर्यादि की अंतिम अभिलाषा ज्ञात हो ... ध्यान ... सुधार ... । जो हो शांतिपूर्वक ... की रचना ... बिना ... नाम तब उन्हीं ... जाएगी ।

मक्खन ... काम ... साथ ही हो ... तो ही बिना ... ?

जल्दी ... किसी के ... ?

वाना म ... ? ऐसी धौस ...

... रहे ... पा ...

देखो तुम्हारी सात्वना के लिए एक ही बार मैंने विनोद कर देने की बात कही थी, उस बात को लेकर अब मुझ पर ताना मारती हो और पूछती भी हो नादान सी, कि मैंने क्या कहा!

ताना नहीं मारा! मैंने केवल तुम्हारी शक्ति का स्मरण दिलाया।

जैसे कैकेई और द्रौपदी ने स्मरण दिलाया था?

शांत पाप! शान्त पाप!! कैसी बात कहते हो! यह अन्याय है।

ओहो! अब तक कवयत्री बनकर बोल रही थी। अब

ठीक है, जब तुम मेरी स्फूर्ति का स्रोत हो और सामने हो तो मैं क्यों न कवि बनूं?

अव्वकव्वे की बातों में उल्लास की दृढ़ता थी। और उसी धुन में मल्लप वहाँ से उठे।

  

पपकवि और पोन्नकवि दोनों पुरतूर पधारे। उनके सामने मल्लप ने चंद्रसागर की मनीशा कह सुनाई। उस दिगंबरयति की बात वेद विधि के समान मान्य है। कुछ भी हो शांतिपुराण की रचना हो जानी चाहिए। जब यह कार्य समाप्त हो तब मैं उसकी सौ प्रतियाँ लिखवा कर बेटियों के विवाह के अवसर पर सुवासिनियों में वितरित करूंगा।

—मल्लप ने विनम्र पूर्वक निवेदन किया।

इस युग के महाकवि पप जी हैं। आप ही को शांतिपुराण लिखना होगा। जिमचन्द्र जी भी यही चाहते थे।

— पोन्न ने कहा।

महानुभाव! आप मेरे मर्म पर क्यों मारना चाहते हैं? अरिकेसरी के साथ ही मेरी लेखनी की शक्ति चली गई है। उस महाप्रभु के पीछे मेरी प्रतिभा लुप्त हो गई है। मेरी कल्पना शक्ति

कठिन [illegible] । मन मदमस्त स्थिर नहीं बनता। पोन्नभी आप त्यागी हैं महात्मा [illegible] । आप का चित्त निर्विकार है। आप समभाव से सुख दुःख [illegible] । आप स्थितप्रज्ञ हैं। इस युग के कवि चक्रवर्ति भी आप हैं। [illegible] आप ही शान्तिनाथ के भव्य चरित गाइए। मैं केवल उस बूढ़े [illegible] के जैसा वाणी का काम करता। जिस व्यापारी का बेड़ा [illegible] गया हो और दिवाला निकला हो उस के पास [illegible] माँगना उचित [illegible] । इससे उसे दुःख मात्र होगा। आप कवियचक्रवर्ति हैं शान्तिनाथ [illegible] चक्रवर्ति हैं। आप उस पवित्र गाथा के कवि हों गायक [illegible] — यही मेरी प्रार्थना है।

—पप कवि ने निवेदन किया।

पन्नमय्य ने नमस्कार किया और कहा— जब तक आश्वासन नहीं मिले तब तक यहाँ से न उठूँगा पोन्न जी के सामने बैठ गया।

ठीक उसी समय पोन्न जी अलौकिक प्रेरणा का अनुभव करने लगे। जिनचन्द्र जी की बाधा-फताका फहराती हुई दिखाई दी। पर लोक कल्याण-कामना से शान्तिनाथ पुराण लिखवाने की इच्छा उस त्यागी महात्मा में जागी उस घड़ी का महत्व समझने में उस सद्भावना में तल्लीन होने में पोन्न जी को देर न लगी। उस समय जटाधारी सम्यक् [illegible] में पुलकित हुए। वाणी विकंपित हुई। आँखों के सामने मानो समवसरण उभर आया। उनके गले से मानो संगीत स्वयं [illegible] ।

वे आग्रह पूर्वक बोले—

ठीक है। मैं शान्तिनाथ पुराण रचूँगा। जिनचन्द्र जी की अंतिम अभिलाषा पूर्ण हो। और साथ ही साथ पंपजी की इच्छा सफल हो। [illegible] की मनौती पूर्ण हो। पन्नमय्य की मनीषा सार्थक हो। अतिमब्बे और [illegible] के जीवन में शान्तिनाथ पुराण से धार्मिक क्रांति का बीजारोपण हो।

नागमय्य के घर पर पडा हुआ शोक का कुहरा पप और पोन्नजी के आगमन से दूर हुआ। ससार सारोदय नाम से विख्यात पप के रहते समय उदासी कहाँ रह सकेगी? निराशा के लिए जगह कहाँ? अत्तिमब्बे और गुड्मब्बे के लिए मानो पपजी के पास रहते समय अपने दादा के पास रहने का सा आनदानुभव होता था। पप जी से विक्रमार्जुन विजय और आदिपुराण सुने। सुन सुनकर कठ पाठ किया। पप महाकवि के चरणो में रहकर इन दोनो ने भारतीय नारी के कर्तव्य का ज्ञान सीखा। कला मे कला सी तन्मय बनी नीलाजना के पात्र की गरिमा से अवगत हुई। नव यौवन में पदार्पण करती हुई इन दोनो लडकियो ने समझा कि अपना सौंदर्य, अपना लावण्य, अपनी प्रतिभा, अपना ज्ञान, अपना धनकनक आदि की सार्थकता तभी है जब वे परमात्मा के चरणो में अर्पित हो। यौवन के प्रारभ मे योग्य धार्मिक सस्कार नही मिले तो मानव दानव बन जाएगा। पप कवि ने इस रहस्य का भी निरूपण किया कि यदि दैहिक सौंदर्य पर पारमार्थिक सस्कार का रग नही चढे तो सुरसुंदरी भी विषकन्या बन जाएगी। यदि यौवन की मस्ती पर भक्ति का अकुश नही हो तो ये इन्द्रियाँ हमे पथभ्रष्ट करके गड्ढे मे गिरा देगी।

उन्होने यह पाठ भी पढाया कि पहले व्यक्तिगत रागद्वेष को कुचल देना चाहिए नही तो, स्त्री का जीवन आसू का समुद्र बनेगा।

एक ओर पोन्नकवि काव्य-कन्या को नचा रहे थे। दूसरी ओर पप कवि कर्नाटक के स्त्री रत्नो को कर्नाटक सस्कृति के चाक पर उतारकर चमका रहे थे, उनके जीवन को रत्नकलश बना रहे थे।

इधर मल्लप योग्य वरो के अन्वेषण मे लगे रहे। पढी लिखी गुणवती कन्याओ के अनुरूप वर पाना बडा कठिन है। अत्तिमब्बे और गुड्मब्बे बडे घराने की लडकियां ठहरी। चालुक्य महारानी की लाडली सखियाँ थी। नादान भी नहीं कौन कहे। कहीं ये पूर्ण षोडश सिंगार

से सजधज कर खड़ी हो जाती तो आकाश के खेचर विमान तक खड़े हो जाते और इनका अनुपम सौंदर्य देख कर खेचर बालाएँ मोहित हो जाती। इन दो तरुणियों को देखने से ऐसा लगता था मानो कला और कमनीयता की सजीव प्रतिमा हैं। यदि नृत्य करते समय इनको देखें तो ऐसा लगता मानो इन्द्रधनुष पर चढ़कर मयूरी नृत्य रही हो। इन की चाल नृत्य की गति थी। इनका बोल संगीत बना। जिस पर ये काव्य और शास्त्र दोनों में पारंगत थी। ऐसी लड़कियों के लिए योग्य वर पाना सुगम-साध्य नहीं था।

पट्टदेवी! हमारी कन्याओं के योग्य वर चाहिए न?

एक बार मारसिंह ने विचार किया।

राजकुमारों में से देखना होगा। कम स्तरवालों को नहीं।

पर हम कहाँ और राजकुमार कहाँ! यह कैसे होगा?

देखो! तुम्हारी इन कन्याओं से विवाहित होकर कोई भी राजकुमार अपने को धन्य मानेगा। समझे?

आप भले ही अपने पास के सोने को पीतल कह दें पर इस का मूल्य पारखी समझे तब न?

पर खरा सोना कभी भी रहे खरा ही लगेगा!

और! राजकुमारों में ही सही। बताइए। इन के योग्य कौन है? कोई नहीं दिखाई देता!

क्या राष्ट्रकूट के कन्नर युवराज हैं। ऐसे ही गंग वंश मारसिंह के छोटे भाई राचमल्ल भी हैं। पुरातन काल से राष्ट्रकूट और गंग सगे संबंधी रहे हैं। परस्पर गौरव रखते हैं और आदर भी देते हैं। अतएव सखियो! ये दोनों वर अनुरूप बन सके हैं। जिस पर ये दोनों राजघराने जैन-धर्म के आधारस्तंभ से हैं। इनके राज्य में अहिंसा की जड़ जम गई है। ऐसे राजकुमारों के होते हुए हमारी धर्मरत्न चूड़ामणी-सी ये कन्याएँ क्या वर पर पड़ी रहें?

देखिए, वे क्या हमारे यहाँ विवाह करने के लिए तैयार है?

सुनो। पहले पूछ लो कि अत्तिमब्बे और गुंडमब्बे उनसे विवाहकर लेने के लिए तैयार है या नहीं।

— ऐसा कहकर हम पड़े।

दो-एक दिन बीत गए। एक बार एकाएक चालुक्य महामंत्री दल्लप पुगनूर आए और सीधे मल्लप के यहाँ पधारे। दोनों में कुशल प्रश्न हुआ। खान पान का प्रबंध अतिथि के योग्य श्रीमंत ढंग से किया गया। अत्तिमब्बे और गुंडमब्बे ने मिलकर परोसा। भोजन करनेवालों को लग रहा था कि कहीं देव लोक से सुरसुन्दरियाँ आकर अमृत परोस रही है। इसी कल्पना में दल्लप ने कुछ अधिक ही खा लिया। पर कवि के मन में पुरानी स्मृति जागृत थी। अरिकेसरी और आप एक साथ जेवनार करते तो महारानी अपने हाथ से परोसा करती थी, आज फिर ऐसा ही अनुभव किया।

भोजन समाप्त हुआ। पान दिया गया। तब दल्लप ने मल्लप से अपने मनाप को व्यक्त करते हुए कहा—

मल्लप, नागमय्य की मृत्यु से अपार नष्ट हुआ है। इस दुःख में हम सहभागी हैं।

हाँ। यह बात सही है। पर हमारा क्या बस है? एक बात अवश्य है। आप ही अब हमारे समाज के बुजुर्ग हैं। आप के मार्ग-दर्शन की प्रतीक्षा हम लोग कर रहे हैं।

— मल्लप ने विनय-पूर्वक उत्तर दिया।

आप मेरे मार्ग-दर्शन की प्रतीक्षा में हैं खूब, खूब!

क्या हँसते हैं? आप मुझसे वयोवृद्ध हैं और अनुभवी भी। न केवल आप मार्ग-दर्शन दें आप अनुग्रह भी करें। आप की आज्ञा सिर आँखों पर रखकर पाली जाएगी। घर पर एक बुजुर्ग व्यक्ति का रहना योग्य है। उन पर सारी जिम्मेदारी रहती है। और हम लोग

मांसाहारी बन कर आराम से रह सकते हैं।

मरतप्प! मेरी समझ में आप ही सुकर्म हैं। अपनी समझ के अनुसार चलिए। नागम्मा जैसे धार्मिक प्रवृत्तिवाले महापुरुष की संतान मैं भी धर्म की ही परीक्षा रखूँगी। आप और आप के छोटे भाई स्वतंत्र बनकर पोन्नम्मा हमारे समाज की दो आँखें हैं। आप दोनों हमारे राजकाज के दो पक्ष हैं।

सकलप जी! आप हम को बना रहे हैं। और! आप की बात मान हम आँख और पक्ष हैं तब भी आप हमारे समाज के मस्तिष्क हैं इस बात को न भूलिएगा। नेत्र हों चाहे पक्ष हों मस्तिष्क के इशारे पर ही वे काम कर सकते हैं।

—मस्तप ने उत्तर दिया।

मस्तपजी कौन आप से संभाषण में जीत सकता है! पोन्नम्मा जैसे पत्नी के समान मैं तलवार के धनी हैं

तुम भी बातों का धनी हूँ ?

—मस्तप ने व्यंग्य प्रश्न किया और हँसे। दोनों खूब हँसे।

सुनिए मस्तप जी मैं अपना कार्य ही भूल बैठा था।

कहिए! क्या बात है?

आपने हमारे नागदेव को देखा है?

हाँ हाँ! देखा है।

वह विवाह के योग्य है। कहिए वे नागिदेव आए हैं। पर एक बात है। स्वर्गीय नागम्मा ने एक बार हम से कहा था कि हमारा समधी आप को बनना ही होगा। तब मैंने भी कहा था कि बिना आप की मंजूरी मैं लड़के की शादी कोई ही करनेवाला हूँ। आज नागम्मा रहते तो बात ही दूसरी थी। आज आप से मिलकर नागम्मा की इच्छा कह देने और आप की इच्छा भी जानने के लिए मुझे आना पड़ा।

दल्लप ने बडे सकोच मे अपनी बात कह सुनाई।

दल्लप जी, आप का मतलब समझ गया। पर एक बात है। यदि हमारे पूज्य पिताजी ने कुछ कहा हो तो हम क्या उसे टाल देंगे? हा। दो-एक दिन आप यही ठहरिए। एक बात मैं अपने घर मे पूछ लू। लडकियो की इच्छा भी जान ल। आप का आना बडा ही अच्छा हुआ। आप मौके पर आए हैं। बात तै हो जाय। इससे बढकर और क्या चाहिए।

दूसरे दिन चामुंडराय पुगनूर पधारे और मल्लप से मिले।

राव जी, आप के आगमन की सूचना मिली होती तो राजमर्यादा पूर्वक आप की अगवानी कर सकते थे। आप गगराजा के राजगुरु ह। वीरमार्तण्ड है, महामत्री है, रण-कलि है। ऐसे महानुभावो का बिना पूर्व सूचना दिए आना केवल आप का सौजन्य और वात्सल्य का द्योतक है पर हम तो स्वागत करने के सदवकाश से वचित हुए।

— मल्लप ने कहा।

देखिए। जब आप के पूज्य पितपाद स्वर्गस्थ हुए तब हम युद्ध के मैदान में व्यस्त थे। वहा से आ न सके। केवल हमारे-माता-पिता ही आ सके थे। नागमय्य जी की मृत्यु ने हमारे समाज ने एक अनमोल रत्न ही खोया है।

— चामुडराय ने सताप व्यक्त किया।

हाँ, हाँ, फिर भी आप जैसे हितैषियो के होते हुए हम पितृ विहीन हो कर भी अनाथ नही बने है -- यही सात्वना की बात है।

—मल्लप ने विश्वास पूर्वक कहा।

नागमय्य के गुणगान मे हमारी माताजी थकती ही नही। हमारे पिताजी का तो कहना ह जीना ह तो नागमय्य जैसे जीना चाहिए क्योकि वे जीना और मरना दोनो जानते थे। उन की याद मे दोनो रो भी पडते ह। सचमुच ऐसा व्यक्ति का न रहना हमारे

कर्नाटक के लिए अपार नष्ट हुआ है। हमारा दौर्भाग्य है।

आप जैसे महात्माओं से सान्त्वना पाने के कारण मैं तो यही कहूँगा कि हमारे पिताजी मरे नहीं अमर हुए हैं।

— यह कहते समय मल्लप की पलकें भीग गईं। अपने दौर्बल्य को छिपाने के लिए बात बदलकर बोले —

क्षमा कीजिए। मुझे क्या हुआ है! दूर से आए हुए आप को बातों में फँसाए रहा आतिथ्य का समुचित प्रबन्ध तक नहीं किया! उठिए उठिए! कृपया स्नानादि से पहले निवृत्त हो जाइए।

रसोई घर में हलचल मची थी। कल ही चालुक्य प्रधान का सत्कार समारम्भ हुआ था। आज अभी के प्रधान चामुण्डराय के स्वागत सत्कार के योग्य प्रबन्ध करना था। मेहमान क्या चाहे होता ही है। पर श्रीमन्तों का भाग्य उन्हें हर कहीं अमरपुरी का भोग देता ही है।

कर्नाटक के महान व्यक्तियों का यह प्रीति भोज था। उस प्रीति भोज में रन्नप अभी अभी आए चामुण्डराय थे। बहुत दिनों से रहनेवाले पम्पकवि मल्लप पोन्नमय्य एवं मल्लप के सभी पुत्र सम्मिलित थे। मल्लप की पत्नी अप्पकब्बे और पोन्नमय्य की स्त्री दौर्बल्यब्बे परोसने लगीं। अत्तिमब्बे और गुण्डमब्बे भी यथा समय इनके साथ हाथ बँटा रही थी। सोने की थाली में भरा हुआ अन्न अनघ्र्य मोती सा लग रहा था। सोने के बर्तन और चांदी के कलश आदि थे। उनमें भरे भोज्य पायसादि पक्वान्नों को ऐसे सजाकर लाती थी कि देखने में आँखें अघाती नहीं थी। कभी कभी अत्तिमब्बे और गुण्डमब्बे चपला सी चमककर चली जाती थी। इन के आगमन में ऐसा लग रहा था मानो फूलभरी कल्पलता अपनी ओर झुकी आ रही हो। अतिथि सोने की चौकी में बैठ रहे थे। उन के चारों ओर सोने की कटोरियाँ थी। उन में चांदी के चम्मच रखे गए थे। सम्भ्रम और प्रेम का मधुर वातावरण था। परोसनेवालों का प्रेमपूर्ण

मृदु भाव और उनके नूपरो की मधुर ध्वनि से सुंदर सगीत का ठाट जम गया था और आनद भी मिल रहा था।

ससार का सच्चा सुख भोजन ही है।

— चामुडराय ने पप से कहा।

केवल भोजन ही सच्चा सुख नही दे सकेगा। आप जैसे महानुभावो की सहपंक्ति प्राप्त हो तो मुझ जैसा अभागा कवि भी सचमुच ससार सारोदय का नाम सार्थक मान सकता है।

—पप के होठो पर मुस्कराहट खिली, पर ध्वनी में खिन्नता थी।

पप जी आप महाकवि है। फिर भी अपने को अभागा कहते है! आप कृपाण-हस्त बनकर चतुरग बल भयकर रूप दिखा चुके हैं। कठ उठाकर विश्व कविश्रेणी मे अग्रणी बने हैं। आप के श्रीमुख से निस्सृत काव्य दुन्दुभिनाद है। भोजन समारोह मे तो सचमुच ससार सारोदय है। विश्वकवि, हमारी हस्ती किस गिनती मे है बताइए?

— चामुडराय ने तर्क किया।

आप की हस्ती? चिरस्थाई है! आप अजर और अमर है। आप का साहस, आप की सहृदयता, इस से बढकर आप की जिन-भक्ति — हमारे जैसे दसो कवियो की वर्ण्य वस्तु है। आप का साहस देश के कोने कोने मे शिला फलको पर अंकित मिल रहा है।

पप कवि ने चामुडराय के वास्तविक गुणो का उल्लेख किया।

आप दोनो की बातो मे एक बात स्पष्ट हुई।

— दल्लप बीच में बोल उठे।

स्पष्ट हुई? कौन सी बात?

— चामुडराय का मुह दल्लप की ओर था।

आप के शब्दो मे पप जी महाकवि है और अमर है। पप जी के कथनानुसार आप साहस, सहृदयतादि के कारण अजर और अमर है।, आप महानुभावो के साथ रहने का सौभाग्य पाकर हम पुनीत बने है।

कर्नाटक के लिए अपार नष्ट हुआ है। हमारा सौभाग्य है।

आप जैसे महाशयों से आशीर्वाद पाने के कारण मैं तो यही कहूंगा कि हमारे सिपाही मरे नहीं अमर हुए हैं।

— यह कहते समय मारसप की पलकें भीग गई। अपने दौर्बल्य को छिपाने के लिए बात बदलकर बोले —

क्षमा कीजिए। मुझे क्या हुआ है! दूर से आए हुए आप को बातों में फंसाए रखा। आतिथ्य का समुचित प्रबंध तक नहीं किया! उठिए उठिए! कृपया स्नानादि से पहले निवृत्त हो जाइए।

रसोई घर में हलचल मची थी। कल ही चामुण्ड प्रधान का पुरस्कार समारंभ हुआ था। आज गंगों के प्रधान चामुण्डराय के स्वागत सत्कार के योग्य प्रबंध करना था। यथानुरूपो बलिः होता ही है। पर भोजनों का नाम उन्हें इस कहीं अमरपुरी का भान देता ही है।

कर्नाटक के महान व्यक्तियों का यह प्रीति भोज था। उस प्रीति भोज में मल्लप भी अभी आए चामुण्डराय बड़ी बहुत दिनों से रहनेवाले कविवर मरल्म पोन्नमय्य एवं मल्लप के सभी पुत्र सम्मिलित थे। मल्लप की पत्नी अप्पकब्बे और पोन्नमय्य की स्त्री कौसरब्बे परोसन लगी। अत्तिमब्बे और गुण्डमब्बे भी यथा समय इनके साथ हाथ बंटा रही थी। सोने की थाली में भरा हुआ अन्न अनन्य मोती सा लग रहा था। सोने के बरतन और चांदी के कटोरे आदि थे। इनमें भक्ष्य भोज्य पायसादि पकवानों को ऐसे सजाकर रखी थी कि देखने में आंखें अघाती नहीं थी। कभी कभी अत्तिमब्बे और गुंडमब्बे चपला सी चमककर चली जाती थी। इन के आगमन से ऐसा लग रहा था मानो फूलभरी कल्पलता अपनी ओर झुकी आ रही हो। अतिथि सोने की थाली में खा रहे थे। उन के चारों ओर सोने की कटोरियां थी। उन में चांदी के चम्मच रखे गए थे। संभ्रम और प्रेम का मधुर वातावरण था। परोसनेवालों का प्रेमपूर्ण

मृदु भाव और उनके नूपरो की मधुर ध्वनि से सुदर सगीत का ठाट जम गया था और आनद भी मिल रहा था।

ससार का सच्चा सुख भोजन ही है।

— चामुडराय ने पप से कहा।

केवल भोजन ही सच्चा सुख नही दे सकेगा। आप जैसे महानुभावो की सहपक्ति प्राप्त हो तो मुझ जैसा अभागा कवि भी सचमुच ससार मार्गोदय का नाम सार्थक मान सकता है।

—पप के होठो पर मुस्कुराहट खिली, पर ध्वनी में खिन्नता थी।

पप जी आप महाकवि हैं। फिर भी अपने को अभागा कहते हैं। आप कृपाण-हस्त बनकर चतुरग बल भयकर रूप दिखा चुके हैं। कठ उठाकर विश्व कविश्रेणी मे अग्रणी बने हैं। आप के श्रीमुख से निस्सृत काव्य दुन्दुभिनाद है। भोजन समारोह म तो सचमुच ससार मार्गोदय है। विश्वकवि, हमारी हस्ती किस गिनती मे है बताइए।

— चामुडराय ने तर्क किया।

यह अवश्य अवनि में पारस-पत्थर होता तो इतना लोहा सोना बन सकता ?

—रन्नप हँसे

सच बात है। आप अवश्य मोह की मूर्ति हैं। मद्य में आप के पन्ने में आग हुए [illegible] ही में पड़ना चाहिए। आप उनके साथ में भी निमिगिल में रमते हैं।

—चामुंडराय कह मुस्कराए।

हाँ। मैं अवश्य मानता हूँ कि आप पीना खाना अपने क्षेत्र में निमिगिल हैं। पंपदेव कवि निमिगिल हैं तो चामुंडराय जी और सारे संसार में निमिगिल हैं।

—मस्कर ने चलकी की।

वाह के धनी! मैं ने क्या गोला हास्य रस का प्रयोग ही कर दिया!

—पंप ने दूसरे हँसते कहा।

देखिए कवि चक्रवर्ती जी! मुझे केवल पचरंग का ज्ञान है।

—रन्नप हँसे।

ठीक तो है, अन्य रसों का आधार पचरंग ही है।

—रन्नप का पोन्नाप छूगा।

ऐसे हास्य और विनोद में सब का भोजन समाप्त हुआ। सब के मुख पर प्रसन्नता झलक रही थी।

दुपहर की तपती धूप ढलने लगी। और एक बार रन्नप के यहाँ सभा भवन में सब एकत्रित हुए। सब के बीच में पंप महाकवि तिलक प्राय शोभा दे रहे थे। आप की बगल में तकिए के सहारे गद्दी पर चामुंडराय विराजमान थे। दूसरी बगल में वैसे ही रन्नप बैठे थे। मस्कर सब की दृष्टि का केंद्र बन बैठे थे। जलपान का प्रबंध हुआ था। इधर वह समाप्त हुआ उधर पोन्नय्य जी पधारे। उन को उचित आसन दिया गया। [illegible] होते हुए [illegible] महाकवि ने

पोन्न को साष्टाग पणाम किया क्योकि वे जटाधारी समण थे। उनके पीछे उपस्थित अन्य मज्जनो ने भी नमस्कार किया।

धमवृदिधरस्तु

—यह आशीवचन गज उठा।

पोन्न ने चामुडराय से पश्न किया—

नेमिचद्राचाय जी कैसे हैं ? स्वस्थ है न ?

जी हां ! मानद है। आप के कुशल-क्षेम की वार्ता लाने की आज्ञा हुई है।

— चामुडराय ने उत्तर दिया।

नेमिचन्द्रचाय जी आज के साधु समाज के तिलक हैं। जैन सिद्धात के पारगत आचाय हैं। जैनागमो पर उनकी जैसी अधिकारवाणी और किसकी है ? वे हमारे युग के वीरसेन महर्षि है।

— पोन्नकवि आचाय जी के गुणगान करने में अघाते नही दिखाई देते थे।

आप जानते होगे कि हाल ही मे नेमिचद्राचाय जी ने गोम्मटसार नामक ग्रथ की रचना की है। इस में जीव और कम के विचित्र एव निगूढ सबध का वैज्ञानिक विवरण दिया है।

— चामुडराय की ध्वनि मे अभिमान था।

जी ! बहुत अच्छा। आप कब यो ही बैठे रहने देते है ! कुछ न कुछ महत्व का काय कराते रहते हैं। कहिए, क्या हमारे लिए भी उस ग्रथ-रत्न की एक प्रति मिलेगी ?

अवश्य, अवश्य मिलेगी।

— पोन्न कवि के प्रश्न का समाधान जनक उत्तर देते हुए चामुडराय ने कहा —

लेकिन अब नही। उस की एक सौ प्रतियां बनाई जा रही है। मेरे पुत्र जिन्न के विवाह के शुभ अवसर पर उस का प्रकाशन

करूगा। आशा है कि उस शुभ अवसर पर आपका पत्र आशीर्वाद हमें अवश्य प्राप्त।

रानजी आपका आदर्श बहुत ऊँचा है और अनुकरणीय है। यदि जिन भक्त अपने अपने घरों में विवाह यज्ञोपवीत आदि शुभ अवसरों पर ग्रंथ प्रकाशन का संस्कार भी करें तो जन-सम्पत्ति का सर्वाधिक उपयोग ही बना रहेगा। विवाह काम भाव है पर धर्म के गंभीर वातावरण में काम प्रेम बनता है नाटक भी। यहाँ हम भ न लिखता रहे हैं।

धन्य भाग! आप का मार्मिक गाथा प्रवचन और प्रवृत्ति के विक्रमार्जुन विजय ग्रन्थों में हम खूब प्रभावित हैं भावमी भी हम कई हैं। हमारा विश्वास बढ़ा है। आह! यह कैसा ग्रन्थ है। वीर रस का वर्णन पढ़ते पढ़ते मन रोंगटे उठा था। उसी युग में हमारा राष्ट्र किया था कि भर सब दुष्ट-शक्तियों का दमन किया है। इससे ये विदित हुआ कि युद्ध बड़ा क्रूर कर्म है। जहाँ तक हो सके उससे दूर ही रहना चाहिए। शासन की बागडोर सम्भालनेवालों को इस बात ध्यान अवश्य चाहिए। और कृपया बताइए कि आप कौन सी रचना कर रहे हैं?

— वासुदेवम ने कुतूहल व्यक्त किया।

जिनवनवासी शान्तिपुराण सुनना चाहते थे पर आपकी इच्छा जीवित रहते समय पूर्ण नहीं हुई। परोक्ष में ही सही यह कार्य समाप्त करके उनको अर्पित करूँ इस उद्देश्य से भक्ति और प्रेमभाव हम से शान्ति पुराण लिखवा रहे हैं।

ग्रन्थ कहाँ तक आया है?

अब तो समाप्त ही समझिए। अत्तिमब्बे के पुनर्विवाह के अवसर पर इस ग्रन्थ का प्रकाशन होगा। शान्तिनाथ पंचमस्वाप मूर्ति हैं। उन की गाथा का प्रकाशन अपनी पुत्रियों के कल्याण महोत्सव पर कराना चाहती हैं। यह बहुत ही योग्य संकल्प है।

पोन्नकवि की मधुरस्मिति ने वातावरण मे मधुरता घोल दी।

क्या अतिमब्बे की सगाई कही पक्की हुई है? वह भाग्यवान वर कौन है?

चामुडराय ने आश्चय से मल्लप मे जिज्ञासा की।

अभी सगाई पक्की नही हुई है। पर दल्लप की सवारी उसी उद्देश से आई है। उनके स्वनामधन्य पुत्र नागदेव भी हमारी लडकी के योग्य वर है।

मल्लप की वाते सुनकर दल्लप फूले नही समाए।

आप दसरी लडकी का भी विवाह कर दीजिए। यो तो ये यमज कन्याएँ हैं। इनका जन्म एक साथ हुआ है विवाह भी एक साथ हो जाय।

चामुडराय ने गभीरता से सुझाया।

योग्य घर मिल जाय तो वह भी सभव है।

— पप महाकवि ने कह ही दिया।

क्या आप की लडकियो के लिए वरो की कमी है? विलब करने से वचित रहने का भय सब को बना ही रहता है। यही सोच कर हमारी मातृश्री ने हमें यहाँ भेज दिया है। जब बहुत दिन पहले एक बार हमारे माता-पिता यहाँ आए हुए थे तब सुनते है कि श्रीमती अब्बकब्बे ने प्रस्ताव किया था, और हमारे माता-पिता ने इस सबध को स्वीकार भी किया था। आप की दो कन्यामणियो में आप जिसे चाहे दीजिए। हम सतुष्ट होगे। अत्तिमब्बे दल्लप की पतोहू बने, योग्य ही है पर गुडुमब्बे हमारी पतोहू बन जाय। हमारे माता-पिता वृद्ध हैं। पोते के विवाह के लिए आग्रह कर रहे हैं। यदि आप महानुभावो की अनुमति मिले तो दोनो विवाह श्रवणबेलगोल में ही हो। पवित्र क्षेत्र मे शुभ कार्य सपन्न हो। सारा प्रबध हम कर देंगे।

सकूँगा। आशा है कि उस शुभ अवसर पर आपका पावन आशीर्वाद हम अवश्य पायेंगे।

राजजी आप का आदर्श बहुत ऊँचा है और अनुकरणीय है। यदि जिन भक्त अपने अपने घरों में विवाह, जन्मोत्सव आदि शुभ अवसरों पर ग्रंथ प्रकाशन का सत्कार्य भी करते तो जन-साधारण का सविशेष उल्लास ही बना रहता। विवाह राग प्रधान है पर धर्म के गंभीर वातावरण में काम रोग घटता और वात्सल्य भी। यहाँ इस में म लिखता रहा हूँ।

धन्य भाग ! आप का मंगलमय रामायण और पउमचरिउ के विक्रमार्जुन विजय ग्रन्थों से हम बहुत प्रभावित हैं। साहित्य भी जन सके हैं। हमारा विश्वास बढ़ा है। आह ! यह कैसा ग्रन्थ है। और इस का बयान पढ़ते पढ़ते मन लौट उठता था। इसी धुन में इसका संकल्प किया था कि पर मुझ दुष्प्रवृत्तियों का दमन किया है। इससे मैं विदित हुआ कि युद्ध बड़ा क्रूर कर्म है। जहाँ तक हो सके उससे दूर ही रहना चाहिए। शासन की बागडोर सम्भालनेवालों को इस का ज्ञान अवश्य चाहिए। और कृपया बताइए कि आप कौन सी रचना कर रहे हैं?

— चामुण्डराय ने कुतूहल व्यक्त किया।

जिनसेनाचार्य शान्तिपुराण सुनना चाहते थे पर आपकी इच्छा जीवित रहते समय पूर्ण नहीं हुई। परोक्ष में ही सही यह कार्य समाप्त करके उनको अर्पित करें इस उद्देश्य से मास्कव और रोचकमय रूप में शान्तिपुराण लिखता रहा हूँ।

ग्रन्थ कहाँ तक आया है?

अब तो समाप्त ही समझिए। मणिमय्ये के पुत्रविवाह के अवसर पर इस ग्रन्थ का प्रकाशन होगा। शान्तिनाथ पंचकल्याण मूर्ति है। उन की गाथा का प्रकाशन अपनी पुत्रियों के कल्याण महोत्सव पर कराना चाहते हैं। यह बहुत ही योग्य संकल्प है।

पोन्नकवि की मधुरस्मिति ने वातावरण मे मधुरता घोल दी।

क्या अत्तिमब्बे की सगाई कही पक्की हुई है? वह भाग्यवान वर कौन है?

चामुडराय ने आश्चय से मल्लप से जिज्ञासा की।

अभी सगाई पक्की नही हुई है। पर दल्लप की सवारी उसी उद्देश से आई है। उनके स्वनामधन्य पुत्र नागदेव भी हमारी लडकी के योग्य वर है।

मल्लप की वाते सुनकर दल्लप फूले नही समाए।

आप दसरी लडकी का भी विवाह कर दीजिए। यो तो ये यमज कन्याएँ है। इनका जन्म एक साथ हुआ है विवाह भी एक साथ हो जाय।

चामुडराय ने गभीरता से सुझाया।

योग्य घर मिल जाय तो वह भी सभव है।

— पप महाकवि ने कह ही दिया।

क्या आप की लडकियो के लिए वरो की कमी है? विलब करने से वचित रहने का भय सब को बना ही रहता है। यही सोच कर हमारी मातृश्री ने हमें यहाँ भेज दिया है। जब बहुत दिन पहले एक बार हमारे माता-पिता यहाँ आए हुए थे तब सुनते हैं कि श्रीमती अव्वकव्वे ने प्रस्ताव किया था, और हमारे माता-पिता ने इस सबध को स्वीकार भी किया था। आप की दो कन्यामणियो में आप जिसे चाह दीजिए। हम सन्तुष्ट होगे। अत्तिमब्बे दल्लप की पतोहू बने, योग्य ही है पर गुडुमब्बे हमारी पतोहू बन जाय। हमारे माता-पिता वृद्ध हैं। पोते के विवाह के लिए आग्रह कर रहे हैं। यदि आप महानुभावो की अनुमति मिले तो दोनो विवाह श्रवणबेलगोल में ही हो। पवित्र क्षेत्र मे शुभ कार्य सपन्न हो। सारा प्रबध हम कर देंगे।

चामुण्डराय बोल रहे थे उनकी भावुकता पर सब के सब स्तम्भित से थे।

मन्मथ सोचने लगे अचानक दोनों कन्यारत्नों की माँग का योग्य वर न हो रही है — इसका क्या जवाब दें? दल्लप का नागमय्य से वचन मिला है तो अत्तिमब्बे ने कालल्लादेवी को वचन दिया है। दोनों बड़े घर हैं। चामुण्डराय भी गंग राज्य की रीढ़ हैं राष्ट्रकूट साम्राज्य के सर्वाधिक महामात्य हैं। दूसरा घर दल्लप का है जो गंगराज्य के आधारस्तम्भ हैं और नागमय्य के बचपन के साथी हैं। लड़कियों का भाग्य है कि ऐसे घरों से माँग आई है। धन्य भाग!

और यदि ये दोनों विवाह सम्पन्न हो जाय तो कर्नाटक के सभी राजघरानों को स्नेह सूत्र में बँध जाने का मौका मिलेगा। जैन संस्कृति के फूलने और फलने का सु-अवसर भी प्राप्त होगा।

मन्मथ यह जानकर मन ही मन फूले नहीं समा रहे थे। पर आत्म-संयम दिखाते हुए औचित्य पूर्ण उत्तर दिया —

आदर की बात है फिर भी मुझे एक बार घर में विचार करने दीजिए।

क्या विचार करना है? मान लो। बधाई है बधाई! तुम्हारा और तुम्हारी लड़कियों का महाभाग्य है। अत्तिमब्बे दल्लप के घर की शोभा बढ़ाये और गुल्लकायी चामुण्डराय के घर की। कर्नाटक में शांति स्थिर होगी और अब युद्ध ही नहीं होगा। गंग और राष्ट्रकूट पक्के दोस्त हैं। वे राजा मूक-मूर्ति से हैं। दल्लप और तुम दोनों चामुण्डों के रक्षाकवच हो। अहिंसा सूत्र में बँध सारा कर्नाटक बंध जाय।

एक कवि की भावना मूर्तिमान हो उठी।
एक कवि की मैं सर्वोत्तम दिखाई दे रहा है।
— पोन्न ने हँसते हुए उनसे कहा।

नव्य चैतन्य! सच है। इस विवाह की बात से मैं अवश्य पुलकित हो उठा हूँ। इतना आनंदित हूँ कि कुछ कह नहीं सकता। क्योंकि हमारे महाप्रभु की इच्छा उससे पूर्ण हो जाएगी। कर्नाटक में अब शांति और सुभिक्ष नामावशेष हो गये हैं। महाप्रभु अरिकेसरी का दिवंगत होना क्या था क्षुद्र शक्तियों का सिर उठाना था। वे अंतिम दिनों में मुझसे कहा करते थे। पप, कुछ तो करो पर व्यर्थ के रक्तपाता से कर्नाटक की रक्षा करो। कर्नाटक की नदियों में वीर पुत्रों का रक्त प्रवाहित हो रहा है, इसे यत्न-पूर्वक रोक दो। राजा-महाराजाओं की झूठी प्रतिष्ठा की बलि वेदी पर सारी प्रजा की सुख-शांति चढ़ाई जा रही है।

ऐसे ही विचार करते करते वे चल बसे। इन विवाहों से मेरे प्रभु की वह अंतिम आशा पूर्ण हो जाएगी, जो संधि-विग्रह से भी पूर्ण नहीं हो पाई थी। विवाह से वह सम्पन्न होते देख कर मैं कृतकृत्य हो रहा हूँ।

इस प्रकार पप जी ने एक व्याख्यान ही दे दिया। और कर्नाटक के राजकीय जीवन पर इन विवाहों से पड़नेवाले प्रभाव का स्पष्टीकरण किया।

आप का कहना यथार्थ है। मैं भी यही सोचकर आनंदित हूँ। फिर भी मल्लप जी घर में एक बात पूछ लें।

—चामुंडराय ने कहा। यह सुनकर मल्लप का मन उल्लसित हुआ।

मल्लप अपनी पत्नी से मिले। उसके चेहरे पर विचित्र शांति विराज रही थी। जीवन्मुक्त के समान वह दिखाई दे रही थी जाने जीवन की सब समस्याओं का उत्तर पाकर कृतकृत्यता का अनुभव कर रही थी। इस धुन में बैठी हुई अप्पकब्बे को तबतक पति के आगमन का पता नहीं चला जबतक उन्होंने उसका

नाम नहीं लिया। मगर नाम मनवाकर वह बोली।

ध्यान समाधि से बहिर्गत होते ही उस के मुंह से निकला —

ओह! तुम!

और कौन यहाँ आएगा?

नहीं नहीं मैं कुछ और ही ध्यान में थी।

मुंह ही बता रहा है।

क्या मुंह पर कुछ लगा है?

मन्दाकिनी ने आंचल से मुंह पोंछ लिया।

ऐसा कुछ नहीं लगा है। जो पोंछने में आनेवाला हो। क्यों व्यर्थ कष्ट उठाती हो!

एकाएक कई बड़े बड़े मेहमानों के आ जाने पर भोजनादि का प्रबंध करना पड़ा। इस भगदड़ी में संभव है कि कुछ न कुछ मुंह पर आ लगा हो।

ये किस लिए आए हैं जानती हो?

मैं क्या जानूं?

जानती हो। फिर भी छिपाती हो।

भला तुम से भी छिपाऊं?

सुना कि तुमने कालकादेवी को वचन दिया था।

वचन? नहीं तो।

रानी जी के पत्र से पता है की आज कभी तुम बौरों में चली थी और तब सुना है कि तुमने अपनी बेटी देने की बात मानी थी। अब बात पक्की करने के लिए ये आए हैं। क्यों तुम ने इसे छिपा के रखा?

यह बात है! वह तो कोरी बात थी। यदि तुम्हें पसंद न हो तो सम्बन्ध तो यह नहीं हो सकता। हमारी कोई आपत्ति नहीं।

तुम वचन दे कर पर मुकरो और मैं ना कहकर निष्ठुर

वनू। खूब।

तुम लोग राजा महाराजाओ से सगाई पक्की करने की धुन में हो? मैं तो रावजी का स्तर अपने योग्य मानती हूँ।

तुम जो मानती हो वही हमारे लिए भी मान्य है।

उस समय की बात है। उस समय मानने न मानने का प्रश्न नही था। अब विचारलो।

क्या? नही मानती हो!

मानती हूँ। अब भी मुझे यह सबध पसद है।

अगर मैं नही मानूं तो ?

जब नही मानते हो तो मेरा क्या बस है! यो ही मैंने वाग्दान किया था। अब वह पूरा नही हो सका। मैं थोडे ही जीभ काढे बैठी हूँ। पति ही बात न रखें तो नारी क्या कर सकेगी? अधिक से अधिक आँसू बहायेगी और आप ही मन को सात्वना दे कर चुप हो जायेगी। सोचा था कि बेटी के व्याह में मेरा भी हक रहेगा।

— अव्वकव्वे की पलकें भीगी सी दिखाई दी।

क्या मेरी बेटी नही है?

है। किसने ना कहा।

तब तुमने पहले इस का जिक्र मुझसे क्यो नही किया? मेरी भी सलाह ले लेती।

ऐसा कौन बुरा काम मैंने किया है? अच्छे कार्यों में सलाह मशवीरा क्यो? मैंने बात की है तो काळलादेवी से, न कि रावजी से स्त्रियो की बात है। जब परस्पर मिलती है तो ऐसी बातें आती रहती है। यो ही बात आई थी मान लिया था। अब लाज रखना न रखना तुम्हारे हाथ है। यो तो दूसरी लडकी है। उसे जिसे चाहे दे दो मैं चू तक नही करूँगी।

— अव्वकव्वे ने हताश भाव से कहा।

तुम जानती हो स्वरूप जी क्यों आए हैं

मैं क्योंकर जानूँ ?

कहते हैं कि पहले लिखाजी ने उन के घर कन्यादान करने का वचन दिया था। अब उसकी याद दिलाने आए हैं। एक के बारे में लड़की के दादा ने दूसरी के बारे में लड़की की माँ ने निर्णय कर लिया है। अब लड़कियों का बाप कुछ करना भी चाहेगा तो क्या कर पाएगा! मानो उसकी हस्ती ही नहीं।

स्वरूप ने गंभीरता का स्वांग भरते भरते कहा।

देखो! मेरे ससुर ने कितना अच्छा वर चुना है! पहले से ही लड़कियों का कितना ख्याल रखते थे। और यहाँ तक सोचा है कि लड़कियों के विवाह के समय में उनके पिता को लेश मात्र भी चिंता न छूने पाये।

मम जी का मन गान लगी।

तब क्या दोनों वर तुम्हें पसंद हैं?

पहले तुम अपना अभिमत बताओ।

मेरा अभिमत? लेकर क्या करोगी? एक ओर स्वरूप ने वचन दिया है दूसरी ओर राजजी की माँग है। इन में से किसको इनकार करते बनता है बताओ तो सही? तुम भी तो दूर की सोचती हो।

क्या मारे भय के लड़की देना चाहते हो?

नहीं समझो। अब अपने आप भाग आई है। वर की खोज में धूल फाँकने की नौबत नहीं आई। फिर भी तुम बालिकाओं और गृहमंत्री से एक बार पूछ लो। उनकी स्वीकृति मिले तो ये शुभ विवाह भवनवेळपोल में सम्पन्न हो जाय।

सच? नहीं बना रहे हो!

नहीं जी। भवनवेळपोल में ही होंगे।

तब तो हमारी लडकियो का अहोभाग्य है। अच्छा घर मिला है और पवित्र तीर्थ में विवाह होनेवाले है। धन्यभाग।

कहती हुई हिरन सी चौकडियाँ भरते अब्बकब्बे अदर गई और लडकियो को आवाज दी। दो-एक बार बुलाना पडा तब लडकियाँ दुमजिले पर थी उतर आई। ऐसा लग रहा था मानो देवलोक से देवकन्याएँ आ रही हो। इनकी आंखो से चपला सी दृष्टि इधर उधर पट रही थी। उनका हाव-भाव बडा मोहक था। इठलाती हुई आकर माताजी के समीप खडी हो गई।

बेटा! क्या कर रही थी इतनी देर?

—अब्बकब्बे के स्वर मे वात्सल्य घुल रहा। उसने लडकियो के मुँहपर लटकी घुघुराली अलको को पीछे सवारा, मानो चाद से कलक पोछने का प्रयास किया! और आगे बोली —

अब तक रावजी तुम दोनो की राह देख रहे थे।

लडकियाँ घबडा गई।

कौन? चामुडरावजी? क्यो माँ?

— अत्तिमब्बे ने चकित होकर प्रश्न किया।

नही हमारे रावजी।

क्या पिताजी?

गुड्‌मब्बे ने स्पष्ट किया। पर उनके मुँहपर हँसी खिल उठी।

हा बेटा।

पर बताओ माँ। पिताजी कब से राव जी बने?

अत्तिमब्बे ने परिहास करते हुए पूछा। अब्बकब्बे भी उनकी बातो मे छिपी ध्वनि को समझकर हँस पडी।

चामुडराव भी तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं।

अब्बकब्बे हँसते हँसते बोली।

हमारी? क्यो? अभी विदा हो रहे है?

आश्चर्य का अभिनय करते हुए अम्बालिका ने पूछा।

आज ही तो आए! आज ही जाने लगे क्यों? पिताजी ने दो-एक दिन ठहराने का आग्रह नहीं किया

किया और करते भी। पर क्या तुम जानती हो वे किस लिए आए हैं?

अम्बिका से हँसी नहीं रोक सकी। उस हँसी का आशय समझकर भी अनसमझी सी अम्बालिका बोली —

मैं क्योंकर जानूँ। हम लोगों का आना जाना सब है। किसीसे बोलना तक मना कर रखा है। जिस दिन हमारे दादाजी गए उन्हीं के साथ हमारा स्वातंत्र्य भी चला गया। अगर वे रहते तो आ कर वामदराव से ही सीधे बातें करके जान लेती।

हाँ हाँ अवश्य ही ऐसा करती। वामुदराव का क्या उनके बाप का भी भय हमें नहीं। हाय! हम इन भागिनियों का स्वातंत्र्य ही क्या रहा है। दादाजी के पीछे ही चला गया।

— क्या भी हो अम्बिका बोली।

वामदराव भी तो क्या समझ रखा है बहन! आप सब साम्राज्य के कर्णधार हैं!

भले ही कर्णधार ही हो। इससे हमारा क्या बिगड़ेगा? क्या हम उनसे लोहा लेना है! यों ही कुशल-क्षेम की बात करने में क्या है?

— अम्बालिका ने गम्भीरता से कहा।

लोहा लगाने के लिए भी तैयार दिखाई देती हो। तुम दोनों साहस हो।

—अम्बिका ने ओठ काट लिया।

पुरुष लोग स्वार्थी हैं। हमारे हाथ में वीणा देकर विवश बिठा रखा है। नहीं तो करने में भी पुरुषों की बराबरी कर सकती

थी। या तो मर कर वीर स्वग पाती या जी कर अमर कीर्ति पाती।

-- गुडुमब्बे वीरमहिला-सी गरज उठी।

यह सब तुम्हें सिर चढाए रखा है न, उसका परिणाम है।

—अब्बकब्बे झूठा क्रोध दिखाते बोली।

दादा जी रहते तो इससे भी अच्छा परिणाम निकलता।

— अत्तिमब्बे ने निस्सकोच कह दिया।

जाने दो। अब हम मतलब की बात करें।

— अब्बकब्बे ने बात काटकर कहा।

हां हाँ, अवश्य करें। किसने मनाकर रखा है ?

— गुडुमब्बे बोली।

देखो बेटा। दल्लपजी नागदेव की सगाई पक्की करने आए हैं और

अब्बकब्बे की बात काट कर अत्तिमब्बे बीच मे ही बोल उठी।

रावजी अपने बेटे की।

फिर तीनो अपनी हँसी नही रोक सकी।

तुम दोनो डाइन हो डाइन। पहले ही ताड लिया है।

— अब्बकब्बे ने कहा।

माँ, हम क्या तुम्हारी ? बेटियां नही हैं। यह भी नही समझ सके।

— हँसते हसते गुडुमब्बे ने कहा।

इनकी बातो से अब्बकब्बे को अतीव आनद मिल रहा था। फूली न समाती हुई बोली —

बेटा, हमारा विचार है कि नागदेव से अत्तिमब्बे की और जिनण्ण से गुडुमब्बे की बात पक्की कर दें।

— लडकियो के भाव पढने लगी।

मेरी कोई आपत्ति नही। इन दोनो में से चाहे किसीने बाते पक्की कर लो।

अनिमेष ने न स्वीकृति दी।

इस पर माँ प्रसन्न हुईं। मुझसे भी मान देना।

क्या मेरी बात मानी जाएगी

— गद्मस्वे ने उलटा प्रश्न किया।

क्या बात! मुझ पर भी संदेह है? हम लोग चाहते क्या हैं। तुम्हारा सुख ही हमारा सुख है। तुम जिसे चाहो पसंद कर लो।

माँ हम दोनों यमज-संतान हैं। साथ साथ जन्म लिया। साथ ही साथ विवाह भी क्या कर सकेगा?

गुड़ तुम्हारी बात समझ में नहीं आई। और कितने दिन तुम साथ रह सकोगी? अगर बालक वास्तव में भी बड़ा हो उस मोहन के लिए तुम्हें ससुराल तो जाना ही है।

ममतामय ने कन्याओं को जीवन मार्ग की गतिविधि स्पष्ट कर दी।

ठीक है! जहाँ दीदी की सगाई पक्की हो वहीं मेरी भी हो जाए माँ

गुड़मकर ने गंभीर ध्वनि में कहा।

क्या कह रही हो गुड़! क्या ऐसे अवसर पर भी मजाक करती हो?

— ममतामय ने जरा क्रोध में कहा।

मजाक नहीं कर रही हूँ माँ! दीदी के बिना मैं पल भर भी जीवित नहीं रहना चाहती। दीदी के साथ एक ही दिन एक ही मुहूर्त में एक ही पुरुष के हाथ सौंप दो।

क्या कहती हो गुड़? दिल्लगी की भी कोई हद होती है। सच सच बताओ।

दिल की बात ही कर रही हूँ। दिल्लगी नहीं।

तब तो तुम नादान हो बेटा। इतने दिनों तक तुम्हारा लालन पोषण किया। अब तुम्हें विदा करना ही पड़ेगा। विधाता है बेटा।

ससार का नियम जैसा है वैसे हमको चलना पडता है। लडकियो को ससुराल भेजना ही है क्योकि वही उनका घर है। दो-एक दिन तुम जीजी के विछोह म अवश्य दुखी रहोगी पर जसे जैसे पति से प्यार पाकर घर गृहस्थी म फस जाओगी तव सब ठीक हो जाएगा।

मा, तुम्हारा कहना सच है। मैं मानती हूँ। पर मैं नही चाहती। क्या हम दोनो तुम्हारी कोख मे नौ महीने साथ न रही? क्या एक ही पालने में रहकर शैशव और बचपन नही विताया? साथ ही साथ इतने दिनो तक आनद म रहते आई। अब भी मा, जो जीजी का पति होगा वही मेरा भी पति होगा यह निश्चय मानो।

गुड्डमव्वे ने दृढता से कह दिया।

यह तुम्हारी भावुकता है। बेटी, क्षणिक भावावेग मे क्या जीवन भर पछताते रहना चाहोगी। तुम नादान हो। चाहे जो कहो पर हम जानबूझ कर ऐसा क्योकर होने देंगे? एक म्यान मे दो खड्ग रखने की मूर्खता कौन करे।

अव्वक्के ने समझाया।

माताजी। यह मेरी व्यक्तिगत बात है। औरो की बात लेकर मैं क्या करू। मानती हूँ पूरी जिम्मेदारी मेरी ही होगी। पर यह तो निश्चित है कि जीजी का पति मेरा भी पति होगा।

बेटा अब रहने दो। तुम्हारा यह आदर्श प्रेम सराहनीय है। पर जब सौत बन जाओगी तो यह बात नही रहेगी। समझी?

अव्वक्के ने भविष्य का चित्र स्पष्ट किया।

सौत बनकर भी हम यह रीति निभा सकेंगी।

गुड्डमव्वे ने दृढता से कहा।

पगली कहीं की! चुप रहो। जिंदगी कोई पालना नही जहाँ आराम से सो सको। तुम सचमुच पगली हो। समझी!

-- गुड्डमव्वे पर तरस खाते हुए फिर से समझाया।

अबतक ममता भरी मन रही थी। पर कुछ न बोला थी। बहन के प्रति उसका प्रेम उमड़ पड़ा। बोली —

मां ! गुरु के कहने के अनुसार ही हो जाय। हम दोनों साथ जाएंगी। एक दूसरे का सहारा बन कर रहेंगी।

लो ! एक और पागल निकल आई। समझ रही थी कि यही एक पागल है। देखो यह सब न चलेगा। अब तो लड़के हैं। उनमें से अपनी अपनी रुचि का पसंद कर लो और आपस में यही प्रीति दूर रह कर भी निभाती हुई सुखी रहो। दोनों को एक ही घर हम नहीं भेज सकते। समझी।

अम्बकम्मे निर्णायक स्वर में दृढ़ता से कह दिया।

तब तो हम किसी को पसंद नहीं करती हमें विवाह नहीं करना है।

— दोनों के मुंह से एक साथ निकल पड़ा।

दस साल पड़ी रहो तो जानोगी।

— अम्बकम्मे ने दांत पीसीते हुए कहा।

बस हो गया। चाहे जितने साल पड़े रहना पड़े पड़ी रहेंगी। विवाह करेंगी तो एक ही घर में। नहीं तो ऐसे ही रहेंगी।

दोनों ने अपनी अभिलाषा को दृढ़ता पूर्वक बता दिया।

—अम्बकम्मे स्तब्ध रह गई। कुछ देर बाद बोली —

क्या यही तुम्हारा अन्तिम निर्णय है।

जी हां ! यही अंतिम है। यह कभी नहीं बदलेगा।

— दोनों ने उसी दृढ़ता से दुहराया।

अम्बकम्मे पर मानो आसमान ही टूट पड़ा। कुछ देर तक सिर झुकाये बैठी रही। मुख पर चिंता की रेखा खिंच गई थी।

अब तुम चली जाओ।

— दोनों उदासीनता से कहा।

वे दोनो चली गई । उनके चेहरे पर प्रसन्नता नही थी।

जब मल्लप ने यह सुना तो वज्राहत सा बैठ गया। कैसे इस जटिल समस्या को हल करें। यह टेढी खीर है। ऐसे सोचते सोचते रात भर करवटें बदलते रहे। नीद नही आई। अतिम पहर में झपकी सी आई।

मल्ल! अतिमब्बे और गुड्डमब्बे एक सिक्के के दो पहलू हैं। उनकी इच्छा पूरी करो बुरा नही होगा दोनो को एक ही वर से ब्याह दो।

नागमय्य मानो कह रहे थे। मल्लप की आँखे सहस उसके खुली। सूरज निकल आया था। धूप चढ रही थी। उठकर हाथ मुँह धोया। सीधे पप कवि के पास गया। अपनी लडकियो की नादानी और अपना स्वप्न दोनो कह सुनाया। सुनकर पपकवि का रस-सपुट खिल उठा! भाव तरग उठने लगी। ऐसी बहनें! धन्यभाग। इन्हें आँखो देखने का सौभाग्य हमे प्राप्त हुआ। तुम धन्य हो मल्लप। यह परमात्मा की लीला है। लडकियो की इच्छा के अनुसार ही करो।

खैर। लडकियो की इच्छा हो रखो क्या यह बात इतनी सीध है? सोचिए तो सही। लडकियो को मागते हुए दो सज्जन आए हैं। किसको दें और किस को नही दे? दल्लप चालुक्य साम्रज्य की नीव हैं। उधर रावजी गग साम्राज्य-लक्ष्मी के सर्वस्व हैं। इन दोनो मे से किसी का भी मन दुखाना नही चाहता। यदि यह बात नही आती तो दो लडकियाँ थी। दोनो को देकर सतुष्ट रह जाता। वह सौभाग्य मेरे भाग्य में नही बदा।

यो कहते कहते सिर पर हाथ धरे बैठ गया।

मल्लप, यह ससार है। थोडे ही सारी बातें हमारे इच्छानुसार बनेगी हमें विधि के इच्छानुसार नाचना पडता है।

अब क्या करें?

वह मैं सोचूंगा। मुझ पर छोड दो। आज भोजन के पश्चात्

कुछ रास्ता निकाला जाय। अब और किसी के कानों में इसकी भनक तक न पड़े समझे?

अतिमब्बे और गुंडमब्बे पर ही यह भार डाल दें तो —

यह ठीक नहीं! हम जान बूझकर क्यों अपने को मुकर में डालें। सीधे रास्ते से यह काम नहीं बनेगा। ऐसी युक्ति करें जिससे बुरा परिणाम न निकले और दल्लप तथा रावजी भी बुरा न मानें। तुम निश्चिन्त रहो।

इन शब्दों से पद्मकवि ने मल्लप को सान्त्वना दी।

भोजन से सब निवृत्त हुए। पिछले दिन का सा ही वैभव और सम्भ्रमपूर्ण था। अतिमब्बे और गुंडमब्बे यमल समान थीं। उन में इतना साम्य था कि कभी कभी माता पिता भी गुंडमब्बे और अतिमब्बे में गड़बड़ कर बैठते तब और लोग कैसे पहचानते! चामुण्डराय के मन में इन बहिनों को देखकर यह भाव उठ रहा था कि कैसे इनको अलग करें? यह भी सोच रहे थे कि यदि इन दोनों का विवाह एक ही व्यक्ति से हो जाय तो! यही सोचते सोचते भोजन कर रहे थे।

मल्लप के यहाँ दुपहर को यथावत बैठक हुई। सब एकत्रित हुए। मल्लप और चामुण्डराय आए और दोनों कुछ व्यस्त से थे।

मल्लप! और कितने दिनों तक यों ही खा-पीकर रह जायें? मुस्कुराते हुए दल्लप ने जिज्ञासा की।

चाहे जितने दिन। पर आप को कोई कष्ट तो नहीं हो रहा है। बप्प ने उत्तर दिया।

ऐसा भोग मिलता रहे तो कौन अभागा जाना चाहेगा? चामुण्डराय ने हँसते हँसते कहा।

तब जल्दी क्यों। कुछ दिन और ठहर जाइए।

हाँ मैं आराम करना चाहता था। इधर कई वर्षों से इतना आराम नहीं मिला था। युद्ध और कोलाहल के मारे नाकों दम थी।

यहा क्या आया, बस, सब चिताओ से मुक्त होकर निश्चित हू ।

ध्वनि में हार्दिक प्रसन्नता झलक रही थी ।

मल्लपजी अव हम मतलब की वात करे। कहिए कव विवाह निश्चित करेगे । और कहाँ करेंगे ?

दल्लप ने जिज्ञामा की।

जी हाँ ! मुझे भी लौट जाना है। वताइए लौट कर मैं माता जी से क्या कहू ?

— चामुडराय बोले ।

मल्लप पप की ओर कातर नेत्रो से देखने लगा।

राव जी, एक बडी समस्या उठ खडी हुई है

मल्लपजी ! यह क्या ? निस्सकोच वताइए न ! घरगृहस्थी की सैकडो झझटें होती हैं। क्या घर मे कुछ प्रतिकूल परिस्थिति है ?

सहानुभूति पूण आश्वासन देते हुए चामुडराव जी ने कहा।

ऐसी कोई खास वात नही । अत्तिमब्वे और गुड्डमव्वे यमज सतान हैं। साथ साथ पाली पोसी गई हैं। अब वे विछुडना नहीं चाहती।

पप ने सूचित किया।

उनकी ओर देखते समय मुझे भी यही लगा। तरस आई। आम के जोडे सी लगती हैं। इनको अलग अल्ग रहने के लिए कहना बडा कठिन काम है। पर करे क्या ? ल्डकियाँ कै दिन साथ रह सकेंगी। बिछोह उनके भाग्य मे बदा हैं। एक बात हो सकती है प्रारभ में कुछ दिन के लिए वे चाहे यहाँ या वहाँ साथ साथ रहें। धीरे धीरे ससुराल का मोह वढंगाता तब बिछोह नही अखर यह प्रकृति का नियम है।

— चामुडराव जी ने सहज डग स कहा ।

पर उनकी वात समाप्त होते ही पप जी वोले —

यह वात नही है। और जो है वह इतनी सीधी भी नही है।

लड़कियों का विचार कुछ और है। वे सोच रही हैं कि साथ साथ मैके में रह रही हैं तो ससुराल में भी साथ साथ रह सकेंगी ?

यह सुनकर वामनराव भी स्तब्ध रह गए। इस मौन में कम्पन अनुभूत हुआ। किसी ने मौन तोड़ने का साहस नहीं किया।

सच कहता हूँ, न जाने आज भोजन करते समय मेरे मन में भी क्या ऐसी ही बात उठ रही थी। सोच रहा था कि इन कन्याओं को एक ही घर पर रहने का सु अवसर प्राप्त हो तो क्या ही अच्छा होगा। इन सुभग नारिकाओं को एक साथ एक ही मंडप में एक सपाट को दिया जाय तो कैसे रहेगा! एक ही रहनी कहो फसी सी रहनेवाली इन दोनों को अपने घर की शोभा बढ़ाते देखकर कौन अपना अहोभाग्य नहीं मानेगा? आश्चर्य तो यह है कि लड़कियों का विचार भी ऐसा ही है।

वामनराव ने भावावेश में कहा। उन की मुद्रा में ऐसा मग्न रहा था कि वे इन दोनों को अपनी पतोहू बनाने पर तुले हुए हैं।

यह सुनकर दम्पत बोले

सम्पत रावजी! मैं पहले मैं यहाँ आया था।

दम्पत ने सत् सम्प्रदाय की शरण लेकर कहा।

देखिए, यहाँ आयें पीछे की क्या बात है? जिसे कन्याएँ पसंद करेंगी उसी घर में।

वामनराव बोले। उनका विश्वास था कि लड़कियाँ अवश्य उन्हीं के घर जाना पसंद करेंगी।

कन्याओं ने तुम पर ही यह भार सौंप दिया है। यों तो उनके सामने दो घर हैं। दोनों में तुम जिसे चाहे पसंद कर लो वे जाने को तैयार हैं। पर दोनों किसी एक ही से ब्याह करना चाहती हैं। मतिमञ्जु और गुणमञ्जु की बात स्पष्ट है और सीधी-सी लगती है। पर हमारी समस्या बड़ी टेढ़ी है। क्यों कि दम्पत जी भी हमारे

आत्मीय है और आप भी। हमारी लड़कियां दोनो के वात्सल्य-भाजन बनी है। और आप महानुभाव हमारे समाज के जगम हिमालय है। हमें तो कुछ नही सूझ रहा है। समस्या आप के सम्मुख रख चुके। अब आप जो भी माग निकाल दे उस पर चलने को तैयार है।

पप जी ने मल्लप की ओर से निवेदन किया।

दल्लप और रावजी दोनो एक दूसरे की ओर देखते हुए अवाक बैठ गए। दोनो की इच्छा थी कि इन कन्या-रत्नो मे अपने अपने घर की शोभा बढा लें। पर बात बडी जटिल थी। उन दोनो के जीवन में ऐसी समस्या अब तक कभी नही आई थी, क्योकि यह शक्ति और समथ्य की बात नही थी। युक्ति भी काम नही दे सकती थी। सधि-विग्रह में दोनो नामी थे पर इनकी बुद्धि यहां काम नही दे रही थी।

दल्लप जी और चामुडराव जी! आप दोनो की दुहाई है। मैं अतःकरण की बात कहता हू। आप दोनो मे मेरे मन मे किंचित् भी भेदभाव नही है। चाहता था कि आप दोनो के घर कन्यादान कर मैं कृतकृत्य हो जाऊं। पर मेरी आशा की जड कट गई। मैं आप दोनो में किसी को भी ना नहीं कह सकता। अत्तिमब्बे और गुडुमब्बे मेरी कन्याएं नही है, समझ लीजिए कि आपकी हैं। आप दोनो विचार कीजिए और जो भी निणय दीजिए वह हमारे सिर-आंखो पर होगा। केवल हम यही चाहते हैं कि आप दोनो की कृपा बनी रहे।

• मल्लप का गला रुंध गया।

मल्लप! छि! क्यो इतना व्यग्र होते हो? समस्या उठी है तो हल करना ही होगा। व्यग्र होने से थोडे ही काम चलेगा। हम पपजी पर यह भार छोड देना चाहते हैं। वे ही मार्ग-दशन करें। वे वयोवृद्ध है और ज्ञानवृद्ध भी। उनकी बात मान ले। कम से कम मैं सहर्ष उनका निणय स्वीकार करूंगा।

चामुण्डराय जी ने अपना निश्चय सुनाया।

स्वरूप को भी यह बात पसन्द आई।

पप ने नहीं सोचा था कि निर्णय देने का भार उन पर आ पड़ेगा। अतएव क्षण भर मन ही मन विचार करते रहे। बोले —

यह मेरा सौभाग्य है कि आप महानुभावों ने मेरा विश्वास किया है। इस के लिए मैं सदा आप का ऋणी रहूँगा। अब मेरा सुझाव है कि ——

पप की बात रुक गई।

कहिए, कहिए— एक ही स्वर में चामुण्डराय और स्वरूप बोले।

पप ने अपनी सलाह सुनाई। दोनों ने स्वीकृति दी।

तब पप जी ने चामुण्डराय और स्वरूप का नाम अलग अलग पुर्जों पर लिखा। एक सा मोड़ा और एक कटोरी में शान्तिजिनेश के सम्मुख रख कर पूजा कराई। उस कटोरी को ढक कर खूब हिलाया। फलफूल से उस की भी पूजा की। स्वरूप और चामुण्डराय ने श्रद्धा भक्ति के साथ उस पर फूल चढ़ाए। तीन साल का एक बालक बुलाया गया। उसने कटोरी से एक पुर्जा उठाकर पुरोहित जी के हाथ में धर दिया। पुरोहित जी ने उसे खोलकर सब को दिखाया। उस पर स्वरूप का नाम लिखा था। दैव ने स्वरूप का साथ दिया।

स्वरूप ही भाग्य-परीक्षा में सफल हुआ।

चामुण्डराय ने खिन्न होकर स्वीकार किया।

राजजी अब दैव ने इन दोनों कन्याओं को मुझे दे दिया है। अब इन पर मेरा अधिकार है। आप खिन्न न हों। अब भी क्या बिगड़ा है? आप की प्रसन्नता के लिए मैं इन दोनों को आप को सौंप सकता हूँ। आप खिन्न न हों। आप सहर्ष मेरे प्रस्ताव स्वीकार कीजिए।

स्वरूप ने निवेदन किया।

दल्लप की उदारता से चामुडराव की खिन्नता दूर हुई। बोले--

दल्लप जी, हमे दैवेच्छा के सामने सिर झुकाना ही पडेगा । व्यक्तिगत लाभ-अलाभ की बात अलग है। पप देव के सामने, इस उम्र में कैसे झूटा निकलूं? असभव है । और एक बात है। नागमय्य की पोती मेरी भी पोती है। पतोहू न बन सकी तो क्या हुआ? मैं चाहता हूं ये दोनो सुखी रहे। अधिक क्या कहूं ? आप भाग्यवान है।

चामुडराव की बातो मे सच्चाई की झलक थी।

दल्लप ने दोनो हाथ जोडकर उनको प्रणाम किया। यह निश्चय हुआ कि अतिमब्बे और गुडुमब्बे का विवाह दल्लप के एक मात्र पुत्र नागदेव से हो। चारा ओर चामुन्डराय का गुणगान होने लगा।

४

इस विवाह मे मल्लप अपनी सारी सपत्ति पानी की तरह बहा देने को तत्पर था। पोन्नमय्य की अपनी सतान नही थी। वह स्वभाव मे भी बडा उदार था। अव्वकब्बे की सपत्ति भी कुछ कम नही थी। इस के अतिरिक्त नागमय्य ने पोतियो के नाम पर काफी सपत्ति रख छोडी थी। मतलब यह कि ... मे जो दहेज की बात उठा करती है वह वहाँ उठ ही नही सकी।

विवाह की तैयारी इस पैमाने पर हो रही थी कि ... महाराजाओ के यहाँ भी कदापि सभव नही हो। सारा पुगनूर विवाह मडप बन गया था। हाट बाट सब वदनवार से शोभित हुए। कस्तूरी, केसर, चदन आदि सुगध द्रव्य से सारा वायुमडल महक उठा। प्राय जगल में एक भी वृक्ष या एक भी फूल नही बचा होगा क्योकि पुगनूर की सजावट में सब खप गए थे। खभे के स्थान मे सुपारी के

पेड़ बनाए गए थे इन पर पान की लताएँ भी लगाई गई थी। देखने में ऐसा लग रहा था मानो किन्नर ही स्वर्ग से इस विवाह के ही उपलक्ष्य में यह मण्डप तैयार कर रहे हों। जगह जगह आम के पेड़ और शिव ऐसी शोभा दे रहे थे मानो कामदेव रति-वसंत के साथ आ पधारे हों। इन पर लगी हुई मधुरकलिकाओं में दाम्पत्य जीवन का आदर्श व्यक्त हो रहा था। आम-से वट अवसर पाकर लताएँ इठला रही थी। वसंतलक्ष्मी की शोभा वर्णनातीत थी। रंग बिरंग फूलों को इस ढंग से सजाकर रखा था कि वहाँ सदा ही वसंत का भ्रम बना रहता था। फूलों की सजावट में कई विचित्र विचित्र आकर्षण थे। अधिक क्या, कहें जहाँ वहाँ सजीव हो रही थी। इन फूलों के मकरंद से आकृष्ट मधुमक्खियाँ जगह जगह छत्ता बनाकर मंडरा रही थी। और इन के द्वारा एकत्रित मकरंद की महक से वायुमंडल का प्रत्येक अणु सार्थक हो रहा था। इन की गुंजन से सारा वातावरण मधुर और सरस संगीत मय बना हुआ था। विवाह मंडप की बात कौन कहे ! कर्णाटक के प्रसिद्ध कलाकार उसके निर्माण में लगे हुए थे। रत्न-जड़ित शिला से मंडप बनाया गया था। कर्णाटक की सारी कला और कमनीयता का वह अनुपम नमूना था। प्राय इंद्र का सभा भवन भी इस के सम्मुख कम ही आकर्षक रहा होगा।

विवाह शुभ मुहूर्त में सम्पन्न हुआ। कैलाशगिरि चंपापुरि पावापुरि, सम्मेद शिखर तथा ऊर्जयन्त जैसे पवित्र तीर्थों से जिनगंधोदक मंगवाया गया। वधू वर की शोभा देखनेवालों को विस्मय होकर विधाता की कौशल पता था क्योंकि उसने दो ही बनाये थी थी। कामदेव के दाहिने में रतिमय और बाँए में कुसुमके विराज रही थी। नागकन्याओं के समान इन कन्यारत्नों को सजाया था। जब सौंदर्य का अवलोकन हो तो रसराज का प्रवाह क्यों न उमड़े? कलाविद शिंगार से ये दीप शिखा सी जग रही थी। कामदेव की आँखें एक ओर गुणमणि को दूसरी ओर बनिमणि को

देखकर खिल उठी। ज्योतिलना-सी शोभायमान् इन कन्याओं की कान्ति ने दीपशिखा को मलिन कर दिया था।

पप कवि ने चामुडराव से कहा —

देखिए। आदि देवजी के भी दो रानियाँ थी। ये दोनो यशस्वती और सुनन्दा सी लगती है। बीच में बैठे हुए यह नागदेव साक्षात आदिदेव लगते है!

कवि चक्रवर्ती जी! क्या ही अच्छा होता यदि आप इनको देखने के बाद आदिपुराण की रचना करते। उनको भी यमज सतान बना सकते थे।

— चामुडराव ने हसते हुए कहा।

उधर दल्लप की पत्नी पद्मब्बे जक्कब्बे से बोली।

— तुम धन्य हो बहन! न जाने कितने जन्मो का सुकृत-फल इस रूप मे प्राप्त है। तुम बडी भाग्यवती हो।

पर बहिन आज से हमारा भाग्य समाप्त समझो। इन चादनी की पुतलियो को केवल तुम्हारे घर की शोभा बढाने के लिए ही इतने दिनो तक मैंने धरोहर के रूप मे रख लिया था। अबतक जो कुछ हमारा था वह सब तुम्हारा बना।

जक्कब्बे की आँखें बरसने लगी।

यह क्या? रो रही हो बहन! मगल अवसर पर आसू बहाना नही चाहिए। जब चाहो तब इन्हे भेज दिया करेंगे। आप की चादनी की पुतलियो पर ठडी हवा का झोका तक लगने नही देंगे। हमारे आँगन की शोभा बढाने के लिए तुम्हारे यहा से इस दीपशिखा की जोडी लिए जा रहे है। इनकी लौ कभी मद नही पडेगी!

पद्मब्बे ने सन्तोष की साम ली।

फिर भी हम अभागो की ये ही सताने थी। अबतक हमे सतान-हीनता नही अखर रही थी जब सचमुच हम अभागे बने।

का गर्भावास प्रारम्भ हुआ। तब देवगणो ने अव्यक्त रहकर ऐरादेवी की सेवा की थी। महल मे प्रतिदिन सुवर्णवृष्टि होने लगी थी। नव मासो के पूर्ण होते ही ऐरावती के गर्भ-सुधाब्धि से शातिनाथ भुवि पर अवतीर्ण हुए। ईश के दर्शन के लिए देवगण इस पृथ्वी पर उतर आए और उन्होने जन्माभिषेक महोत्सव मनाया। धीरे धीरे शाति देव का शैशव और बाल्य समाप्त हुआ। यौवन में पदार्पण करते ही शातिनाथ नव मन्मथ से मोहक दिखाई देने लगे। हजारो कन्यारत्न उनके पदतल पर आ लुटे। शान्तिनाथ ने दिग्विजय करके छओ खडो मे अपना सिक्का जमाया। इस उपलक्ष्य मे वृशभाचल पर विजय स्तभ पर विजयगाथा लिखवा ने का सकल्प करके जैसे ही वहा गए तो वहा तल से लेकर चोटी तक पूर्ववती चक्रेशो की विजय गाथाए पाई। एक ओर आश्चर्य हुआ। दूसरी ओर मन मे यह विचार उठा कि आखिर मैने कौन सा बडा कार्य किया है। मेरे पूर्ववती राजा-महाराजाओ ने यह कर ही दिया था। ऐसा विचार कर बिना अपनी विजयगाथा खुदवाए लौट चले।

इस घटना का बडे सुदर ढग से पोन्नकवि ने वर्णन किया।

शातिनाथ चक्रवर्ती के रनवास मे कोई छियानवे हजार ललनाएँ थी। शातिनाथ चतुर्दश रत्नो के अधिनायक थे और षट्खड के शासक। इस महानुभाव को पूर्व पुण्य से दश विध भोग प्राप्त था। महाकवि ने इस का ऐसा रोचक वर्णन किया कि श्रोतागण फूले नही समा रहे थे। शीतल महासागर के बीच मे जिस प्रकार उष्णोदक का प्रवाह बहता रहता है उसी प्रकार शातिनाथ के जीवन के रासरग की नसो मे ही विरागभाव भी छिपा हुआ था। सम्यग्दृष्टिवाले पोन्न महाकवि ने इस का बडा मार्मिक वर्णन सुना दिया।

एक बार जब शातिनाथ दर्पण मे मुख देख रहे थे तब उनके मन मे अपने जन्मजमान्तरो की स्मृति जाग उठी। समुद्र

वराजमान हुए। इस का वणन सुनते सुनते श्रावक इतने खिल उठे मानो स्वय भी सिद्धशिला के दर्शन कर चुके हो और अलौकिक आनद का आस्वादन करते हूए रोमाचित हो उठे।

विवाह समारोह मे सम्मिलित सुमगली-वृन्द को भेंट के रूप में अत्तिमब्बे और गुडुमब्बे ने शातिनाथ पुराण की प्रतियाँ दे दी कोई सौ एक प्रतिलिपियो बनी थी, अतएव सब को प्रतियाँ नही मिल सकी। जिन्हे प्रतियाँ नही मिली वे अत्यत उदास दिखाई दे रही थी। उन के उतरे हुए चेहरे को देखकर अत्तिमब्बे और गुडुमब्बे भी खिन्न हो उठी। मल्लप ने यह सहा नही गया। उन्होन सब के सम्मुख हाथ जोडकर निवेदन किया कि कृपया कोई निराश न हो। शीघ्र ही हजारो प्रतिलिपियाँ कराई जाएँगी और प्रत्येक के घर भेजी जाएगी।

यह देखकर और सुनकर पप कवि की आत्मा फडक उठी वे कहने लगे —

अत्तिमब्बे और गुडुमब्बे कर्नाटक-जननी की दो आँखें है।

अपनी कृति की, अपनी आँखो के सामने ही हजारो प्रतिलिपियाँ बनते देखकर पोन्नकवि फूले नही समा रहे थे।

अत्तिमब्बे और गुडुमब्बे दोनो ने सब सुहागिनो के आँचल को मोती और हीरो से भर दिया। इनके भाग्य से अक्षय धनराशि प्राप्त थी। अत करण उदार था। इस अक्षय पात्र को रिक्त करने मे उदारमन असमर्थ बन गया कि फिर भी ये दानचितामणि कहलाई। इन का अतरग समवसरण से अकित था अतएव ये सम्यक्त्व चूडामणि कहलाने लगी।

५

फलो से सजी हुई थाली लिए जब अपनी प्रियतमा को कमरे

दोनों के माथे पर पुछवा दूँगा ?

—नागदेव ने अपनी बात स्पष्ट की।

हमें हिसाब पढ़ाने के लिए एक ओझाजी आया करते थे। अपने विषय के नामी पंडित थे। हमारा अहोभाग्य है ऐसे विद्वान के चरणों में बैठकर गणित शास्त्र पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त था। हमारे घर पर एक बहुत ही सुंदर बिल्ली थी। उस बिल्ली और उसके बच्चों को हमने प्यार से पाला था। जब कभी हम गणितशास्त्र पढ़ने बैठती तब वे आकर मियाँ-मियाँ कहते ऊधम मचा देते थे। एक दिन ओझा जी को इतना क्रोध आया कि तुरत बढ़ई को बुलाया और दरवाजे में दो छेद बनवा दिए – एक बड़ा और एक छोटा। दूसरे दिन हमने ओझाजी को प्रसन्न देखकर पूछा कि क्या एक ही छेद से काम नहीं चल सकता था ? उस पर बोले– देखो तुम अभी अक्ल की हो। क्या इतना भी समझ में नहीं आती कि बड़ा बड़ी बिल्ली के लिए है और छोटा छोटों के लिए है। उसकी गंभीरवाणी सुनकर हम अपनी हँसी नहीं रोक सकी थी फिर भी किसी तरह हँसी बंद कर बोली—

क्या पंडित जी ! बड़े छेद से छोटे नहीं निकल सकते ?

इससे पंडित जी का चेहरा तमतमा उठा। बोले– क्या मुझे मूसरचंद मानती हो ? देखो चाक्रम्य चक्रवर्ती ने मुझे गणितशास्त्र पारंगत माना है और सम्मान दिया है। ऐसा कहते हुए अपने जेब से सुवर्णपदक निकाल कर दिखाया। चेहरे से उनका आत्माभिमान टपक रहा था। वे बोल ही रहे थे कि एक बात हो गई। बड़ी बिल्ली बड़े छेद से कमरे के बाहर चली गई और उसके बच्चे उसी छेद से माँ के पीछे चल पड़े। फिर उसी प्रकार आकर मेरी गोद में खेलने लगे। हम अपनी हँसी नहीं रोक सकी पर ओझाजी आपे से बाहर हो गए। बोले— वे भी मूर्ख हैं और तुम भी हो ! मेरा मतलब ही उनकी समझ में नहीं आया तो क्या करूँ — कहते कहते घर चले गए।

कहानी सुना कर मुस्कुराते बैठ गई।

तुम्हारे ओझाजी का व्यावहारिक ज्ञान थोथा था।

—नागदेवने ओझा जी की मूर्खता पर तरस खाते हुए कहा।

खैर, वे इस दृष्टि से कुछ भी हो, पर आप तो व्यवहार कुशल हैं?

— फिर मुस्कुरा उठी।

इस क्षेत्र में कौन मेरे टक्कर का है?

बिलकुल सही बात है। इसी लिए तो आपने दोनो के माथे पर नाम खुदवाने की योजना बनाई है?

कुछ तो करना ही था। अगर यह बन जाय तो दोनो को पहिचानने में बिलकुल दिक्कत नही रहेगी।

— नागदेव ने दृढता से दुहराया।

जी, क्या एक के माथे की खुदवाई मे दोनो को पहिचानते नही बनता?

कैसे? बताओ तो सही?

खूब! खूब!! आप हमारे गणितशास्त्र विशारद के बडे भाई साहब है!

यह बात सुनते ही नागदेव को अपनी बेवकूफी समझ में आई। खुद हँस पडे। तब तक दसरी भी आकर उसकी बगल में बैठ गई। नागदेव के आनद का पारावार उमड ने लगा। सौंदर्य-राशि के बीच में अपने को पा, फूले नही समा रहे थे। एक को देखने के लिए दो नेत्र कम थे तब दोनो के सौदय देखे कैसे? दोनो ललनाओ ने महीन साडी पहनी थी। ऐसा लग रहा था मानो नन्ही सी लताएँ चादनी के परिधान मे इठला रही हो। दोनो चादनी को साचे में ढालकर बनाई गई पुतलियो सी लग रही थीं। नागदेव के दोनो हाथो में सौंदर्य की दो पुतलियाँ थी। कस्तूरी पर सान चढाए कुसुम-शर के समान ये दोनो कुसुम कोमल लतागिनियाँ थी। अत्तिमब्बे और गुड्डमब्बे के

साथ नागदेव ने ... सभी ... पिय ... ताम्रमान ... । ... कन्या है। ... तक सरकनेवाली इन की नागवेणी ने ... नागदेव को मोह रखा था। उन दोनों ने नागदेव को लय रमाया। दोनों जब नागदेव के कंधों पर ... कर बैठ गईं तो नागदेव दोनों के सिर पर अपनी अंगुली फेरने लगे ... पुलकित हो उठे और वे भी आपाद-मस्तक सिहर उठीं।

६

विवाह के पश्चात् एक महीना बीता। मन्मथ ने उनके आमोद को आग्रह-पूर्वक घर पर ठहरने के लिए राजी कर लिया था। इधर ललितमुखी और मुग्धमयी नित्य नए नए ढंग से उनकी रागरेलियों में रस बढ़ा रही थीं। इस विद्या में दोनों में होड़ लगी हुई थी। पति के साथ हर बात में प्रतिस्पर्धा करती हुई दोनों रमणियों ने उन्हें अपने हृदयेश्वर बना लिया। कभी पति के साथ वन विहार करतीं और कभी जल-क्रीड़ा करतीं जिस से कि उनका प्रणय सूखने न पाये। इन प्रणय रसिकाओं ने एक बार धनुष से ऐसी टंकार निकाली थी जिससे नागदेव का साहस भी पस्त हो उठा था। इसी प्रकार दोनों कृपाण-हस्त होकर अपनी विद्या दिखाने लगीं नागदेव को ऐसा लगा कि ये देवियाँ तलवारों की छांह में खड़ी होकर उन्हें बुला रही हैं। जब कभी दोनों वीणा के तारों से विविध स्वर छेड़तीं तो नागदेव फूले नहीं समाते थे। उनके कण्ठ से निकलनेवाली स्वर लहरियाँ मल्लिका कुंज से छिपक कर आनेवाली ठंडी हवा सी घुमड़ पड़ती थीं। वे इस प्रकार मल्हारें छेड़तीं मानो पारिजात की जड़ हिलाकर चारों ओर

दामाद जैसा करा के कोना तक नहीं था। नव दंपतियों का रसरंग अभी दिन दूना रात चौगुना बढ़ रहा था। ऐसे समय में पुन्नमम्म की मांग आई। विवाह मंडप में ही आरती उतारी गई। मल्लप्प ने पिता को खो दिया था अब भाई से भी वंचित हो गया। अपने को असहाय समझने लगा। मल्लप्प के लड़कों के लिए पुन्नमम्म पिता से भी बढ़कर प्यारे थे। अब वे रो रहे थे। पुन्नमम्म मल्लप्पको का देवर था। पर उनमें भाई बहन का-सा प्रेम था। उस के शोक का पारावार प्रक्षुब्ध हो उठा। कौसल्यम्म शिशु-सी रो रही थी। छाती पीट पीट कर रो रही थी। अत्तिमब्बे और गुंडमय्य फूलों की शय्या से उठकर बाहर आई। आते ही इन्हें यह जानकर दुःख झेलना पड़ा। उन पर मानों वज्र ही टूट पड़ा। गौरवपूर्ण पद प्रतिष्ठाओं को भोगकर परिणाम आँखों देखा गया। वे सोच रही थी कि गरीब भी मरते हैं पर उनकी मृत्यु सहज होती है। पर पद प्रतिष्ठा प्राप्त व्यक्ति भी मरते हैं कहाँ? कैसे? और कब? — यह कहना कठिन है। उनको अकाल में ही मौत आ जाती है। यह कैसी विडंबना है। वे रो रही थी। उन नन्यावों का रोना सुनकर पत्थर भी पिघल जाता। स्वभावतः दुःख संक्रामिक होता है एक का दुःख दूसरे का दुःख बढ़ा देता है।

नागदेव अपनी प्रेमसियों के दुःख से दुःखी थे। वे भी आँसू बहा रहे थे।

पुन्नमम्म भी विदा हो गई। कौसल्यम्मे सहगमन की तैय्यारी करने लगी।

क्या बहिन हमें छोड़कर चले जाओगी?

— कौसल्यम्मे को छाती से लगाकर अत्तिमब्बे शोक कातर हुई।

दीदी! मुझसे कोई अपराध हुआ हो तो क्षमा कर देना।

कौसल्यम्मे निर्विकार चित्त से विनती कर रही थी।

बहन ! तुम सचमुच मेरी सगी बहिन ही थी। मुझसे कुछ अपराध हुआ हो तो क्षमा करो। भूल जाओ।

अव्वकव्वे का गला रुध गया। दुःख अपार था।

अत्ति ! विदा दो।

इतना कहते कहते कौसलव्वे का गला बैठ गया। आगे बोल नही सकी।

मां ! क्या हमे अनाथ छोड दोगी ? हमे ससुराल भेज देने तक कम से कम रह जाओ।

— अत्तिमव्वे ने रोते रोते प्राथना की।

गुड्डू तुम्हें तो छोडते नही बनता। पर क्या करूँ ?

— कहते कहते कौसलव्वे चटपटाने लगी।

चाची ! दादा के बाद तुम ही हमारे लिए सर्वस्व थी। अब हमें अनाथकर जाना चाहती हो !

— कह गुड्डुमव्वे रो पडी।

मल्लप की अन्य सतानो ने भी ऐसे ही दुख शोक मे चाची को विदा किया।

चिता पर पुन्नमय्य की पार्थिव देह धरी गई।

मल्लप ने अग्निस्पर्श करा दिया। सूखी लकडी धाँय धाँय कर जल उठी। कौसल्यव्वे ने चिता की परिक्रमा की और हँसते हँसते उस पर चढकर पति की बगल मे गलबाही देकर सो गई। चिता की लपटो ने थोडे ही समय में सति-पति के दोनो शरीर को स्वाहा कर दिया।

अत्तिमव्वे और गुड्डुमव्वे ने समझा कि नारी-जीवन का अर्थ आँसू है। अभी विवाह की हल्दी सूखी तक नही थी दोनो ललनाओ को स्त्री जीवन के भयकर परिणाम से अवगत होने का मौका आ पडा। दादा के मरण से ही दोनो खिन्न थी। उसे किसी तरह भुलाने का प्रयत्न कर रही थी कि चाचा की मौत हो गई। इसने भी भयकर

था मार्च का महीना। दादा ने दाना-पानी छोड़कर मृत्यु का स्वागत किया था। अब तो भाभी को हमने हँसते उनकी चिता पर चढ़ते देखा। इनसे यह सहा नहीं गया और जब भाभी को राक्षस के उदर से ये आग बढ़ी तब और लोगों ने इन दोनों को झगड़कर पकड़ लिया। ये कुछ नहीं कर सके।। एक को धर्म के नाम पर मरते देखा था तो दूसरे को सम्प्रदाय के नाम पर। क्या मौत जिन्दगी से भी प्यारी है!

७

चूड़ियाँ प्यारी चूड़ियाँ! लाल पीली काली नीली चूड़ियाँ। सुहागिनियों की सुहाग बढ़े — चूड़ियाँ।

यह ध्वनि सुनकर पद्मश्री ने नौकरानी को भेजकर चूड़ीवाले को बुला लिया।

कहाँ के रहनेवाले हो?

यह प्रश्न सुनते ही चूड़ीवाले वृद्ध ने कंधे से अपना बोझ उतारा। लम्बी साँस छोड़ी और वहीं बैठा। बगल में बहुत बड़ा झोला लग रहा था।

क्या बहुत दूर से आए हो?

— पद्मश्री ने फिर प्रश्न किया।

जी हाँ पेट के वास्ते आना पड़ता है।

— उस गरीब ने उदास हो कर कहा।

मेरी बहुओं को चूड़ियाँ चाहिए। पहले आराम करो—

कहती हुई पद्मश्री ने छाछ मँगा कर पीने दिया।

बूढ़े को बड़ा आनन्द हुआ। उसे पीकर असीस दिया

मा ! तुम्हारा घर फूले फले । सदा जश रहे ।

तब तक पद्मव्वे ने अन्दर की ओर आवाज दी । नौकरानी ने बिछाए गए मखमली दरी पर अभिमन्यु आ बैठी । उस के हाथ में किसी तेल की दो चार बूंद डाल कर अच्छी तरह मल लेने की सलाह दी गई । उस सर-सुंदरी का हाथ अपने हाथ में लेकर खूब मल मल कर मुलायम किया । हाथ पर ठीक बैठनेवाली चूड़ियाँ छान कर रख दिया । उसके पसंद की चूड़ियां को लेकर चढ़ाने लगा । एक साथ चार चार चूड़ियाँ चढ़ाता था । और मन बहलाने के लिए इधर उधर की बातें भी खूब कर रहा था । यों ही सहज कोमल हाथ पर औषधि मिश्रित तेल डाल देने से और भी कोमल बने थे । चूड़ियां चढ़ा देने में कोई कष्ट नहीं हुआ । हाथ भर चूड़ियां पहनाई ।

देख ! इन दिनों में कैसी चूड़ियां बनती हैं । घड़ी दो घड़ी भी हाथ पर नहीं टिकती ।

पद्मव्वे ने कहा ।

लेकिन माँ जी, मेरी चूड़ियां ऐसी नहीं होतीं । देख लीजिए । — सेट्टी ने उत्तर दिया ।

हाँ, ऐसे ही तो हर कोई कहता है और पैसे ले जाता है । — पद्मव्वे ने अनुभव की बात बताई ।

इस बार परीक्षा कर देखिए । पहली बार मैं यहां आया हूँ ।

कहाँ से आ रहे हो ?

बहुत दूर से । क्या जमखंडी का नाम सुना है ? उसके पास मुदुवोळलु नामक गांव है — वही मेरा जन्मस्थान है ।

ओहो ! दूर से आए हो ! क्या चूड़ियाँ ढोकर इतनी दूर पैदल आए हो ?

ढोकर तो नहीं आए । हमारे पास एक बैल है । उस पर चूड़ियाँ लादी जाती हैं और हम तीन आदमी उसके पीछे पीछे जाते हैं ।

— कहते कहते अत्युत्तम चूडियां चुनकर चढाने लगा।

सुनो, आज शाम का भोजन हमारे यहाँ करो। अपने दोनो लडको को भी साथ बुला लाओ।

— पद्मव्वे ने न्योत दिया।

आप कितने अच्छे लोग है! आप ही के यहाँ मेरे दुर्भाग्य ने मुझे झूटा ठहराया। खैर भाग्य का फेर है!

— जिनवल्लभ की ध्वनि मे आत्मग्लानि थी।

गुडुमव्वे चूडियाँ धर चुकी थी।

शाम को आओगे न? कहते हुए पद्मव्वे ने दाम दिया।

भला आप की आज्ञा टाली जा सकती है?

कहते कहते जिनवल्लभ जाने लगा। और रुककर बोला —

आपने दुगना दाम दिया है। जो टूट गई टूट गई, उनका दाम मै कैसे लू। धम-कम की बात तो सोचना चाहिए।

आधा दाम लौटा दिया। तब पद्मव्वे बोली —

रख लो। यह चूडी टूटी नही यह दोनो यमज संतान हैं।

क्या सच है! मैं तो बिलकुल नही पहिचान सका। या आप की भानजी हैं?

— बात काटकर जिनवल्लभ ने पूछा।

मेरे पुत्र नागदेव की बहुए हैं।

क्या दोनो सौत है?

जी हा, हम अपने पुत्र के लिए कन्या मागने गई। हम इन में से एक को भी पाकर संतुष्ट रहते। पर भाग्य ने दोनो दिया। बात यह हुई कि दोनो बहिनो का आग्रह था कि हमारे पुत्र से ही विवाह करें। मेरा मन इनका परस्पर प्रेम देखकर पिघला और हमने स्वीकृति दे दी। हमारा बेटा कभी हमारी बात का उल्लंघन नही करता। ये सचमुच सोने की पुतलियां है और हमारी आँखो के तारे। मेरी बहू

नहीं बेटी है बेटी।

इस प्रकार पद्मश्री ने स्त्री-स्वभावानुसार छोटा सा भाषण ही दे डाला।

माँ जी आप का महाभाग्य है! पद्मावती और सुनन्दा सी बहुएँ मिली हैं।

— कह कर वह बूढ़ीवाला चल पड़ा। उसका मन आश्चर्य चकित था।

सूर्यास्त से घड़ी भर पूर्व ही जिनवल्लभ अपने दोनों बेटों के साथ वल्लभ के यहाँ आया। वल्लभ इनकी प्रतीक्षा कर रहा था। यद्यपि वल्लभ महामात्य था, अधिकार का मद इनके सिर नहीं चढ़ा था। मानवोचित गुणों से हाथ नहीं धो बैठा था। अपनी सब सुविधियों की बात रहने दीजिए, कोई भी अतिथि भोजन के समय आता तो उसके साथ ही भोजन किया करता था। यदि अतिथि धर्म भाई भी होता तो उसके साथ पंक्ति में खाए बिना नहीं छोड़ता था। पद्मश्री पति के योग्य पत्नी थी। पति की मानवीयता का पोषण बड़े यत्न पूर्वक करती आई थी और अपने घर को सुसंस्कृति का केन्द्र बनाने में कोई कसर आने नहीं देती। बहुएँ तो मानो वे तो रत्नवृष्टि करानेवाले नागमण्य की पोतियाँ थी। ज्ञानदा की पुतलियाँ थी।

आओ जिनवल्लभ!

— वल्लभ ने चिरपरिचित से उनका स्वागत किया।

तीनों ने हाथ मुँह धोया। जैसे ही हाथ मुँह धोकर स्नानागार से बाहर आए तो देखा कि वल्लभ स्वयं तौलियाँ लिए सेवा में उपस्थित है। महामात्य की इस सज्जनता ने जिनवल्लभ पर गंभीर प्रभाव डाला।

क्या यह दोनों तुम्हारे पुत्र हैं? — वल्लभ ने प्रश्न किया।

जी हाँ यह जो बड़ा लड़का है पाचम्य है और यह छोटा एक।

ये ही दो संतानें हैं या और भी हैं?

जी ! इन दोनो के बीच का एक घर पर ही रह गया है।

— जिनवल्लभ ने कहा ।

राचय्य आजानुबाहु और गठीला बदन का था । रन्न केवल तेरह वर्ष का तरुण था। चेहरा बडा आकर्षक था। उस पर ध्रुवतारा से दो नेत्र चमक रहे थे। ये तीनो गरीब अवश्य थे पर दीनता उन्हें छू तक नही गई थी। इस कारण से स्वाभिमान उन में कूट-कूटकर भरा था।

दल्लप तीनो को घर के अदर ले गया। एक साथ भोजन करने बैठे। सोने की थालियो में खाना परोसा गया था। ज्वार के सफेद फुलके और कई प्रकार की साग-सब्जियाँ परोसी गई । अत्तिमब्बे ने जब ताजा घी परोसा तब भोजन प्रारभ करने की प्रार्थना की गई। सब भोजन करने लगे। ऐसा राजभोज पाकर रन्न अत्यत प्रसन्न हुआ था। उसके आनद को कौन कहे ? फुलको के बाद बढिया भात और रस परोसे गए । और उस पर दो चमच घी दिया गया। सब चुपचाप खा रहे थे।

रन्न को यह रस तीता लगा। एक बार रन्न के मुंह से सहसा ची ची शब्द निकला। तुरत अत्तिमब्बे आई और वात्सल्य भरे स्वर में पूछा —

कहो भैय्या क्या चाहिए ?

जीजी ! रस कुछ तेज लगता है। मुझे और कुछ घी दे दो।

निस्सकोच भाव से रन्न ने घी माँगा।

जिनवल्लभ को यह बुरा लगा। अपमानित सा आहत होकर रन्न की ओर कुछ क्रोध पूर्ण भाव से घूरने लगा। दल्लप ने उसे ताडा। अत्तिमब्बे तब तक घी लिए आई।

दल्लप ने उससे कहा—

देखो बेटी ! बडो के साथ बच्चो को नही परोसना चाहिए। बच्चे निरातक भोजन नही कर पाते। इस बच्चे को साथ ले जाओ

और अन्दर ही खिलाओ।

मणिमञ्जरी अब उठ स्नेह से रत्न का हाथ पकड़कर अन्दर ले गई। कामधेनु के पीछे चलनेवाले बछड़े के समान यह रत्न चला। रसोई घर में उसे बिठाया। वहीं उसका चौका लगा। वह देखता क्या है चारों ओर तरह तरह की मिठाइयाँ सजाकर रखी गई हैं। एक बार चारों ओर देखा। इतना खुश हुआ मानो कल्पवृक्ष की छाया में बैठा हो। मणिमञ्जरी के हृदय में सहज ही मातृवात्सल्य उमड़ रहा था। वह पास ही बैठकर अपने हाथ से मधुपर्क पर ग्रास सजाती हुई खिलाने लगी। बीच में एक बार जिज्ञासा की —

क्या तुम्हारा नाम क्या है?

मेरा नाम रत्न है। पर प्यार से माँ रतन कहती हैं।

— बड़े ठाठ से जवाब दिया।

अच्छा! रत्न, रत्न ही बहुत सुन्दर नाम है।

— मणिमञ्जरी ने कहा था। और प्यार से बोली — भैया शरमाओ नहीं। जो चाहो खाओ। लाड़ू पूरी पिरोटी पकौड़ा आदि यहाँ जो कुछ है उसमें जो चाहो निस्संकोच खाओ। भैया अब क्या दूँ?

रत्न को कुछ नहीं सूझ रहा था। अपने घर में अबतक ज्वार की रोटी के सिवाय और कुछ भी खाना नहीं देखा था। उसमें केवल कभी नमक की चटनी बनती थी सो भी कभी कभी। दूध दही आदि का नाम सुना अवश्य था पर खाया नहीं था। आज अपने सामने अपरिमित भाँति के पकवानों का ढेर देखा। क्या खाया जाय? पता या तो बेचारा क्या ले क्या नहीं ले! समझ लीजिए उस समय रत्न की दशा ऐसी ही थी जैसे मानो रत्नों की राशि के पास गरीब पहुँच गया हो और उसे जो चाहे ले जाने की अनुमति मिली हो।

क्यों चुप हुए? माग लो जो चाहे।

अत्तिमव्वे ने प्यार से फिर फुसलाया।

तुम जो अच्छा समझो खिलाओ बहन।

-- रन्न ने सहज ही उत्तर दिया।

अत्तिमव्वे उसकी मनोभावना से अवगत हुई। गुडुमव्वे से बोली-

देखो बहन, सब पक्वान्नों को थोडा थोडा चखा दो, बाद को जो भी पसद करे खिला देना।

दूसरे कमरे मे एक थाली भर मिठाइयाँ आई। इनकी ओर देखते ही बनता था। क्या ही बढिया सजावट थी। रन्न के मुग्ध चेहरे पर निष्कलक आभा चमक रही थी जिसे देखकर गुडुमव्वे प्रभावित हो उठी।

जीजी! यह कितना सुदर है देखो।

कहती हुई बैठ गई और प्यार से एक एक का नाम और स्वाद बता बताकर खिलाने लगी। इन दोनो स्त्रियो को अपनी औरस सतान को खिलाने का-सा आनद मिल रहा था। उनका अतृप्त मातृत्व आज कृतकृत्य हो रहा था। इधर रन्न भी खूब खाकर अघाया। अपनी जिंदगी मे इतना घी कभी नहीं खाया था। इतना दूध भी नहीं पिया था।

रन्न तुम क्या [illegible] रहे हो?

अत्तिमव्वे ने सहज ही प्रश्न किया। यह बात कानों पर पडी कि नहीं रन्न की आँखों से आँसू उमड पडे। दो-एक बूँद गालों पर भी पडी जिन्हें अत्तिमव्वे ने देखा। वह चौंकी। जो कल्पवृक्ष पर चढे हुए से आनन्द मग्न था, वह एकाएक वहाँ से फिसलकर गिरे हुए सा रोने लगा! [illegible] क्या बात है? क्या [illegible] रहा है? अत्तिमव्वे [illegible]। [illegible] आवाज [illegible] उसने [illegible] था। —

र्वत ही अपनी बीबी फ म ाप ता त । न गुन्माय के म ह ग निकला —

बीबी ! तुम न्स ग्यार औ बाम्नी । ।। रम न्हो । म तुम्हार साथ चली । चाह । कह कह द ।

गु मा यत कही । म तप इन्हे लिता म रह महली मि हम न्क को नहीं छोड द ।

बावन मन का शान्त न दिया ।

तब तो न्म मास की ग कह द । न्हे पहन की उम्रयाम एोर छाँ सडक । वाम म लगा तो बना अन्याय हागा ।

गुरूमबा न रहा ।

रम्नकी चिन्ता दूर करन के लिए अतिमन्न न आ वासन दिया और कहा —

रम्न चिंता म करो । तुम हमारे यहीं रहरा जाओ । हम पढ़ाई का प्रबंध करेंगे । तब के बारे मत सोचो ।

रम्न की आंखों से आसन का फ वारा ही फू निकला ।

रम्न भोजन समाप्त कर चका था । जब माँ बच्चों न हाथ पर बजाती है सी प्रकार अतिमन्न न दूब उसाना भाव पुराया । गुरूमत न अपन आँचल म पोछा । इन माताओं के आय रम्न शिम बन गया । उसके किसी काय का विरोध नहीं किया । यह शिमबिब के समान सब क स्वीकार करता जा रहा था ।

इधर विनमस्मन को अब धर स्वप्न में रहने का-सा अनुभव हो रहा था । एक तो राजकुल की पंकित में भोजन हुआ । बाद को एक साथ यन्कर तानुक-चर्वन करने लगे । बैठने के लिए गद्दिया मलायम बेंत का बहीदार आसन था ।

कर राचव्य की धानी हुई है

रम्ना ने रामायण आरम्भ किया ।

जी, हुई है, अब छ संतानो के पिता भी है।

खिन्नता उसकी ध्वनि में थी।

बहुत अच्छा ! हर्ष की बात है कि कुल-श्री बढ रही है और बढते जाय ! दूसरे लडके का ?

जी हाँ। पिछले ग्रीष्म मे उसका विवाह किया।

छोटा अभी पढ रहा होगा ?

जी नही ! कहाँ हम और कहाँ पढाई ! गरीब हैं। सोचा कि अभी से अपने धंधे का परिचय करा दूं और इसीलिए साथ लिए फिरता हूँ।

ओहो ! यह तो ठीक नही। अभी बच्चा है। सर्दी-गर्मी में यो घुमाना ठीक नही है। — दल्लप ने करुणा मे कहा। कुछ देर बाद फिर बोले—जिनवल्लभ जी ! आप हमारे अतिथि है। हमारे घर का सम्प्रदाय है कि पहले अतिथि को भोजनादि से सत्कृत करेंगे बाद को कुशल क्षेम पूछकर परिचय बढा लेंगे। मेरे दादा और परदादाओ के जमाने से यह बात चली आ रही है। अतिथि हमारे लिए देवतुल्य होते है। आप तो श्रावक है। योग्य सेवा करने का सु-अवसर दीजिए। निस्संकोच कहिए, मैं आप की क्या सेवा करूँ ?

दल्लप ने कहा।

जी ! अब कुछ नही चाहिए। आप के सत्कार और सौलभ्य से मैं सन्तुष्ट हूँ। अब लोभ न बढाइए। यह अनुचित होगा।

जिनवल्लभ ने उत्तर दिया।

आप अतिथि हैं। यों ही भूले भटके हमारे यहाँ पधारे हैं। लोभ बढाने की बात नही, दैव योग से कुछ ले देने की स्थिति में हूँ। जान लूं तो जो कुछ करते बने करूँ।

दल्लप ने आग्रह पूर्वक प्रार्थना की।

आप जैसे उदारियो को हमने देखा ही नही है। होते भी तो

को भाग्य था इस भाग्य में पदार्थ। आप महामात्य हैं। आपने हमारे जैसे सामान्य व्यक्ति को पंगत में बिठाकर भोजन किया और कुशल प्रश्न किया — इससे बढ़कर और क्या चाहिए। भोज की थाली में महामात्य के साथ भोजन करना ही सबसे बड़ा सौभाग्य है।

जिनवल्लभ हर्षोल्लास से बोल रहा था।

यह तो हो चला। अब आगे की कहिए। हममें और आप में क्या अंतर है? जो कुछ है वह केवल भाग्य का फेर है। वास्तव में देखा जाय तो क्या हम एक ही जाति के नहीं? जीवमात्र पर दया दिखाने का आदेश महावीर प्रभु ने दिया है। आज मैं श्रीसम्पन्न अवश्य हूँ! पर कल की बात कौन जाने? अब भी महावीर प्रभु के आदेश को ध्यान में रखकर दो-एक व्यक्तियों की सहायता नहीं की तो क्या बड़ा अपचार नहीं होगा? और एक बात मैं स्पष्ट कर देना चाहता हूँ। जो उपकार की बात कह रहा था वह किसी उपकार को कृतकृत्य करने के लिए नहीं। इसमें मेरा ही स्वार्थ छिपा है। अपने श्रेय के लिए करना चाहता हूँ। आप सचमुच अपने इच्छानुसार कुछ माँगकर मुझसे ले लो तो मैं अपना अहोभाग्य समझूँगा।

महामात्य की बात हृदय की सच्चाई को व्यक्त कर रही थी। जिनवल्लभ इस वत्सलता-सरलता के सामने नत-मस्तक हो गया। क्या माँगे? कितना माँगे? कुछ नहीं सूझ रहा था। सोचा कि इन के भविष्य का कुछ ठिकाना लग जाय तो पर्याप्त है। ऐसा विचार कर बोला —

प्रभो! मेरे दोनों बड़े लड़के कमाऊ हैं। अपना पेट भर किसी प्रकार कमाते हैं। सबसे छोटा जो है वह बड़े विलक्षण व्यक्ति हैं। उसे आप की गोद में रख दूँगा। आप जो चाहें कीजिए। उसका मार्गदर्शन आप पर है। मैं यह भी चाहता हूँ आप उससे कुछ काम लें और हम दोनों की आवश्यकता पूरा करने के लिए भी कुछ देते रहने दीजिए।

इस प्रकार जिनवल्लभ ने एक पत्थर स दो फल गिराने का यत्न किया।

किसको छोडने की बात कहते हैं? उस छोटे लडके को जो हमारे साथ खाने बैठा था?

जी हां!

छि! वह क्या काम कर सकेगा? यदि ऐसे बालको को नौकर रख ले तो परमात्मा की आंखो मे हम अपराधी नही होगें? आप चाहे तो इस बडे लडके को ही यहां छोड जाइए। सेना में इस के योग्य पद दिला देंगे।

प्रभो, अपका कहना भी ठीक है। पर हम बडे गरीब हैं। यह नौकरी करेगा तो क्या पायेगा? अधिक से अधिक अपना पट भर लेगा अथवा बडे बडे नगरो मे रहने के कारण संभव है कि अपन घर गृहस्थी को किसी भाति चला पाएगा। पर हम वृद्धो का क्या कर सकेगा?

ठीक है! आप का कहना यथार्थ है। पर इस मुन्नू को कैसे काम पर रख लें?

—दल्लप ने अपनी चिन्ता स्पष्ट की।

आप किसी भी काम मे लगाइए। चिंता क्यो करते हैं। जब वह कुछ सीख लेगा और जब आप समझेंगे कि यह कुछ योग्य बना है तब आप जो पसंद हो देना प्रारंभ कीजिए। तब तक हम कुछ नही मांगते।

अच्छी बात है। आप कम से कम इतना तो कह दे कि आप उसे क्या बनाना चाहते हैं?

हम क्या चाहेंगे! हम गरीबो को चाह करने के लिए कुछ फुरसत मिले तब न! हमारी चाह रोटी कपडे तक सीमीत रहती है इन दोनो के अतिरिक्त हमें और कुछ मझना ही नही।

— इन शब्दों में गरीबी की राम कहानी सुना दी।

तब साहिब क्या हम उसे रसोई घर में स्त्रियों के काम में हाथ बटाने के लगा दें। आप की कोई आपत्ति तो नहीं?

जिनवल्लभ के चेहरे पर का भाव पढ़ने की इच्छा से उस पर पति नजर दौड़ाई।

जी! मेरा अनन्त घर रख लीजिए और चाहे जो काम दीजिए। दयारहित महाराजा के दरबार में दीवान बनने की अपेक्षा दयालु के घर का दरबान बनना श्रेयस्कर है। कम से कम मैं तो यही समझता हूं।

— जिनवल्लभ ने अपना विचार सुनाया।

तब तो ठीक है। आज से रसोई हमारा बना। घर में एक साथ करके उसका वेतन ठहराएँगे। आप इस ओर फिर कब आएंगे?

वल्लभ ने प्रश्न किया।

इधर उधर फेरी लगा कर अपने घर लौट जाने का विचार है। घर जाने के पहले यहीं आकर आप के दर्शन करूं।

जिनवल्लभ ने अपना कार्यक्रम सुनाया।

तो कल आप हमारे यहाँ भोजन करके जा सकते हैं।

— इतना कहकर वल्लभ उठे।

जिनवल्लभ ने रम से अपना विचार कहा। रम का चेहरा खिल उठा। सोचा कि अपनी सारी समस्याएँ एक दम मिट गईं। इस कारण से वह कुछ नहीं समझ पाया। पर इधर वल्लभ ने जैसे ही इस बात का जिक्र किया तो पद्म ने अपना विरोध व्यक्त करते हुए कहा—

क्या उस तरह से हम रसोई का काम दें? वे तो हमारे परिचित हैं। हमें कुछ सोच समझ कर तो काम देना पड़ेगा न? कौन जाने किसके मन में क्या छिपा रहता है? सम्भव है कि यही आगे चलकर इस चक्कर में अपने मोह महारूप्य बन सकता है। जरा सोच कर देखिए किसी काल पुरुष में पद नहीं मिलेगा?

ठीक कहती हो। मुझे भी यह बात सूझी। यह न समझना कि मैंने इतना भी नही सोचा। पर एक बात है। इस के पिता बड़े कष्ट में है। यदि हम नही रख ले तो इसे और किसी के यहा नौकरी पर लगा देगा। उसको पैसा चाहिए। इस कारण से मैंने सोचा कि इस लडके से आखिर क्या काम करते बनेगा? फिर भी रसोई घर के काम का बहाना बनाकर रख लिया तो उसके पिता के अभिमान को ठेस नही लगेगी। चाहे तो तुम अपनी बहुओ से कहकर इसको पढवाओ लिखवाओ तब पता लगेगा यह सच्चा रत्न है या कोरा काच का टुकडा है। योग्य हो तो जो चाहे बने। हम उसके साथ बढ़ा दिला देगे। कौन कहता है कि यह अत तक रसोइया ही बन कर पड़ा रहे?

दूल्हन की बात सुनकर पद्मब्बे ने अपनी स्वीकृति दी। रत्न को रख लेने की बात तै हो गई।

इधर नागदेव ने सबेरे का नाश्ता किया। अतपुर मे उसे पान लगाकर खिलाती हुई अत्तिमब्बे ने कहा—

आप से एक निवेदन करू? आप से मैं ना नही सुनना चाहती। आशा है कि आप अवश्य मेरी बात मानेगे।

इन बातो को अत्तिमब्बे ने इस ढग से कहा कि सुननेवाले का मन सहसा स्वीकृति दे बैठे। और एक बात थी। आज तक कभी इन दोनो बहिनो ने कुछ नही मागा था। क्या मागे? गहना कपडा तो ढेर का ढेर पडा था। छोटी-मोटी बातें पद्मब्बे से कहने पर पूरा हो जाती थी। नागदेव को कभी यह सौभाग्य या सु-अवसर प्राप्त नही था कि प्रेयसियो की माँग पूरी कर सतुष्ट हो। अब जैसे ही यह प्रार्थना सुनी वह खिल उठा उसे आश्चर्य भी हुआ और अपार हर्ष भी।

अत्ति! यह क्या मेरे सामने यो, क्यो गिड गिडाती हो? तुम्हारी इच्छा जान कर अब तक मुझे ही उसे पूरा कर देना चाहिए था। पर क्या करू, मैं योद्धा हू, रसिक नही हू। कहो तो

इसको मुझे क्या चाहिए ?

— प्यार से नागदेव ने उसका हाथ अपने हाथों में लिए दबाया।

स्वामी ! आप इतना क्यों मन में ऊन मानते हैं ? जब से मैं और गुरु इस घर में आई हैं तब से हमें आराम ही आराम है। हम समझती हैं कि हम ससुराल में नहीं पीहर की छाया में हैं ! आप की माँ हमारी भी माँ है माँ से बढ़कर प्यार करती हैं। आप के पिताजी तो हमारे स्वर्गीय दादा की मकान में समर्थ हुए हैं इतना लाड़ प्यार करते हैं। रही आप की रसिकता ! आप रसिक नहीं होते तो क्या दो दो स्त्रियों को सदा प्रसन्न रख कर सवास सकते थे ?

प्रिये ! तुम और गुरु दोनों साक्षी की मनाल हो। और तुम्हारी पत भक्ति तुम्हारा रक्षक है। क्योंकि मैं सकल कहीं भी होने जाने की वक्तता की छाया में ही मानते हैं। अतएव यदि तुम कहीं आराम से हो तो इसका श्रेय तुम दोनों के सात्विक स्वभाव को मिलना चाहिए न कि मुझे। यदि मुझसे कभी भूल चूक हो जाय तो तुम दोनों मुझे बता देना कि वो ही मत सह लेना। मुझे बताकर सही रास्ते पर ले चलना। मेरा भार तुम दोनों पर है। दुनिया जानती है कि मैं रसवीर हूँ और कर हूँ फिर भी पूर्व जन्म के पुण्य का फल तुम्हारे रूप में मिला है। यही मेरी धारणा है। तुम मेरे भाग्य की कल्पलता हो।

—ऐसा कहते हुए मल्लिसबे के गाल पर मीठी चुम्बी ली।

बात सभी बैठ में आप बड़े चतुर हैं। इसमें सिद्ध होता है कि आप केवल रसवट ही नहीं वाक्पटु भी हैं।

— कहकर मल्लिसबे हँस पड़ी।

तब तो असली बात पर आओ प्रिये।

— कह नागदेव भी हँस पडे।

हमारे यहाँ एक नया लटका आया है ....

हाँ हाँ आया है। वही जो आज स्नानागार मे तौलिया देने आया था। — नागदेव ने वात काट कर कहा।

जी हाँ वही।

अच्छा! अव कहो क्या वात है?

जानते होगे कि इसके पिता ने उसको हमारे यहाँ नौकरी पर छोड रखा है। क्या वह रसोई का काम सीखे?

यह वात है! तो सीखने दो। तुम भी सिखा दो। ऐसी वातो में मैं कभी दखल नही देता। घर के अदर की वातो को मैं क्या जानू? तुम लोग देख लो।

अपनी वात कहने देगे कि नही?

कहो कौन मना करता है। तुम चुप हो गई तव मैं बोला। क्या वात कुछ टेटी है? खैर, जो भी कहो तुम्हारी वात अवश्य मानी जाएगी।

नागदेव ने आश्वासन दिया।

वात यह है कि लडका पटना चाहता है। वे गरीव हैं, पढा नही सके। इसी लिए उसे हमारे यहा काम पर लगा दिया है। लडका तेज है। प्राय पढाई मे भी तेज निकलेगा। आप चाहें तो

क्या मै उसे पढाते जाऊँ? वस तुम्हारी वात मैं मानूं तो उसकी भलाई नही होगी। याद रहे यदि मैं कुछ पढाऊँ और वह याद नही करें तो मैं अवश्य आपे से बाहर हो जाऊँगा और कह एक जमा द तो चारो खाने चित हो जाएगा। अस्ति, तुम अपने पति को जितना कोमल चित्त या मृदुल गात्र समझती हो वैसा वह और मे नही माना जाता। मेरे सैनिक मुझ देखकर थर थर काँपते हैं। महाराजा तक मुझसे वोलते समय सजग रहते है। मेरे साथ मनचाही

रमणी तुम्हें क्या चाहिए ?

प्यार से मानधन ने उसका हाथ अपने हाथों में लिए दबाया।

स्वामी ! आप इतना क्यों मन में ऊन मानते हैं ? जब से मैं और मुन्ना इस घर में आई हैं तब से हमें आराम ही आराम है। हम समझती हैं कि हम ससुराल में नहीं मायके की छाया में हैं। आप की माँ हमारी भी माँ हैं माँ से बढ़कर प्यार करती हैं। आप के पिताजी तो हमारे स्वर्गीय दादा की अभाव में समर्थ हुए हैं इतना अधिक प्यार करते हैं। यही आप की रसिकता ! आप रसिक नहीं होते तो क्या दो दो स्त्रियों को सदा प्रसन्न रख कर संभाल सकते थे ?

प्रिये ! तुम और मुन्ना दोनों साध्वी की सन्तान हो। और तुम्हारी रस भक्ति तुम्हारा सम्बल है। क्योंकि दैव भक्त यहाँ भी हमें मरने की क्षणाग्र की छाया में ही मानते हैं। अतएव यदि तुम यहाँ आराम से हो तो इसका श्रेय तुम दोनों के सात्विक स्वभाव को मिलना चाहिए न कि मुझे। यदि मुझसे कभी भूल चूक हो जाय तो तुम दोनों से कह देता हूँ कि वो ही सच सह लेना। मुझे बताकर सही रास्ते पर ले चलना। यह भार तुम दोनों पर है। दुनिया जानती है कि मैं रसवीर हूँ और कर हूँ फिर भी पूर्व जन्म के पुण्य का फल तुम्हारे रूप में मिला है। यही मेरी धारणा है। तुम मेरे भाग्य की कल्पना हो।

—ऐसा कहते हुए मतिगन्ध के गाल पर मीठी चुटकी ली।

आज भला देख मैं आप बड़े कुशल हैं। इससे सिद्ध होता है कि आप केवल रसपट ही नहीं वाक्पटु भी हैं।

— कहकर मतिगन्धे हँस पड़ी।

तब तो असली बात पर आओ प्रिये।

— कह नागदेव भी हस पडे।

हमारे यहाँ एक नया लडका आया है — —

हाँ हाँ आया है। वही जो आज स्नानागार मे तौलिया देने आया था। — नागदेव ने बात काट कर कहा।

जी हाँ वही।

अच्छा! अब कहो क्या बात है?

जानते होगे कि इसके पिता ने उसको हमारे यहाँ नौकरी पर छोड रखा है। क्या वह रसोई का काम सीखे?

यह बात है! तो सीखने दो। तुम भी सिखा दो। ऐसी बातो मे मैं कभी दखल नही देता। घर के अदर की बातो का मैं क्या जानूं? तुम लोग देख लो।

अपनी बात कहने देग कि नही?

कहो कौन मना करता है। तुम चुप हो गई तब मैं बोला। क्या बात कुछ टेढी है? खैर, जो भी कहो तुम्हारी बात अवश्य मानी जाएगा।

नागदेव ने आश्वासन दिया।

बात यह है कि लडका पढना चाहता है। वे गरीब हैं, पढा नही सके। इसी लिए उसे हमारे यहा काम पर लगा दिया है। लडका तेज है। प्राय पढाई मे भी तेज निकलेगा। आप चाहें तो

क्या मैं उसे पढाते जाऊँ? बस तुम्हारी बात मैं मानूं तो उसकी भलाई नहीं होगी। याद रहे यदि मैं कुछ पढाऊँ और वह याद नही करे तो मैं अवश्य आपे से बाहर हो जाऊँगा और कह एक जमा द तो चारो खाने चित हो जाएगा। अत्ति, तुम अपने पति को जितना कोमल चित्त या मृदुल गात्र समझती हो वैसा वह और मे नही माना जाता। मेरे सैनिक मुझ देखकर थर थर काँपते हैं महाराजा तक मुझसे बोलते समय सजग रहते है। मेरे साथ मनचाहे

कह कर हम किसी गुरुकुल मे छोड दे तो अपनी हैसियत देख कर दान देना पडेगा। इस प्रकार उस पढान मे खूब धन लगेगा। रसोई का नाम तो पाकशास्त्र है। भीम का नाम क्या उस शास्त्र मे पारगत होने कारण अमर नही बना है? आज नल का स्मरण करते है तो किस लिए करते है बताओ? ऐसा ही आप का रतन पाकशास्त्र का रत्न बन जाय और कर्नाटक भर मे सुनाम कर दे।

— नागदेव ने नाटकीय ढग से कहा।

अत्तिमब्बे के बातो पर आग बाई आती सी पडी। वह दान करने की बात दुहराते हुए बोली

तो अच्छा ही हुआ। यदि इन लडको के कारण गुरुकुलो को दान देने का मार्ग खुला तो हमारा अहोभाग्य है। जरा भी चिंता मत कीजिए। मैं दे दूगी। मगर जी से कह कर उसे गुरुकुल पहुचा देने का भार आप का है।

— अत्तिमब्बे ने निश्चय स्वर मे कह दिया।

पगली कही की! क्या ऐरे-गैरे लडको को पन्ना लिखवाने जाना क्या उचित है? क्या वह हमारा कोई सगा सबधी है? उस दिन पानी भरनेवाले उस लडके को खूब धन देकर पढाने का प्रबध किया। यद्यपि अपना ही धन दे रही हो। पर सोचो उस लडके को एक बार कुछ दे दिलाकर विदा किया था। पर अब की बात इतनी सस्ती नही है, समझी? क्योकि तुम तो पूरी जिम्मेदारी सर पर लेना चाहती हो! तिस पर पिताजी को राजी कराने की सलाह देती हो। पिताजी के सामने यह प्रस्ताव कैसे रखू। वे क्या समझेगे?

— नागदेव ने सदेहास्पद उत्तर दिया।

रतन जैसे छोटे छोटे लडको को काम पर लगा दे और पढने नही दे तो क्या उनका जीवन नष्ट नही होगा? अपनी ही बात सोच कर देखिए। बचपन से लेकर आप की सुशिक्षा का प्रबध नही होने

तो आप क्या आज सेनापति पद पर नियुक्त रहते ?

और क्या कष्ट उठाकर सरस्वती की गवाक्ष की ड्योढ़ी और का अवसर न सीखते तुम तो सेनापति बन जाने पर भी तुम तो रसिकों थोड़े ही मुझे वरण कर लेती।

— नागदेव अपनी बात पर आप हँस पड़ा।

औरों के संबंध में भी ऐसा ही मानिए। हम सुविधा कल्पित कर दें। सिद्ध पर अपना अपना भाग्य साथ देगा ही।

— अत्तिमब्बे बोली।

अति! अब उस लड़के को इतना चाहती हो तो दत्तक कर लो।

आप के मानने भर की देरी है। हम तैय्यार हैं।

— अत्तिमब्बे बोल उठी।

हमारी कोई संतान नहीं होगी ?

— खिन्न होकर नागदेव ने जिज्ञासा की।

मैंने इस संबंध में तो कुछ नहीं कहा।

— अत्तिमब्बे ने सफाई दी।

क्या दत्तक लेने की सलाह मान ली ?

— नागदेव ने फिर प्रश्न किया।

देखिए, होनहार लड़कों को देखकर किसका मन नहीं ललचता ? वे समाज और राष्ट्र के अनर्घ्य निधि होते हैं। वे आगे चलकर क्या हों ये उसे अभी कौन कह सकता है ?

— अत्तिमब्बे ने दृढ़ता से कहा।

अति! मैं तुम्हारी बात टालना नहीं चाहता। मैं एक बार जाँच कर देखता हूँ। अगर यह खरा निकला तो तब तक उसका ध्यान दूँगा कि जब तक वह कविचक्रवर्ती न बन जाय।

नागदेव की बात से वह खुश हुई।

रन्न घर पर कखहरा सीख चुका था। अक्षर सुदर थे। जहाँ कही से माँग कर ताडपत्रो पर ग्रथो का नकल भी किया करता था। उसके अक्षर स्फुट और मोती से लगते थे। प्रतिलिपि बनाते समय उन प्रतियो को पढने और समझने का भी प्रयत्न किया करता था। पप और पोन्न की कतियो की भी प्रतिलिपि बना चुका था और कभी कभी उन्हे पढते हुए स्वय कल्पना जगत मे तन्मय हो जाता था। उस की अभिरुचि पढने लिखने की थी। पर परिस्थिति इस के विपरीत थी। उन दिनो मे पढेलिखे लोग बहुत कम थे। जो थे वे राजा महाराजाओ के आश्रय में रहते थे। नगरो मे निवास करते थे। रन्न की विद्या-दाह बुझा देनेवाले विद्वान मुधोल जैसे ग्राम में नही थे। रन्न के पिता अपने दारिद्रय जनित सैंकडो झझटो में इस ओर ध्यान ही नही दे सकता था।

नागदेव ने रन्न की परीक्षा ली। रन्न ने अपने हाथ से लिखे गए आदिपुराण, विक्रमार्जुन विजय, भुवनैक रामाभ्युदय, और शातिपुराण को दिखाया तो देखकर नागदेव दग रह गया। सुदर लिखावट थी। मोति की लडो सी सुदर पक्तियाँ थी। और उनको उससे पढवाकर देखा। सिहगर्जन सा स्पुट कठ ध्वनि से एक दम प्रभावित हुआ। नागदेव यद्यपि रणपटु था। पर उस में सहृदयता की कमी नही थी। तलवार, भाले, तीर, कमान और गदाओ पर जैसा अधिकार रखता था वैसे ही काव्य सौष्टव समझने का भी अधिकार प्राप्त कर चुका था। कही वीर रस प्रधान काव्य मिलता तो पूरा पढवा लेने या खुद पढ डालने तक उसे कल नही पडती थी। पप और पोन्न इसके तकिए के नीचे सदा रहते थे। युद्ध के मैदान में भी अपने साथ कन्नड ग्रथो को रखा करता था। मौका पाते ही सैनिको के साथ बैठकर उन वीरगाथाओ को पढकर सुना देता था और उनकी व्याख्या भी करता था। ऐसे नागदेव ने रन्न की परीक्षा ली। रन्न के

को मिला हा।

दल्लप जी इस लडके को बकापुर भेज दीजिए। वहीं अजित सेनाचार्य के चरणो में रह कर पढ लें। लडका होनहार है।

पप ने सलाह दी।

पपदेव ! यह अत्तिमब्बे की आँखो का तारा है। वह प्राणो से भी अधिक इससे प्यार करती है। इसके पिता हमारे यहाँ इसको रसोई घर मे चाकर छोड गया था। पर जैसे ही अत्तिमब्बे की कृपा दृष्टि उस पर पडी यह कवि रत्न बनने योग्य हुआ। यहाँ सब कुछ नाटकीय ढग से उसके अनुकूल बन रहा है। अत्तिमब्बे और गुडुमब्बे उसकी पढाई का खर्च अपनी ओर से देना चाहती हैं। इस पर नागदेव भी इस लडके का पक्ष ले बैठा है। मेरी पत्नी भी इसका पक्ष लिए बोला करती है। आशा थी कि कम से कम आप हमारे पक्ष में होंगे ! पर बात उलटी निकली।

ऐसा कहते समय दल्लप के मुँह पर हँसी खिल उठी।

दल्लप, आप के घर मे सब के सब सुकृती हैं।

पपदेव के नेत्र आनदाश्रु से सजल हो गए

जी हा, पर एक अपवाद भी है। सो मैं हूँ।

– दल्लप ने हँसते हँसते कहा।

आप ! आप तो इस कल्पवृक्ष की जड है। वह सदा गुप्त रहती है। पर उसी के बल पर फल-फूल-पत्ता आदि खिलते रहेंगे। तभी तो लोग इस पेड की शोभा देखकर फूले नही समाते !

पपदेव ने दल्लप की वास्तविक प्रशसा की।

पपदेव, क्या यह समझूँ कि यह रत्न आगे चलकर आप का उत्तराधिकारी होगा !

दल्लप मुस्कुराए।

जी, हो सकता है। ऐसा ही हो ! यदि कोई भी योग्य व्यक्ति

इस सिंहासन पर विराजमान रहता था तो मैं आज उस सिंहासन
आंख भर देखना चाहता हूं। अब यह खाली पड़ा है। कौन है कवि
चक्रवर्ती जिस मैं इसकी धूल झाड़ पोंछ कर सजाना चाहता हूं। पद्म
के बाद पौत्र पौत्र के बाद रत्न — इस प्रकार सिंहासन बना रहे!
सरस्वती का सिंहासन कभी खाली न रहे। — यही मेरी प्रार्थना है।

पद्मदेव के भीतर से विनम्र वाणी निकल रही थी। सब मन्त्र मुग्ध
सा बाहर सुन रहा था।

अगले दिन सवेरे ही सारा जिनवल्लभ दरबार के यहां लौट
आया। भोजनादि से निवृत्त होकर चावल लिए दासगण और पद्म
तकिए के सहारे बैठे थे। जिनवल्लभ तथा राघव को लेकर आया
और उनकी बातें ही परिचय किया।

पद्मदेव! ये हैं जिनवल्लभ उस ... के पिता और यह
राघव हैं उस के बड़े भाई।

फिर रत्नसेन ने पद्मदेव का परिचय कराते हुए कहा —
जिनवल्लभ जी आप हमारे ये सागौरव पद्मदेव हैं महाकवि!

इतना सुनते ही जिनवल्लभ का सिर उसके सामने झुक
गया। इधर राघव ने धमगुर रूप से आदिपराण पर विभिन्न
विषय शास्त्रों से एक एक पद सुनाकर चरमपरता थी।

जिनवल्लभ जी! यह राघव बड़ा सहृदय है।

— पद्मदेव ने मुस्कराते हुए कहा।

हम सहृदय हैं और सब कुछ है। पर हमारी सहृदयता
दरिद्रता के आवरण में छिपी पड़ी है।

जिनवल्लभ की बातों में विनम्रता स्पष्ट झलक रही थी।

जिनवल्लभ जी आप का रत्न हमारे यहां रहेगा। पर एक
शर्त है। बताइए कि कितने दिन आप हमारे यहां से भोजन के लिए
तय्यार हैं। पहले यह बात तय हो जाय तो फिर —

दल्लप ने प्रश्न किया।

आप चाहे जितने दिन अपने यहाँ रख लीजिए।

— जिनवल्लभ ने उत्तर दिया।

खूब सोचिए, बीच मे कभी आकर यह तो नही कहेगे कि लडके की मां का आग्रह है कि बुलवा ले। इत्यादि।

प्रभो, मैं एक बार कहता हू तो सोच समझकर ही कहे देता हू। यह समझिए कि यह आप का लडका है। मेरा नही। आप जो चाहे कीजिए।

— दृढता पूर्वक जिनवल्लभ ने कहा।

राचय्य जी, तुम्हारा अभिप्राय क्या है?

"।। आप के यहाँ रन्न को रख छोडने मे मेरी कोई आपत्ति नही। पर क्या वह कोरा रसोइया बन कर रहेगा?

राचय्य खिन्न होकर बोला।

बेटा! दल्लप जी कल्पवृक्ष हैं समझे। आप के पास हमारा रन्न चाहे जैसे रहे सुख मे रहेगा। आज भी और भविष्य में भी समझे न?

-- ऐसा कहते कहते जिनवल्लभ ने अपने बेटे की ओर घूर कर देखा।

तुम लोग व्यर्थ चिता मत करो। रन्न रसोइया नही बनेगा। आज तक रसोइया नही था। आप की पतोहू अत्तिमब्बे इस को अपने छोटे भाई के समान मानती है।

कहते कहते 'इधर आओ रन्न! ओ कविरन्न'!! कहकर पपदेव ने आवाज दी। रन्न उसी प्रतीक्षा में आड में खडा था। चाहता था कि अपनी वेश-भषा पिताजी को दिखा दें। कोई न कोई बहाना निकाल कर उन लोगो के सामने आ जाना चाहता था। पप की आवाज क्या सुनी हर्ष से छलाग भरते हूए आ पहुचा। चिथडो

के अपना रत्न अब सचमुच गजसी पाराक न चमत रहा था। नया कपड़ा था। कानों म कम मरम थे। उगलियों में अगूठी थी। और सिरपर झमझम्माती टोपी थी। आते ही उसको देखकर जिनवल्लभ झूमे नहीं समाए। गोद में उठाकर छाती से लगाकर प्यार किया। उसकी गोद में बिठाकर राघवम की भी करुणा म देखा।

उन सो आज का आई को।

—कहते हुए उसकी गोद म रत्न को बिठाया। जिनवल्लभ की आँखों से आनन्दाश्रु टपक रहे। राघवम आनन्द से चमत्कृत हो उठा था।

अब कहो बेटा! रत्न तो यहीं न छोड़ अथवा साथ ही ले चल? अपमान सहने को अब नहीं और भी शक्ति चाहिए। हमारे यहाँ माम माँ का दूध जो और इतना देखा तक न था।

—इस प्रकार जब म पूछने लगा था जिनवल्लभ! क्योंकि आनन्द के मारे वह यह नहीं जानता था कि वह क्या बोल रहा है।

राघवम! तुम्हारे छोटे भाई को पढ़ाने के लिए हम चम्पापुर भेजना चाहते हैं। जब तक हम वापस नहीं आ रहे तब तक कोई इसे नुकसान नहीं आए। पढ़ाई रुकनी नहीं होनी चाहिए।

—वल्लभ की स्वाभाविक अधिकार पूर्ण वाणी सुनकर राघवम सोच पड़ा। उसे अपनी पहले बिना दिखाये नहीं गई बात पर लज्जा आ रही थी।

प्रभो! न जाने किस जन्म की मैंने उस माँ को सुखी चाहिनी का चूड़ियाँ पहनाई। हमारा भाग्य ही बदल गया। अब मालिए अब से रत्न आप का बेटा ही है।

—कह कर जिनवल्लभ म वल्लभ की गोद म उस रख दिया। वल्लभ को अपार हर्ष हुआ। उसे अपने पास बिठा लिया। माँ-बाप का हृदय क्या कभी अपने पराये का भेद जानता है

जिनवल्लभ जी इसे स्वीकार कीजिए।

कह कर एक थैली उसके हाथ में थमाने का प्रयत्न दल्लप ने किया।

प्रभो! मेरा दाम मुझे मिल चुका है। यह क्यो? आप मेरे लडके के भरण का पोपण भार उठा चुके है। आपने मेरे वश का नाम ही उज्वल कर दिया है। आपने तो गरीब की झोपडी पर सुवण का कलश लगा दिया हैं। मुझे अब इसकी आवश्यकता नहीं है।

—इस प्रकार अत्यन दीनता और हर्ष दिखाते हुए जिनवल्लभ ने थैली लेने को इनकार किया।

जिनवल्लभ जी! यह महामात्य का आशीर्वाद है और इस प्रसाद का तिरस्कार नही कीजिए।

कह पाने जब आगह किया तो विवश हो कर जिनवल्लभ ने राचय्य की ओर देखा। राचय्य ने भक्ति पूवक उस थैली को हाथ मे लिया।

अब आज्ञा हो तो लौटेगे। हम आप के ऋणी हैं। हमारा वश और हमारा रोवा रोवा आप का ऋणी रहेगा।

कह कर कृतज्ञता के भार से सिर झुका कर जिनवल्लभ खडे हो गए।

शुभ दिन मे रत्न को त्रकापुर भेजा जाएगा। मेरे पुत्र और पतोहू साथ जाएँगे। — दल्लप ने बताया।

रत्न जाओ। अपनी जी जी से कहो कि ये विदा होना चाहते ह।

दल्लप की आज्ञा मानकर रत्न अदर गया। और आदेश सुना दिया।

उधर पद्मब्बे न कहा कि बहू, देवो कुछ कलेवा साथ दो।

वह पाकशाला गई। पीछे पीछे रत्न भी गया। एक बडी

नम्रता से अत्तिमब्बे बोली —

महाराज ! हमारी सारी सपत्ति क्या आप की पाद-धूलि की बराबरी कर सकेगी ?

भक्ति-भाव से झुककर आचाय के चरणो में नमस्कार किया। और पद रज को सिर आँखो पर लगाया। और अपने मागल्य मे भी लगा लिया। ऐसे ही गुड्डमब्बे के माथे पर इस का तिलक लगाया।

अत्तिमब्बे के भक्ति-भाव से वहाँ उपस्थित मुनिवृद गद्गद् हो उठा।

अब्बे ! तुम इस राष्ट्र की रक्षामणि हो। राष्ट्रकूट सम्राट के समकक्ष रह कर तुमने आश्रम की ओर सुवण-प्रवाह ही बहा दिया है। गगराजा के दान के बराबर है तुम्हारा दान ! अधिक क्या सचमुच तुम दानचितामणि हो !

अजितसेनाचाय ने मुक्त कठ से उस का सम्मान किया।

आचार्य जी, मैं केवल सामान्य स्त्री हूँ, अज्ञान की पुतली हूँ। सारी सपत्ति मेरे स्वामी की है। उदारता से आपने अनुमति दी हम मैं और यह मेरी छोटी बहन उसे यहाँ तक पहुचा देने के लिए आई है।

— ऐसा कह अत्तिमब्बे ने कृतज्ञता-पूर्ण दृष्टि से पति की ओर देखा।

गुसाई जी ! यह धन हमारे घर का नही है। मायके से अपने साथ लाई है। आप जानते ही है कि हम इतने श्री सपन्न नही है।

नागदेव ने स्पष्ट शब्दो मे यथाथ का परिचय दिया।

आचाय जी ! आप ही बताइए जिस दिन मैं और गुड्डमब्बे इन की दासी बन गई और इनके घर आई तब से हमारी स्थिर एव चर सभी सपत्ति के मालिक ये बने है कि नही ?

अत्तिमब्बे का तर्क अकाट्य था।

— अजितसेनाचार्य जी बोले

मैं क्या जानूं, आचार्य जी! आप ही समर्थ हैं। आप परीक्षा कर देख लीजिए। यह जिसके योग्य निकले वही बने।

इतना कहकर एक बार नागदेव और दूसरी बार गुण्डमव्वे की ओर अत्तिमब्बे ने दृष्टिपात किया।

गुण्डमव्वे बोली --

आचार्य जी, मेरी बहन चाहती है कि यह लड़का कवि बन जाय।

क्या इसे पंप महाकवि का उत्तराधिकारी बनना है!

-- आश्चर्य सूचित करते हुए अजितसेन जी बोले।

हमारे मामा पंपदेव वृद्ध हो गए हैं। इन के बाद कन्नड सारस्वत रिक्त नहीं होना चाहिए। आप आशीर्वाद दें कि यह रन्न कवि चक्रवर्ती बन जाय!

— अत्तिमब्बे के मुंह से हृदय की बात निकल पड़ी।

मुनिवर अजितसेन जी की दृष्टि रन्न पर जम गई। पल भर में अपना सिर हिलाते हुए मुस्कुराए। उसे गुरुकुल के व्यवस्थापकों के साथ अंदर भेज दिया। तब बोले -

बेटी, तुम्हारा यह लड़का कवि चक्रवर्ती बनेगा। चिन्ता मत करो।

अजितसेनाचार्य की भविष्यवाणी पर विश्वास करो। आप वाक्सिद्धि संपन्न हैं। आप के श्री मुख से आज जो बात निकली वह अवश्य सत्य होगी।

— अत्तिमब्बे को आश्वासन देते हुए गंभीरभाव से पंपदेव ने कहा।

पंपदेव की बात सच है बेटी। मुझे सब सिद्धियाँ प्राप्त हैं। पर एक बात की कमी है। पंपकवि जैसे दो-एक महान व्यक्ति मेरी

शिष्य का पद। अब यह सम्भव है। उसके साथ के मागल्य के सम्मान अन न बन गए हैं। प मैं जो था वही हूं। सबका भक्ति सदा करता हूं। उनका सम्बन्ध प्रभाव नहीं सका। तब जैसा था आज भी वैसा हो गया था।

स्वयं को म हुए थे!

आचार्य जी! इतना आदरभाव आपका रहा है। जिस कि पम्पेश आप के शिष्य हैं।

— उसने कुछ व नमन्र हो।

बालक! वे मेरे शिष्य तो थे। अब न भी हैं। जिस कल्याण हैं। ऐसे व्यक्ति को अपना शिष्य कह मन म मेरा गौरव बढ़ेगा न?

अजितसेन जी सहज थे।

आचार्य जी अब भी आप का शिष्य कहने म मेरा अपार गौरव है। आप का स्थान मुझ जैसों से ऊंचा नहीं होगा। स्वयं ऊंचा है। क्योंकि आप कवि चक्रवर्तियों के कर्ता हैं! निमता ०!

पम्प महाकवि न पर्याप्त होकर कहा।

अजितसेनाचार्य की भव्यरचाओं की सफलता बढ़ते देखकर अत्यन्त उद्दीप्त व मौन आस्मान का अनुभव कर रहे थे। आत्मज्ञ पा परिवार देखकर आनंद पुलक भाव से पम्प कामधर के समान सुगा गद्य उपदेशामृत की धारा बहा दी।

/

दैवम! तुम्हारे समधी की यहाँ पूजा करें।

— भैरव ने सलाह दी।

पोम्मसम्म की मरण का भाव अभी हुआ है। वे दोनों माई

वासुदेव और वलदेव जैसे थे।

दल्लप की ध्वनि शोक मे भारी थी।

हमारे ही कारण पोन्नमय्य की मृत्यु हुई। चालुक्य साम्राज्य की स्थिरता के लिए न जाने कितने वीरो को, कितने जिनधर्मावलवियो को प्राण न्योछावर करना पडेगा।

— ऐसा कहते समय तैलप की आँखो से दो-चार बूंदे टपक पडी।

राष्ट्रनिष्ठा से वढकर और क्या धम है। राष्ट्र-रक्षा से वढकर और क्या कतव्य होगा, प्रभो। राष्टहित के लिए प्राणार्पण करना भी एक दृष्टि से समाधि-मरण ही मानना चाहिए।

यदि पोन्नमय्य नही होता तो उस परिस्थिति में गोज्जिग के कूटयुद्ध से वचना असभव वन जाता है। पोन्नमय्य की सेवा चिरस्मरणीय रहेगी। गोज्जिग के वाणो का निशान मैं ही था। वाण पर वाण वरसाए जा रहे थे। यदि पलभर भी पोन्नमय्य आगा-पीछा करते तो हम चारो खाने चित हो जाते। उस महात्माने हमारी मौत अपने गले लगाई। हम उनके चिर ऋणी है। सुनते हैं कि उनके कोई आठ तानें हैं — कभी उन्होने इस वात का जिक्र किया था।

— तैल्प ने कहा।

उनकी तो औरस कोई सतान नही थी। हाँ, हाँ! पाय अपने भाई की सतानो के बारे में कहा होगा।

— दल्लप ने स्पष्ट कर दिया।

क्या यह सच है? उनकी निजी सतान नही है? तव क्या अपने भाई की सतानो को इतना चाहते थे। उनकी वातो मे हमने समझा था कि वे निजी सतान की वात कर रहे हैं।

जी हाँ प्रभो! जव उनकी पत्नी ने सहगमन किया तव अपनी सपत्ति को दल्लप के तीन पुत्रियो में बाँट दिया था। हर एक

को सोना था । [illegible] । [illegible] होना था [illegible] मिली कि हम हम गाड़िया पर से चली । मेरी [illegible] निम आती गाड़ी का स्मरण करके आज भी आंसू बहाती है । [illegible] मह था भावज परिवार था । और उस बगान का प्रति [illegible] कामयान या [illegible] में होत करनेवाला [illegible] ।

— [illegible] न वह [illegible] में कहा ।

[illegible] अब [illegible] नहीं रहना चाहिए । नहीं तो अपराध होगा । हम समझते है कि [illegible] या नहीं [illegible] हमारा कर्तव्य है कि पहले [illegible] को यहां [illegible] यह काम आप को करना होगा । हमारे ममात्य [illegible] आप प्रधान होंगे और [illegible] प्रधान । पगमर से अपना सारा परिवार [illegible] । हम [illegible] से ही घर पगाये । हम अपन ग्रीष्म [illegible] उनके लिए दे देंगे ।

— [illegible] ने अन्तिम निर्णय सुनाया ।

प्रभो ! हम सोच समझ [illegible] काम करें । राज्य के प्रमुख पदों पर इस प्रकार अनियों का रहना [illegible] को खटकने लगेगा ।

— [illegible] की बात कही ।

[illegible] यहां जाति या धर्म का प्रश्न कोई नहीं है । जो निष्ठावान् हो गुणी हो उस की निष्ठा और गुण पर ही विचार कर रहे [illegible] । [illegible] साम्राज्य के [illegible] के लिए [illegible] अब तक [illegible] ने खून का पसीना बहाया है । [illegible] में ये लोग हमारे साम्राज्य की [illegible] में लगे हैं और [illegible] दे । यदि [illegible] नहीं होते तो [illegible] के समय में ही [illegible] साम्राज्य का सूर्य अस्तगत हुआ रहता । राज्य-लोभ ने [illegible] को अन्धा बना दिया था । उसने [illegible] के [illegible] पुलकेशी को पदच्युत करने के लिए क्या नहीं किया बताइए । उधर पुलकेशी का छोटा भाई [illegible] था । इसलिए तो धर्म और [illegible] की बात मानकर [illegible] बनने [illegible]

को चैन से रहने नहीं दिया। ऐसे अवसर पर यदि समनभद्र की सहायता नहीं मिली होती तो पुलकेशी क्या कभी राज्य पा सकते थे? पुलकेशी के दो नेत्रों में एक समनभद्र थे तो दूसरा रविकीर्ती! पुलकेशी की कीर्ति रविकीर्ती के कारण भरतखंड भर में फैल सकी। स्वयं पर्शिया तक जाकर रविकीर्ती ने पुलकेशी की कीर्ति फैलाई। नहीं तो वहां चालुक्य साम्राज्य का नाम कौन जान पाता? जब ही अचानक बादामी पर चोळों का सैनिक-आक्रमण हुआ तो पुलकेशी की रक्षा के लिए समनभद्र और रविकीर्ती दोनों ने प्राण पण से युद्ध किया और अंत में रणभूमि में ही ढेर हो गए। वे दोनों जैन-धर्म के अनुयायी थे! वह बात गौण है।

"नहीं ये प्रभो! कौन इनकार करता है? फिर भी एक ही जाति या धर्मावलंबियों के हाथ में राज्य की बागडोर दे देना उचित नहीं है। इससे अनावश्यक ही औरों का दिल खटकने लगेगा। संभव है कि इस असंतोष के परिणाम स्वरूप साम्राज्य का अस्तित्व ही प्रश्न-ग्रस्त बन जाय।

राजनीति की दृष्टि से दल्लप ने सलाह दी।

दल्लप! आप फिर जाति पाति की बात पर विचार करते हैं। पर यह भूल जाते हैं कि हम केवल निष्ठा और नेकी पर ध्यान देते हैं। आप लोगों की नियुक्ति इसी आधार पर हुई है। जैन-धर्म के नाते नहीं। यहां धर्म की बात पर नहीं, कर्म पर दृष्टि है। पंप महाकवि अरिकेसरी के दाहिने हाथ थे। अरिकेसरी के रनवास तक पंपदेव की पहुंच थी। क्या कभी पंपदेव ने अपने पद या प्रतिष्ठा का दुरुपयोग किया था? महारानी के भाई, अरिकेसरी का साला और चालुक्य साम्राज्य के हितचिंतक बन कर जीवन बिताया। जाति पाति को लेकर क्या कीजिएगा? सब से प्रमुखस्थान योग्यता को मिलना चाहिए। योग्य व्यक्तियों की संख्या चाहे जितना बढ़े, उससे राष्ट्र का हित ही सिद्ध होगा। अधिक सोच विचार

की आवश्यकता नहीं है। शीघ्र ही दस्सप! मल्लप को हमारी ओर से न्योता भेजिए।

तैलप ने आग्रह पूर्वक कहा।

मैं समन्तभद्र का वंशज हूं।

अभिमान पूर्वक दस्सप ने कहा।

यह बात है!

जी हां! महाप्रभो!

तब तो अच्छा ही हुआ।

हम पुलकेशी के पोते के पोते के पोते हैं। आप समन्तभद्र की पीढ़ी के हैं। पुलिकेशी के दरबार में समन्तभद्र की जो पद प्रतिष्ठा थी वही हमारे दरबार में आपकी होगी।

तैलप ने हर्ष विभोर होकर घोषणा की।

मल्लप को पुनपूर छोड़कर अपने परिवार सहित चालुक्य साम्राज्य की राजधानी विजयपुर को आना पड़ा। राजमर्यादाओं से इनका स्वागत सत्कार हुआ। उप प्रधान का पद देकर तैलप ने उन का सम्मान किया। मल्लप के पांचों पुत्रों की योग्यता के अनुरूप पद प्रतिष्ठा दी गई। चालुक्य साम्राज्य के प्रमुख केंद्रों में और महत्वपूर्ण स्थानों में मल्लप तथा उनके समर्थकों की नियुक्ति हो गई।

एक सहस्र मुनियों को भिक्षा एक साथ करवाकर अत्तिमब्बे कृतकृत्यता का अनुभव करने लगी। वह तो फूले नहीं समा रही थी। वहां से कुछ दूर चली आई तो अकस्मात जिनालय मिला जहां हजारों रत्नबिम्ब ऐसे भासित हो रहे थे कि मन पुलकित हो उठा।

ऐसा लग रहा था मानो चादनी को ही साचे में ढालकर शीतल पवन के चाक पर चढाकर बनाए गए हो। अत्तिमब्बे ने उस समय अनगिनत शिशुमडली में रहने का-सा आनद पाया। उन सहस्र जिनबिबो को एक साथ क्षीराभिषेक करने का प्रबध था, जिसे देखकर वह आनद से रोमाचित हुई। नवरत्न के उन बिंबो से वण वर्ण की किरणें ऐसे बिखर गई कि मानो हजारो इन्द्रधनुष्श के झूलो पर एक साथ अनगिनत भव्यात्माओ को झूला रहे हो। जिनबिबो का अभिषेक देखकर अत्तिमब्बे विदेहक्षेत्र आई। अपराजितेश्वर के समवसरण के लिए मानो देव-ललनाओ ने उसका स्वागत किया। समवसरण में एक ओर दिव्य सगीत हो रहा था, देवागनाए गा रही थी। अत्तिमब्बे ने कभी ऐसा सगीत सुना ही नहीं था। वासती की सुगध मानो सगीत लहरी बन महक रही थी। आगे आगे चली। वहाँ खेचर कन्याओ का नर्तन हो रहा था। कभी लास्य, कभी ताडव। लास्य नृत्य की भगिमाओ में मलयानिल में इठलानेवाली माधवी लतासी खेचर कन्याएँ लगती तो ताडव में बिजली सी चमक कर वज्र सा टूट पडती और भयातक रस की बाढ उमडा देती। वहाँ से आगे बढने पर हजारो मुनिवृन्द मुक्त्यगना की गोद में शिशु से भोलापन लिए प्रशात चित्त विराज रहे थे। हजारो आर्यिकाएँ थी जो साक्षात् करुणा के कोमल पौधो के समान लग रही थी। इन पवाडो को देखने के लिए लक्षोपलक्ष भव्यात्मा एकत्रित थे। जिन्हे देखते ही लग रहा था मानो शशि का सौंदय देख मुग्ध बने चमकीले नेत्रो से देदीप्यमान नक्षत्र हो। वहाँ सहस्रदलवाले सुवर्ण कमल पर धर्म-रूपी मकरद विराज रहा था। कमल पर जैसे भ्रमर आ आकर न्योच्छावर होते है उसी प्रकार अपराजित के चरणो पर भव्यवृन्द आ आकर न्योच्छावर हो रहे थे। अत्तिमब्बे भी परमात्मा के सन्निकट आई थी। तीर्थेश के पादारविद पर नतमस्तक हो गई। ऐसा लगा, मानो अपना त्रयताप वही फेंक चुकी हो। चरणस्पर्श से

उसके तनमन में पावनता सी प्रस्फुटित हो गई। लगता ऐसा हुआ मानो दिव्य ध्वनि रूपी पयोधि में अवगाहन कर रही हो। वहाँ से उठकर वह आकाश सी इठलाती हुई सिद्धशिला के पास आ। सिद्धलोक में वहाँ भी देखें परम्ज्योति की मूर्तियाँ ही मानो दिखाई देती थीं। ज्योति में ज्योति सी या दीप में प्रकाश के समान वे सिद्ध एक दूसरे से मिल रहे थे। समरस होकर भी अपनापन को बनाए रखकर मानव तथित होनेवाले करोड़ों सिद्धात्माओं का समूह दर्शनीय था। कुछ खड़े थे। कुछ बैठे थे। चाहे खड़े रहें चाहे बैठे रहें सब का सिर एक ही स्तर पर रहता था। निराकार निर्विकार उन सिद्धों में किसी किसी के चरणों ही की वंदना अनिमब्बे कर सकी। उस समय सिद्धत्व में ओतप्रोत थी। उसने मग्न होकर चारों ओर सिद्ध लोक पर दृष्टिपात किया। चारों ओर चांदनी धवल तरंगिणी सी बह रही थी। इस चंद्रिका को मथकर निकाले नवनीत के ढेर के समान इधर उधर पुरुषरूप में विहार करनेवाले सिद्ध-परमेष्ठियों का दिव्य दृश्य चित्ताकर्षक था। वे चंद्रिका से भी अधिक कांतिमान और कौमुदी से भी बढ़कर कोमल लग रहे थे। आत्मा की पवित्रता की पराकाष्ठा ही तो सिद्धावस्था है! ज्ञान ही ज्योति बन ज्योति ही मूर्ति बन प्रवाल पीठों पर महिमारूपी मणिमुकुट धारण किए सिद्धात्माओं का स्तोम विराजमान था। उस महिमालोक में अनिमब्बे स्वयं महिमामयी बन कर समरसता का अनुभव करने लगी थी। उसे अब तो सुध-बुध तक नहीं थी।

भाभी! भाभी! उठो! देखो तो सही सूरज कितना ऊपर तक चढ़ आया है!

ऐसा कहकर गुड्डमब्बे ने मंचमंच पर सोई हुई अनिमब्बे को हिलाया। अनिमब्बे के मुखारविंद पर दैविक शांति थी। भगवद्दर्शन से संतृप्त थी। वह निश्चिंत एवं निर्विकार भाव से सोई हुई थी। भला कौन सिद्धलोक से उतर आना चाहता है? स्वच्छ चांदनी सा मंदहास अनिमब्बे के

मुखमडल की शोभा वढा रहा था। उसे देखकर गुड्डुमव्वे का हृदय आनद से पुलकित हो उठा। मुग्ध होकर उसको देखती रह गई गुड्डुमव्वे अत्तिमव्वे के मुख मडल से घुघुराले केशो को सँवारने लगी। चन्द्रमा पर रखे शुक्र तारा के समान मुख मडल पर नत्थू चमक उठा। सम पर वजनेवाली वीणा-सी अत्तिमव्वे की मास वासनी उपवन से वहकर आई हुई गधभार-भरा गधवह सी चल रही थी।

जीजी! यह कैसी नीद है! कितनी गहरी! सब उठे, नहाए, धोए। तुम भी उठो!

—गुड्डुमव्वे ने फिर उसे हिलाया। किसी अज्ञात लोक से उतर आई सी, जागकर अत्तिमव्वे ने चारो ओर देखा। पानी से वाहर काढी गई मछली सी वह वेचैन हो गई।

अत्तिमव्वे की ठुड्डी पकड कर प्यार से अपनी ओर मुँह घुमाकर गुड्डुमव्वे ने प्रश्न किया

जीजी, क्या सपना देख रही थी?

गुड्डू! तुमने अच्छा नही किया .. ।

अत्तिमव्वे ने इस ढग से उत्तर दिया मानो अपार नष्ट पाकर खिन्न हुई हो।

क्यो जीजी! सब नहा धुला चुके। पूजा पाठ से निवृत्त हुए। तुम अभी सोई हो! सास जी ने जगाने के लिए मुझे भेजा। जाओ हाथ मुँह धो आओ।

कह कर छोटे लडको को फुसलानेवाले ढग से, प्यार से जगाया।

गुड्डू! मैंने विदेहक्षेत्र को देखा। अपराजित का समवसरण भी देखा। जिनदर्शन पाया। सिद्धलोक के परमानद में मग्न थी। कितना अच्छा था! कैसी प्रभा थी!

यो अत्तिमव्वे कह ही रही थी कि पद्मव्वे वही आई और

हास्य की आवाज में बोली —

उफ ! यह क्या ? अगले क्षण भगा तो यहीं आकर बैठ गई !

कुमकुम ने उनसे अपनी बहन का स्वप्न कह सुनाया ।

यह आनंद की बात है बहनी । अब हमारी अतिमब्बे के छठवाँ मास है ! प्रसव के दिन तक ऐसा ही स्वप्न देखा कर !

तत्क्षण पद्मब्बे के वचन आनंद रस में सिक्त होकर चले आ रहे थे । माँ बोली—

अति ! निस्संकोच सदा दोहद कहा करो । तुम्हारी आशा पूर्ण कर दूँगी ।

—अतिमब्बे से इस ढंग से बात रही थी मानो अपनी बेटी से ही बोल रही हो ।

क्या सचमुच पूर्ण करोगी ?

— संशय व्यक्त करती हुई अतिमब्बे बोली ।

क्या मुझ पर संदेह है बहनी मेरे वंश की ज्योति तुम्हारे गर्भ में है । अब जो भी तुम्हारी इच्छा होगी वह असल में उस मेरे नाती की होगी समझी ! माँ ! तुम जो चाहे माँगो बेटी ।

— पद्मब्बे ने अभय का आश्वासन दिया ।

भारती को जिनबिम्ब के साँचे में ढालकर आँख भर देखने की इच्छा हो रही है ।

— अतिमब्बे ने बिना हिचकिचाकर कह दिया ।

दीदी ! क्या अभी तुम शिल्पलोक में रहती हो ? इस मर्त्यलोक में उतर आओ ना ! चाहे भगवन्तों की मूर्तियाँ बनवा लें ।

— कुमकुम ने सलाह दी ।

उह ! मुझे भारती की ही मूर्तियाँ चाहिए ।

— अतिमब्बे ने कहा और मुस्कुराया ।

कैसी मूर्ति बनवानी होगी ? इसका खाका तो कहो ।

पद्मब्बे ने गंभीर भाव से कहा।

माताजी ! मैं उसे क्या जानूँ ? यहाँ कहाँ से लाऊँ ? ऐसी करोडो मूर्तियाँ मैंने स्वप्न में अवश्य देखी है।

— कह कर अत्तिमब्बे फिर अंतर्मुखी हो गई।

अत्तिमब्बे ! आज रात को फिर वही स्वप्न देखना। हो सके तो नमूने के लिए एक वैसा ही जिन-बिंब बनाने का प्रयत्न भी करो। उस की हजारो प्रतिकृतियाँ मैं बनवा दूंगी। अब उठो। यों भूखों रहना नही चाहिए।

— ऐसा कहकर बहू को साथ लिए पद्मब्बे चली गई।

अत्तिमब्बे पर उस स्वप्न का बडा गहरा प्रभाव पडा था। उसकी कल्पना अत्यंत सजग हो उठी थी। वह कभी कभी विदेह क्षेत्र एवं परमौदारिक-काय जिनेंद्र मूर्ति को अपनी आँखो के सामने चित्रित करने का प्रयत्न करने लगी। सिद्धलोक की मोहकता को मानस पटल पर अंकित करके कल्पना में लीन होने लगी। पहले उसकी रूप-रेखा खींचकर उस में रंग भरने का प्रयत्न करने लगी। घर पर रहनेवाले सोना चांदी मे जिनमूर्तियाँ ढलवाने के लिए बेचैन हो उठी। सहस्र मूर्तियो को एक साथ बिठाकर अभिषेक कराने के रमणीय दृश्य की कल्पना उन्हें आनंद विभोर कर रही थी। अकृत्रिम जिनालयों की भांति स्वयं कई जिनालय बनवाने की बात सोचने लगी। गगनचुंबी सहस्रकूट जिनालय बनवा दे तो वह चंद्रिका पर्व में नहाते हुए कैसे शोभायमान रहेगा ! अमावास्या के गहरे अंधकार मे उस जिनालय को नीचे से ऊपर तक अंदर-बाहर घी के दीपो से जगमगा दें तो उस ज्योति मालिका मे क्या ही सुंदर लगेगा। ज्योतिर्लोक ही मानो इस धरातल पर उतरा सा नही लगेगा ? ऐसी कल्पना उसे तन्मय बनाए रखने लगी थी। अत्तिमब्बे अपने गर्भाम्बुधि मे स्थित प्रवर्धमान शिशु को लिए विहार कर रही थी।

ऐसे विचारधारा से कभी भी उबरने तो काव्यगगन की विहारिणी बन जाती थी। महाकवि पंप के आदिपुराण में स्वर्ग के मनमोहक वर्णन पढ़कर तन्मय हो उठती थी। स्वर्ग हो या मर्त्य जब तक पूरी आस्था नहीं हो और धर्म मार्ग पर चलते हुए देव की कृपा पर विश्वास नहीं करें तो यह जीवन सार्थक नहीं होगा। इस सनातन सत्य पर उसका विश्वास दृढ़ होता गया। टहनी से टहनी पर उछलनेवाले चंचल मर्कट से खानेवाले मन को अल्पायु सहृदयी जिनबिंबों के सौंदर्य दर्शन में लगाए रखने लगी। और कभी-कभी काव्योद्यान में विहार करने का मौका भी उसे दे बैठती थी। कभी-कभी यह कल्पना करने लगती कि समस्त काव्यों और शास्त्रों की हजार हजार प्रतिलिपियां बना कर एक साथ रख दें। जो भी मांगे उन्हें साहित्य या शास्त्र का दान दें। इस प्रकार उनके प्रचार कार्य में हाथ बटावें। वह संकल्प करती थी और चाहती थी कि स्त्रियों को साहित्य दान दें। वैसे ही सुहागिनियों की गोद सोने की जिनमूर्ति से भर दें!

अत्तिमब्बे! क्यों सदा कुछ चिंतित सी रहती हो? क्यों पहले के जैसे हंस हंसकर बातें नहीं करती? मन में तुम भार संकोच के कोई बाधा रख लो और उसे पूरा होने नहीं दो तो मेरा लाडला भी तुम्हारी गोद में ही खिल हो जायगा। बोलो तो सही।

— ऐसा पद्मब्बे पूछा करती थी।

क्या मैं अपने मन की बात बता दूं। सुनकर आप हंस पड़ेंगी। जाने दीजिए।

अत्तिमब्बे ने झेंपते झेंपते उत्तर दिया।

इस कोख की बात हो तो कहो! यदि चन्द्र किरणों की प्रतिमा की बात नहीं हो तो अवश्य मैं तुम्हारी इच्छा पूर्ण करूंगी। चन्द्र-किरणों कौन बटोर सकेगा और कौन सांचे में ढालकर मूर्तियां बना सकेगा!! अपने मन में भी ऐसी मूर्ति को स्थापित करके भी

मुझमे ढालते नही बना। चाहे तो कहो सोना चादी या रत्नो की मूर्तियाँ बनवा लें।

पद्मव्वे ने कहा।

ऐसा ही हो! क्या, जैसे मैं चाहती हूँ वैसे बनवा के देगी?

अत्तिमव्वे की वाणी में अभी सदेह था।

क्या, सोने की बनवा दूं? अवश्य तुम्हारी इच्छा पूर्ण कर दूगी। चाहे तो उस में मेरी पूरी सपत्ति ही क्यो न खर्च जाय। मेरे पोते से बढ़कर तो यह सपत्ति नही!

पदमव्वे बोली।

अच्छी बात है माताजी! एक हजार सुवर्ण जिन प्रतिमा बनवा दीजिए। एक साथ सबका अभिषेक करवाना चाहती हूँ।

-- अत्तिमव्वे की बात अभी पूर्ण नही हो पाई थी पदमव्वे की हिम्मत ने जवाब दे दिया। बात काटकर बोली

बेटी, तुम्हें क्या हुआ है? बोलेगी तो हजार की ही बात किया करती हो। अब हजार मूर्तियाँ बनवाने की बात कर रही हो शायद हजार मदिर बनावने की बात कहोगी। यह कैसे सभव होगा? बेटी, कुछ विचारकर बोलो। मानवो की शक्ति सीमित होती है न? अब कहो क्या करना चाहिए।

पदमव्वे ने प्रश्न किया।

अपनी धुन मे अत्तिमव्वे बोली

और एक लाख श्लोकवाले धवलजयधवल की हजार प्रतियाँ बनवानी है। पप, पोन्न आदि कवियो की कृतियो की भी प्रतियाँ बनवानी होगी। तभी तो हजारो मुखो से कन्नड काव्यश्री मुखरित हो सकेगी!

— अत्तिमव्वे भाव परवश हो बोलती जा रही थी।

जीजी! तुम्हारी बात मैं रखूंगी। तुम खिन्न न हो।

गुडुमव्वे ने आश्वासन दिया।

मुह ! क्या तुम्हारा सिर भी चकरा गया है ? जरा हजारों से कम की बात सोचती ही नहीं। तुम बिना आगा पीछा सोचे वरदान यों बात दे बैठती हो। मनमानी इसी को कहते हैं !! तुम दोनों मिलकर बावस में खिचड़ी लगाने वाली हो।

पद्मश्री ने डांटते हुए कहा।

माताजी ! आप के आग्रह पर ही तो कह रही हूं। आपने आश्वासन भी दिया था।

— अतिमब्बे ने स्मरण दिलाया।

आश्वासन दिया था। पर तुम तो हजारों से कम की बात करती ही नहीं। तुम इस लोक की नहीं देवलोक की बात करती हो मानते हो कि वहां कामधेनु, कल्पवृक्ष चिन्तामणि आदि हैं जो मांगने पर कामना पूर्ण कर देती है।

— पद्मश्री ने कहा।

मेरी दीदी की मांग पूरी करने के लिए कामधेनु की आवश्यकता है ? दीजिए आप चिन्ता नहीं करें। सहस्र दियों को एक साथ अभिषेक कराना कोई बहुत कठिन बात नहीं। मैं करा दूंगी।

— गुण्डमब्बे ने सगर्वपूर्वक आश्वासन दिया।

तुम दोनों की बातें समझ में नहीं आती।

— कहती कहती पद्मश्री चली गई।

बहन के कल्पना-विकास में रचनात्मक कलावती गुण्डमब्बे थी। वह अतिमब्बे के भावावेश को चमत्कृत ढंग से चरितार्थ कर देनेवाली चातुर्यरत्न थी। दोनों गगनमंडल के मुक्ताफल के समान थीं। अतिमब्बे की इच्छाएँ औरों के लिए पागलपन सी लगती थी। पर गुण्डमब्बे के लिए वे आश्चर्य की बात नहीं केवल भक्ति परवशता और सहृदयता से प्रेरित दिखाई दे रही थी। अतिमब्बे का सुख उसका सुख था अतिमब्बे का दुःख उसका दुःख था। इस प्रकार अपनी बड़ी बहन के

जीवन मे अपना जीवन नैवेद्यवत् अर्पित करके, अपनेपन का सवथा त्याग किए वह निश्चित रहने लगी थी। उसकी अपनी कोई इच्छा नही होती थी। पर बहन के लिए सबकुछ चाहती थी।

गुड्डमव्वे ने सकल्प किया कि अभिनव सिद्धलोक का निर्माण करा दे। इस काय के निमित्त अपने सभी भाइयो को बुलवा लिया। अपनी योजना को कायान्वित करने के लिए दस-एक दिन माथा पच्ची करती रही। अत मे अत्तिमब्बे की कल्पना का वास्तविक जगत की वस्तु बनाने में सफल हुई।

एक बार दुपहर को अपनी बडी बहन को साथ ले जाकर सिदधलोक के दशन करा दिया। एक शीश महल बनवाया था। उस मे चारो ओर बडे कलात्मक ढग से आइनो को सजाकर रखा था और ऐसे ही रत्नो की जिनमूर्तियाँ भी सजाकर रखी गई थी। इन मूर्तियो के शिरोभाग में इस प्रकार नलिकाएँ बधी हुई थी कि जब आवश्यकता हो तब अपने आप मूर्तियो का अभिषेक हो जाय।

अत्तिमब्बे को शीश-महल के मध्य मे बिठाया। जहाँ वह दृष्टि क्षेप करती वहाँ करोडो जिनमर्तियाँ देख पाती थी। वह एक मायालोक-सा था। उस माया लोक की महिमा वणनातीत थी। रत्नबिबो से छिटकनेवाली काति दपणो द्वारा प्रतिफलित होकर दसगुना, सौगुना क्यो हजार गुना बढ जाती थी। इसी अनुपात मे जिन मूर्तियाँ भी प्रतिबिंबित हो रही थी। अत्तिमब्बे की कल्पना इसमे और निखर हो उठी। उसकी भावना पुलकित हो गई। उस दृश्य को देखने मे मानो उसका रोवा रोवाँ नेत्र बना था। सारा शरीर मानो अत करण बन कर आनदित हो उठा। वह मानो आनद रस का कलश बना। उस की गर्वित प्रवाह बन कर वह चली। वह उस मे तन्मय हो गई।

नलिका से जब उन रत्नबिंबो पर सुगन्ध जल का अभिषेक होने लगा तो ऐसा लग रहा था मानो निसर्गाविक सुमन ही झडी सी

परम कर न मन बह निकला था। देखते देखते ऐसा भासित होने लगा कि करोड़ों बिना देव-गण की करोड़ों धाराएँ एक साथ बह रही थी। नलिका से जल दस या पन्द्रह तो पड़ता ही था स्वयं गौर था। उसके उपरान्त सम्मार्जन करने के लिए सम्पन्न भाव भाव से जल जलधारा में बहते हैं धीरे धीरे आ बसा हो। सभासु मदन से बढ़कर स्त्रियों को समर्पण जिनाभिषेक सेवन के लिए उत्सुकता देखी जाने लगी। उसकी हूबहू सी रमणीयता वहाँ छा गई। जब माता मरुदेवी उन जिनबिम्बों पर दूध बह चला तो रत्ना के शिखर दशा को अन्त में पुण्य धारा कि जब बनवासी मुरझा सी गयी। जब वह धीरे धीरे बहने लगी तो ऐसा लगता कि स्वर्ग उछलती हुई धरातल पर आ रही है। कभी कभी ऐसा लग रहा था कि जिन बिम्ब ही पल्लवित होकर लोक कल्याण निमित्त समाज में निकल पड़े हो। महिमा वर्ण ही माता क्षीरसागरियि सा लहरा उठा हो। अथवा रमावेश को मानो भक्ति का परिवेश भी मिला हो। गन्धाभिषेक के अवसर पर तीनो लोक महक उठा होगा। अत्तिमब्बे को ऐसा लगा कि वह स्वयं सुगन्ध में ओतप्रोत हो गई। उसने माना कि यही देवों का मनोरंजन है और नार को नाक कहना मार्दव है। अभिषेक समाप्त हुआ। तब रत्न बिम्बों के निकट घी की बत्तियाँ जलाई गई। तब देखना था उन रत्नों की मनोहारिता! उसकी कमनीयता से वह भी पुलकित होता दिखाई दे रहा था। तब अत्तिमब्बे के स्मरण में क्या कहूँ! उसने एक बार ऐसा ही दृश्य देखा था। पर प्रत्यक्ष नहीं स्वप्न में देखा था। यह तो स्वप्नवाले दृश्य से हजार गुना अधिक आकर्षक था। वह स्वप्न था पर यह यथार्थ वह कल्पना थी पर यह वास्तविक। मारे हर्ष के गुरुमब्बे को बार बार गले लगाकर मन से कहने लगी—

गुरु! तुम्हारे बिना यह संसार मेरे लिए सूनसान होगा।

तुम ही मेरी जीभ हो। तुम ही मेरी आशा हो। तुम मेरे प्राण हो। मेरे लिए अपना सर्वस्व त्याग किए रहनेवाली त्यागमयी तुम ही मेरी आत्मा हो। मेरे स्वप्न का यथार्थ रूप देनेवाली तुम हो। तुम्हारे ही कारण मेरी कल्पना काव्य रूप मे सार्थक बन गयी है। हे मनभावनी! तुम्हे क्या कहू। तुम मेरे भाव की भाषा हो। भाषा के सौदर्य हो।

—ऐसा कहती हुई अपनी बहन को बाहो मे बाध लिया।

अत्तिमब्बे की बडी बडी आशा-अभिलाषाओ को रत्न सुनकर अजितसेनाचार्य जी अत्यत हर्षित हुए। आचार्य जी ने अत्तिमब्बे को कलियुग की जिनेंद्र-जननी कहकर मन ही मन यशोगान किया। आश्रम में जितनी ताडपत्री पुस्तके थी सब की एक एक प्रति बैलगाडियो पर लदवा कर रत्न के साथ विजयपुर भेजा। उन्ही गाडियो पर आए सब ग्रथो को सजाकर विजयपुर मे एक पुस्तक भडार खोला। अत्तिमब्बे के अमृत हस्त से उसका उद्‌घाटन समारोह सपन्न हुआ। हजारो ताडपत्रो के ग्रथ देखकर अत्तिमब्बे अत्यत प्रसन्न हुई।

रत्न! देश का सौभाग्य इन्ही ग्रथो से है।

— अत्तिमब्बे ने सौभाग्य की कलापूर्ण व्याख्या सुना दी।

माताजी! आप हमारे देश की शारदा माता है। आप जैसी महत्वाकाक्षिणी, युग युग मे एक ही क्यो न मिले कर्नाटक कृतकृत्य हो जयगा। कन्नड भाषा की सुहाग अत्तिमब्बे का आधार पर निर्भर है।

— रत्न की बातो मे भावुकता टपक रही थी।

तात! केवल अत्तिमब्बे के जन्म लेने से ही क्या होगा? तुम्हारे जैसे तरुण कन्नड भाषा प्रेम से पागल होकर कविचक्रवर्ती बनने का स्वप्न देखने लगें तो कुछ सभावना अधिक है। हम केवल मार्ग को स्वच्छ एव स्वस्थ रख सकेगी। कवि के रस प्रवाह मे वही से कुछ गदगी न आने पावे इतना हम देख लेगी। वातावरण को

स्वच्छ रखना हमारा कर्तव्य है। हम चाहती हैं कि हमारे सभी भावी कवि चक्रवर्तियों का जन्म यहीं हो। गुरुभक्त ने शिलविदों के संबंध में जो मेरी कल्पना थी उसे पूर्ण कर दिया। तुम कविचक्रवर्ती बन कर काव्य रत्नों का निर्माण करो। उन में से प्रत्येक की सुंदर प्रतिमा बनवाकर मैं बाँट देना चाहती हूँ।

इस प्रकार अत्तिमब्बे ने अपनी कल्पना के दूसरे पहलू को भी स्पष्ट कर दिया।

माताजी! आप को क्या कहूँ मैं अम्मा! आप बात बात में हमारों की ही चर्चा किया करती हैं। आप अवश्य हजार मुखवाली भारती हैं। आप साक्षात् जोधनवाली वीणापाणी हैं। आप सहस्र मुखवाली वाग्देवी हैं।

रन्न! तुम्हारी प्रतिभा मेरे मध्यमान में ही समाप्त न हो। याद रहे पम्प के बाद पोन्न! और पोन्न के बाद रन्न को वह स्थान लेना है!

कह कर रन्न को खूब चुनौती दी और प्रोत्साहित किया।

  

बेटी कहो मैं तुम्हारे लिए क्या करूँ कोई इच्छा हो तो बताओ बेटी।

कह कर उस गर्भिणी का अक्कब्बे ने आश्वासन दिया।

अक्कब्बे की बात सुनकर अत्तिमब्बे ने उत्तर दिया —

माँ जी! आशा अभिलाषाओं की क्या कमी है? सैकड़ों उठती रहती हैं। उन्हें सुनाऊँ तो शायद मुझे पागल मानने लगेंगी।

सीमन्त-संस्कार में आई हुई अत्तिमब्बे का संकोच पूर्ण उत्तर माताजी ने सुना। उस समारोह में सम्मिलित होने के लिए चामुण्डराय की माता जी कालळदेवी भी पधारी थीं।

अत्ति! सकोच क्यो करती हो ' क्या हमारे रहने हुए भी तुम्हारी इच्छा पूण न होने पावेगी? बताओ बेटी!

-- काळलादेवी ने आश्वासन दिया।

मामी! सब लोग मुझे पागल ही समझते ह। मेरी गुड् मेरे अत करण की बात समझ सकी है।

-- अत्तिमब्बे ने उत्तर दिया।

ऐसी बात हैं! बेटी सुन् तो तुम क्या चाहती हो? मैं राव की माँ हूँ — जो चाहे तुम्हारी इच्छा हो, चाहे जितनी बडी हो मैं पूरा कर दूगी।

मामी एक हजार अच्छी अच्छी गाभिन गायो का मै गरीब गभवतियो को दान करना चहती हूँ।

अत्तिमब्बे की बात काटकर अब्बकब्बे ने कहा —

जी! आपने सुना? कौन इसकी इच्छा पूर्ण कर पायेगा? नर मनुष्य के बूते कि बात करती ही नही! ऐसे ही मानवशक्ति के परे की बाते इसको सूझा करती है।

— ऐसा कह कर अब्बकब्बे हँस पडी।

अब्बकब्बे! साधारण बूते की बात यह नही है। मैं मानती हूँ। पर इस की इच्छा सुनकर सतुष्ट होना चाहिए। सोचना चाहिए कि यह भी सौभाग्य की ही बात है। ऐसी ऐसी महान आशा अभिलाषाएँ ऐरे गैरो के मन में जाग नही सकती। समझी?

— कहकर अत्तिमब्बे से कहा

बेटी! मैं तुम्हारी आशा पूर्ण करूँगी! कल एक हजार गाभिन गायो का ढोर यहाँ जमा किया जायगा।

--अत्तिमब्बे ने सोचा की काळलादेवी की उदारता ही बोल उठी है। फिर अब्बकब्बे को सबोधन करके काळलादेवी ने कहा

सुन अब्बे! एक हजार गर्भिणी स्त्रियो को तुम न्योता दो।

इतना भी कर सकोगी या नहीं? मेरी इस सादगी की आशा आकांक्षाओं को बिना समझे तुमने इसे संकोच में डाल रखा है। बेचारी मन मारे रह जाती है।

इस प्रकार सब को एक ही लाठी से हांक दिया।

विजयपुर की झोपड़ियों में रहनेवाले गरीबों को कालकादेवी ने प्रीति भोज दिया। उन में से अच्छा अच्छा चुनकर एक सहस्र अत्यन्त दरिद्र गर्भवती महिलाओं को छाँट लिया। उनके लिए एक हजार सामान को एकत्रित कर रखा था। दरिद्रता के दल दल में फंसी उन महिलाओं को उबटन लगाकर नहलाया। नए नए वस्त्र आदि से शृंगार किया। चमेली का तेल लगा कर बालों को सँवारा और जूड़ा बाँधा। और सब के जूड़ों में फूल पिरोए गए। ऐसा लग रहा था मानो दरिद्रता की कमर तोड़ डालने का ही प्रबंध हुआ हो। जो सद्भागिन दरिद्र सुहागिनी सी बन रही थी वह साक्षात् लक्ष्मी बनकर बैठी थी। अत्तिमब्बे ने इन महिलाओं के पास स्वयं जाकर उन से कुशल प्रश्न किया। सब के वैयक्तिक कष्ट-सुख विचार किया। एक एक करके उनको अपने पास बुलाया और चाँदी की नकल और सोने की सीमवाली एक-एक थाल को उन्हें दान किया।

यह थी अत्तिमब्बे की इच्छा! इस रूप में पूर्ण किया कालकादेवी ने।

यह एक असाधारण महोत्सव था। चार दिन के बाद अजितसेनाचार्य जी अपने सैकड़ों मुनि शिष्यों को साथ लिए विजयपुर आए। अत्तिमब्बे ने सब को भक्तिपूर्वक नमस्कार किया। इन पावन मुनीशों को बीच घर देख प्रफुल्ल हुई। आनन्द भार से लदी हुई सी सिर झुकाए उनके सम्मुख बैठ गई।

बेटी! तुम्हारी एक एक लोकोत्तर अभिलाषाओं का विवरण आरम्भ से आता है। ऐसी उदार आत्मा को देखने की प्रबल इच्छा हुई।

स्वय चला आया। मुझ बैरागी मे तुम्हारी कोई इच्छा पूर्ण हो सकती हो तो बताओ बेटी, सकोच मत करो।

अजितसेनाचार्य की वाणी वात्सत्य से सनी हुई थी।

एक इच्छा है। एक हजार जिन-मुनियो को भिक्षा देना चाहती हू। सो भी एक साथ।

अत्तिमब्बे की यह बात सुनकर सब अवाक रह गए।

अत्तिमब्बे, तुम सचमुच मूर्तिमती मोक्ष-लक्ष्मी हो जो इस धरातल पर भूले भटके उतर आई है। तुम ही सहस्र नेत्रा, सहस्र वदना, सहस्र हस्ता, सहस्र कर्णा और सहस्र रसना हो।

इस प्रकार अत्तिमब्बे का यशोगान करके अजितसेनाचार्य जी ने अज्ञात रूप से स्थित जैन तपस्वियो को कहला भेजा। विजयपुर में अजितसेनाचाय जी के दशन के लिए कोने कोने से जैनमुनि चले आए। अत्तिमब्बे की आशालता मानो लहलहा उठी। हजार से भी अधिक मुनियो को एक ही छप्पर के नीचे शास्त्रोक्त विधि मे अन्नदान दिया। क्या ही अद्‌भुत दृश्य था। लग रहा था सिद्धलोक इस धरातल पर उतर आया हो। अत्तिमब्बे की आशा पूर्ण हुई। इस अन्नदान महापव मे सहस्र मुनियो के बीच मे अत्तिमब्बे इस स्फूर्ति के साथ हाथ बंटा रही थी मानो हवा मे पर लगे हो। इस प्रकार भरसक इस पुण्य काय मे दैहिक श्रम उठाकर भी वह नही थकी। पुण्य भाजन बन कर विराजमान हुई। प्रशातचित की प्रसन्नता मुख मडल की शोभा बढा रही थी।

अत्तिमब्बे! तुम्हारी मान कामनाएँ सफल होगी। वह काल दूर नही है जब की तुम औरो की सहायता लिए बिना ही हजार जिनालय बनवाओगी, खुद ही सहस्र जिनबिबो का प्रतिष्ठापन कराओगी, सहस्रो ग्रथो की प्रतिलिपिया बनवाकर दान दोगी। अधिक क्या कहू तुम ही कर्नाटक की कल्पलता हो।

— कहकर अजितसेनाचार्य जी ने मुक्त कंठ से उसका यशोगान किया। आचार्य जी बंकापुर चले गए। जिस प्रकार काव्य में रसाभिव्यक्ति में पोषक बनकर अलंकारादि आते हैं और रस निष्पत्ति के साथ ही सहृदयों के ध्यान से ओझल हो जाते हैं इसी प्रकार अजितसेनाचार्य के साथ जिन-मुनि-वृन्द आया और अतिमब्बे की महात्माकांक्षा के पनपते ही अपने अपने स्थान पर चला गया।

  

ओहो! अहोभाग्य है! अचानक आज इन देवकन्याओं का शुभागमन हो रहा है! आज आज इस भक्त पर कृपा दृष्टि पड़ी!

— ये नागदेव के वचन थे। अपनी पत्नियों को अपनी ओर आते देखा तो प्रेम विह्वल हो बोल उठा था।

जी हाँ! आज देवराज के दर्शनार्थ आई हैं।

अतिमब्बे ने मनोहर उत्तर दिया।

औदार्य मूर्ति का स्वागत करता हूँ। कल्पलता को स्वागत है। क्या तुम्ही ने संसार की दरिद्रता की कमर तोड़ देने का संकल्प किया है? बड़ा उत्तम विचार है। खेद की बात यह है कि इस लोकोपकार की धुन में इस अपाहिज को भूल गईं। यह बेचारा इस कारण से सूखते जा रहा है।

नागदेव ने परिहास्य किया।

बिना तर्क अवसर होता ही है।

— गुडमब्बे ने उत्तर दिया।

क्या देवराज के दर्शन के लिए आई हो?

— नागदेव ने अतिमब्बे से प्रश्न किया।

जी हाँ।

— दोनो ने उत्तर दिया।

कब से हम देवराज माने जाते है ?

कुतूहलवश पूछा।

जब हम देवकन्या बनी तभी से।

उन दोनो का उत्तर था।

ऐसी बात है! समझा! तुम देवकन्या हो तो मैं देवराज बनूंगा। यदि तुम कामधेनु बनो तो हमारी क्या दशा होगी ?

हंसते हँसते जिज्ञासा की।

आप ही जानते हैं।

-- मुस्कुराकर अत्तिमब्बे बोली।

क्या तुम कामधेनु और हम काम वृषभ होंगे ?

फिर मुस्कुराया।

देखिए, यो उपमा से खीचा-तानी करना नही चाहिए।

अत्तिमब्बे बोली।

खैर! आओ देवियो। तुम उपमातीत हो।

नागदेव ने स्वागत किया।

हम भले ही उपमातीत न हो आप की मनोनीता तो अवश्य है!

रानी! इस जन के योग्य कुछ सेवा की आज्ञा हो।

कातरता का अभिनय करते हुए बात बदलकर पूछा।

अभी जो सेवा की है वह क्या कम है?

कौन सी सेवा हुई है ?

अनजाने से तर्क किया।

क्यो हृदयेश्वर! कुछ नही है ?

हमारी समझ मे तो कुछ भी नहीं किया है। गुडुमब्बे ने तुम्हारे लिए सिद्धलोक का निर्माण भगार पर कर दिया जिसे देखकर हम दंग रह गए। गुळब्बादेवी ने सारा स्वर्ग-मुद्राओ को पानी की

तरह याद किया। हमारा वह लड़का जब उसने जो सरस्वती का भंडार हो खोलकर तुम्हारी मनोकामना परिपूर्ण की। तुम्हारी इच्छा के अनुरूप सहस्रों मनिपुर का कल्याण भी हुआ। हमारे लिए काम कुछ भी नहीं बचा होगा।

यह नागदेव मुस्कराए।

यह सारी बात सही है। ये सब आप की कृपा पर ही तो संभव हुआ। उस के पुत्र के रूप में ये सब महाकार्य हुए हैं।

कीर्तिमयी ने स्पष्ट किया।

देवि! तुम्हारी बातें पहेली सी लगती हैं। यह बड़ा गवार है इस उम्र से पहेली बूझना क्या संभव है? जो कुछ कहना हो सीधे कहो तो कुछ समझे।

ऐसा नागदेव कह ही रहा था कि कुसुमश्री इस के सभाभवन में सम्मिलित हुई।

गुरु! सुना न? तुम्हारी बहन कहती है कि मैंने उस पर बड़ी कृपा की है जिससे यह सब हो सका। मेरी समझ में नहीं आता कि वह कौन-सी कृपा है। यदि तुम जानो तो कहो।

— आश्चर्य व्यक्त किया।

क्या बात है जीजी?

आप मेरे लिए कुछ करना चाहते हैं। चाहते हैं कि कुछ करूँ। पर मैंने कहा कि अब तक आप जो कर चुके हैं वही पर्याप्त है। इससे अधिक और कुछ नहीं चाहिए। मेरे उत्तर सही है न?

— कीर्तिमयी बोली। और मुस्कराई।

ठीक तो है प्राणेश्वर! आप से मेरी बहन का बड़ा उपकार हुआ है। आप के अनुग्रह से ही उसका सम्मान बढ़ सका है।

— ऐसा कहकर कुसुमश्री भी मुस्कुराई।

ओहो यह बात है! अनुग्रह से तुम्हारा मतलब समझ

लिया। गुड्डू, क्या तुम भी अनुग्रह चाहती हो ? तुम्हारा भी सम्मान बढे।

नागदेव हँस पडे।

पहले मेरी बहिन को आप की गोद में अपनी भेंट चढाने का मौका दीजिए, तब विचार करें। बाद को हम अपनी बात सोचे।

-- ऐसा कहकर गुडुमव्वे हँस पडी।

फिर वहिन की ओर ममता भरी दृष्टि से देखती हुई बोली-

वहन, रहने दो ये बातें। अब बताओ और क्या इच्छा है ?

गुड् ! एक बार शस्त्रागार देखने की बडी इच्छा हो रही है। क्या आप दिखा देंगे ?

नागदेव से प्राथना की।

चलो ! यह कौन बडी बात है !

कहकर दोनो देवियो को साथ लिए सीधे शस्त्रागार आ खडे हुए। वहाँ हजारो तेज तलवारें थी। उनकी चमक चकाचौंध कर देती थी। अत्तिमव्वे ने एक को हाथ में लेकर उंगुली से धार की जाच की। उसको कमान से झुकाकर परीक्षा ली। क्षणभर नागदेव और गुडुमव्वे ने तलवार चलाकर वीर रस का दृश्य सजाया। तलवारें चचला सी चमक रही थी। विजली से टूटकर गिरती थी। इन की नाना भगियाँ देखकर अत्तिमव्वे चमत्कत रह गई। मृत्यु देवता की जीभ-सी लगनेवाली तलवारो को यथास्थान रखा। तब भालो पर अत्तिमव्वे की दृष्टि गई। उसके इशारे पर नागदेव गुडुमव्वे के साथ भालो से कुछ देर खेलते रहे। अत्तिमव्वे परीक्षक के समान खडे खडे निरीक्षण करने लगी। ऐसे ही गदा उठाकर नागदेव और गुडुमव्वे ने भीम दुर्योधन के गदायुद्ध का अभिनय किया। वही स्थित धनुप उठाकर उसकी डोरी बाध दी और ठकारा। तब ऐसा लगा मानो वीन का तार सहसा टूटा हो। ऐसे ही शस्त्रागार के नए नए शस्त्रास्त्रो

की पत्नी न बनके अभिमन्यु हर्ष विभोर हुई।

कवि ! समझ गया था कि तुम केवल भावनालोक में विहार करनेवाली कामिनी मात्र हो। अब मेरी धारणा गलत निकली। पता चला कि तुम्हारी साहसिकता कम नहीं हुई है। सोच रहा था कि तुम कैसे जीने को या किसी कवि का जन्म दे दोगी।

— नागदेव ने अपने मन की बात कहकर चुटकी ली।

क्या कहा मेरी गोद से कोई कवि जन्म लेगा? धन्य भाग!

अभिमन्यु आनंदित हुई। उस का रूप मुख पर अंकित था।

क्यों तुम्हारी संतान राम जैसा पराक्रमी किंतु बनना चाहिए! समझी न

नागदेव ने अपनी इच्छा प्रकट की।

वह भी हो प्रियतम! मेरा पुत्र कवि भी हो और कवि (रो) भी हो।

अभिमन्यु ने कहा।

क्या कहा कवि और कवि? अर्थात् वह न केवल कलम के धनी हो बल्कि तलवार के भी धनी बने! खूब! कल्पना बड़ी सुंदर है।

—नागदेव हंसा। शायद नागदेव ने सोचा होगा कि ये दोनों गुण कभी एक में नहीं रह सकते।

क्यों ऐसे शंकित बन रहे? राम देव को देखिए। वे क्या महाकवि और महा पराक्रमी दोनों नहीं हैं? कवि होने से यह नियम तो नहीं कि वह सदा कलम ही घिसता रहे।

—और एक बात प्राचीन कवियों के काव्यों का रसास्वादन करनेवाले सहृदय भी एक अर्थ में कवि कहे जा सकते हैं। उदाहरण के लिए आप ही को लें। और मैं! जीती हूं तो हजार हजार प्रतियों के एक काव्य को बनाकर बाँटना चाहती हूं। वह किस

कवि की कल्पना से कम है ? कवि को महा सौध कहे तो प्रकाशक उन सौधो की नीव है। और सहृदय समूह उन सौधो के कलश है। आप दोनो कवियो के आश्रयदाता ह। इस पर वडे सहृदय है और काव्य रस रसिक हैं। कवि, प्रकाशक और सहृदय तीनो सारस्वत लोक के रत्न-त्रय होते हैं। रस प्रवाह का त्रिवेणी-मगम है।

— इस प्रकार गुड्मव्वे ने भावावेश मे आकर कवि शब्द की व्याख्या की।

तव तो मैं अपने को आडदा महाकवि कहने लगू तो क्या हर्ज है ?

कहते हुए नागदेव ने अपने पीठ ठोक लिया।

क्यो नही ?

गुड्मव्वे ने हँस कर जवाव दिया। उसकी हमी मे हँमी मिलाते हुए नागदेव बोले —

पर एक वात ! मैं रनवास का महाकवि हूँ। किसी राज दर्बार का नही।

ठीक तो है प्राणनाथ ! गुड मुझसे वटी चालाक है।

अत्तिमव्वे ने कहा।

जीजी ! तुम चाद हो तो मैं सागर हूँ - समझी।

— गुड्मव्वे ने स्पष्ट किया।

तव ! तुम दोनो देवियो के बीच मेरा कोई स्थान नही ?

— नागदेव ने घवडाए हुए से सशय व्यक्त किया।

आप का स्थान ? वह तो यहाँ है ?

गुड्मव्वे अपने हृदय की ओर दिखाते हुए हस पडी।

मेरी वात सुनो ! तुम सागर हो और अत्ति चद्र ! पर मैं क्या हूँ।

तुम ? सागर में तरग और चद्र मे चद्रिका।

— गुण्डमब्बे ने मुस्कुराकर उत्तर दिया।

गुरु! तुम्हारी यह उपमा ठीक नहीं बैठती है।

— नागदेव ने आक्षेप उठाया।

कोई अच्छी उपमा हो तो महाकवि ही बता दें!

— दोनों देवियों के मुँह से सहसा निकल पड़ा।

तब धन्य भाग! तुम दोनों ने मुझे महाकवि मान लिया है। महाराजा ने भी मुझे बड़ा वीर माना है। तो मैं वीर महाकवि हूँ!

— नागदेव ने गंभीर स्वर में कहते हुए सिर हिलाया।

पर उपमा की उपमा तो धरी रह गई।

अतिमब्बे ने छेड़ा।

अच्छा! अति! भूल गया था। क्या कहा था गुरु ने? तुम भी चादन! तुम चंद्र हो तो मैं कर हूँ। और तुम सागर हो तो मैं गागर हूँ!

— अतिमब्बे और गुण्डमब्बे दोनों हँस पड़ीं।

  

विजयपुर में बड़ी धूम थी। उत्सव का महल मानो जगमगाता बना था। सभी स्त्रियाँ अपने नन्हें मुन्नें बच्चों को कंधों पर झुलाकर खास उस महोत्सव के लिए बने हुए मण्डप में बैठ गई थीं। मण्डप के बीचोंबीच चांदी की जंजीरों से लटके हुए सोने के झूले में अतिमब्बे का बच्चा झुलाया गया था। नामकरण संस्कार का महोत्सव था।

वाह रे बच्चा! जन्म से ही तू इतना उदार और मिलनसार। तभी तो समवसरण बच्चों को बुला लिया है।

सभी निमन्त्रितों को प्रीति भोज दिया गया। सब बच्चों को

एक एक बांस की डोली, सोने की चमसी, चादी का प्याला, दिया गया । प्रत्येक मां अपनी अपनी सतान गोद में लिए अत्तिमव्वे को देखने आई और उसके बेटे को असीस दिया। बच्चो को ऊनी ओढनी और मखमली दरी देकर अत्तिमव्वे ने कृतज्ञता प्रकट की। साथ ही साथ प्रत्येक साध्वी के आँचल को मुट्ठी भर सोने की मुहरो से भरकर विदाई दी।

मां, तुम सचमुच इन शिशुओ की मां हो । तुम्हारी गोद सदा भरी रहे। तुम्हारी सौ सतान हो और सौ सौ साल तक जीए तुम्हारी सतान भी तुम जैसी कल्पलता बनें ।

वे सतुष्ट होकर ऐसे आशीर्वाद देती और विदा लेती।

अत्तिमव्वे सबसे मिलकर प्रीति से कहती –

देखो बहन, तुम अपना स्वास्थ सभालो। बच्चे को कुछ कष्ट होने न दो। निस्सकोच तुम मुझसे जब चाहे आकर मदद ले लो। इन दो-तीन महिनो में घी आदि की कमी नही होनी चाहिए, समझी न ? कुछ कमी हो तो कहला भेजो। कम से कम कष्ट में इस बहिन को याद करना। ऐसा कहकर विदा करती थी ।

ऐसी ममतामयी बात सुनकर स्त्रियो का हृदय आनद से भर उठा।

तुम सचमुच देवी हो देवी ! गरीबो से कौन सहानुभूति दिखाता है और उनका दुख दद सुनता है ? मां, जब से तुम्हारी गोद भरी तब मे इस नगर में गरीबी की कमर टूट गई है। तुम्हारा बेटा राजा बने ! हमारा कष्ट सदा के लिए मिट गया है।

घर लौट जाते जाते स्त्रियाँ आपस में बोलने लगी --

अत्तिमव्वे बडी तपस्विनी है सुनती हैं कि इसे द्रौपदी का अक्षयपात्र मिला है। नही तो कहाँ से इतने लोगो को देने के लिए इतना धन आता ? दोनो हाथो से उलीचती जाती हैं । खैर हम गरीबो का

आखिर तो मन खाना और तन ढाँकने को कपड़ा मिले तो बस। चाहे तो महलवाले ये अपने पास ही रख लें। सिंहासन उन्हीं का रहे। छत्र चामर आदि भी उन्हीं का हो। हमारे लिए तो सूखा खाना और चार कपड़ा भर मिले तो काफी है।

एक ने कहा।

किसी दूसरी ने कहा

सुनती हूँ कि प्रतिदिन मतिसम्मे की पूजा किया करती है और प्रार्थना करती है कि गरीबों का कष्ट दूर हो। तब उठकर पारिजात वृक्ष को हिलाती है तब वहाँ फूलों के बदले सोने की झड़ी लगती है। सच!

भला किस से सुना यह किस्सा?

—और एक ने कौतूहल से जिज्ञासा की।

मेरी पड़ोसिन इन के यहाँ नौकरानी है। परसों उसीने कहा था। सुनती हूँ कि कभी कभी वह सिद्धलोक जाती है। सच! एक बार उसे भी अपने साथ सिद्धलोक ले गई थी

अपनी बात को जोरदार शब्दों में समर्थित कर लिया

मतिसम्मे का बच्चा आगे चल कर हमारा राजा होगा। अभी से अपनी सेना जुटाने लगा है। आज जितने बच्चे यहाँ आए थे वे आगे चलकर अपनी अपनी योग्यता के मुताबिक कोई मंत्री कोई सामंत कोई अधिकारी बनेगा। मैंने तो अपने पुत्र का सिर उसके चरणों में झुका दिया। कौन जाने भविष्य के गर्भ में क्या क्या छिपा पड़ा रहता है?

—एक ने अपने बच्चे के भविष्य का स्वप्न देखने का प्रयत्न किया।

एक बात तो बहिन तुमने ठीक कहा। अवश्य यह राजा बनेगा। मेरी तो यही प्रार्थना है कि यह चिर आयु पाये। जन्म लेते

लेते जो गरीबो की सुध लेनेवाला हो वह क्या राजा बनने पर किसी को भूलेगा ? अभी देखो बरसो तक हम आराम से रह सकती हैं। उन्ही की दी गई गाय है। कपडा है। काफी धनराशि भी मिली है। अब चैन की बसी बजती रहेगी।

अरे पगली। यह चैन की बसी कितने दिनो तक बज सकेगी ? कुछ सोचा है ?

और एक ने छेडा।

क्यो दूसरा बच्चा होने तक ही सही।

— दूसरी ने उत्तर दिया।

पगली कही की। कितने दिनो तक ? यो क्यो पूछती हो ? नकद जो कुछ मिला है उससे साल दो साल तो कट ही जाएँगे और तब यह सोने की चमसी बेचा जाय तो और कुछ दिन काट सकेंगे। इस गाय को भी बेच डाले तो और कुछ दिन चलेगा। फिर वही जाने का मौका मिलेगा जहाँ से यह अब मिले। ऐसे सौ सौ मौका मिला करें। हम गरीबो के भाग्य मे खाली हाथ रहना क्यो न बदा हो पर उनका घर फूले फले और सदा भरा रहे।

सबने इसका अनुमोदन किया।

  

अत्तिमब्बे के पुत्र का नाम अण्णिगदेव रखा गया। सुहागिनियों ने बच्चे को गोद में उठा कर प्यार मे एक एक अग का चुम्मा लिया और पुचकारा। वह मानो मर्त्यलोक की ममता देख किलकारियाँ भरने लगा।

मुन्नू। तू अभी से किलकारियाँ करता है ? क्यो ?

— एक ने बलैय्या ली।

मानो यह साक्षात् जिनबिंब है। अभी अभी इस लोक मे

आया। आते ही उसने कितनी धूम मचाई है। बेटी पुराणों में गर्भावतरण और जन्मावतरण का वर्णन सुना था। अब इसने सब कुछ करके दिखला दिया।

यह सुनकर अत्तिमब्बे ने प्रसन्न होकर कहा —

यह सब आप की कृपा है।

अरे बेटे। अभी से घर में ऐसी लूट मचाती है। न जाने आगे क्या कर बैठेगा।

— एक ने प्यार से उसका चुम्मा लिया।

बच्चे का हाथ उस समय उस महिला के कण्ठहार से लगा। उसे बच्चे ने पकड़ लिया। तब शिकायत के स्वर में अत्तिमब्बे से बोली —

देखो बेटी! यह अभी से मेरे कण्ठहार छीन लेना चाहता है। यों कहती हुई उसे बच्चे के गले में पहना दिया।

अत्तिमब्बे मना करती रह गई।

देखो बेटी! तेरा यह मन्ना देना भी जानता है और लेना भी।

— और एक ने कहा और अत्तिमब्बे को हँसाया।

हाँ माँ को पता है न यह। पर रूप बाप का ही है।

पर मैं समझती हूँ कि नाक दादी की-सी है।

यह पैर! हाँ हाँ दादा की का ही है।

— इस प्रकार बच्चे के वर्णन में कई सुहागिनें लग गई थी।

देखो दादी। तुम्हारा यह लाडला स्त्रियों के गले पर अभी से हाथ मारता है।

एक बड़ी महिला ने पद्मब्बे से कहा।

पद्मब्बे ने क्रोध का अभिनय करते हुए डाँटा

तुम किसे दादी कहती हो देखो मेरे दाँत गिरे नहीं हैं? मेरी कमर सीधी है?

जाने दो दादी। जव वहू ने वेटे को जन्मा तभी मे तुम दादी वन गई। तुम्हारे दात और कमर की वात रहने दो। क्या अव नवेली वन सकोगी ?

— पहली स्त्री ने अपनी वातो का समथन किया।

खैर ! मैं अपने मुन्नू की दादी हूँ। दुनिया भर की दादी थोडे ही हूँ।

पद्मव्वे ने उसी धुन में कहा।

रहने दो दादी ! तुम्हारे मुन्नू से ही पूछ ले। ऐसा कहती हुई वच्चे को गोद में लेने गई तो उसने सहज ही पैर उछाल दिया। मानो गोद लेनेवाली को लात जमा दी।

हाय रे वाप ! यह देख, मुझे लात मारना है !

• वह वोल उठी।

देखा ! तुम लोगो का मुझे दादी कहना यह पसद नही करता है। समझी ? मैं केवल मेरे इस मुन्नू की दादी हूँ। अकेले मुन्नू की।

-- पद्मव्वे इसे गोद में लेकर इठलाने लगी।

ठीक है, अव अकेले मुन्नू की दादी हो और ------

एक ने छेडा।

तुम वडी चुडैल हो

पद्मव्वे ने उसे डाटते हुए वच्चे को डोली में सुलाकर डोरी पकडने का प्रयत्न किया।

सब ने बच्चे को वारी वारी से झुलाया।

अण्णिगदेव को भेंट के रूप में ढेर के ढेर सोने या चादी के कटोरे, तश्तरी, प्याले कगन खिलौने आदि आये। जैसे यात्रार्थी अपने आराध्य के सम्मुख अपनी गाढी कमाई न्योछावर कर जाते हैं उसी प्रकार अण्णिगदेव के सम्मुख सब की भेंटो की वौछार होने लगी। कपडे लत्तो की वात कौन कहे ? नगर भर के लडको में वाँटने पर भी

काफी मात्रा में बहुधन आता। सोने के न जाने कितने हिंडोले भेंट में आए। राजा महाराजाओं की ओर से भी हैसियत के मुताबिक भेंट आई थी।

अत्तिमब्बे को कहीं बाहर थकावट न हो यह सोचकर गुंडमब्बे उस के स्थान में जाकर बैठ गई और अत्तिमब्बे को आराम लेने दिया। पर यह रहस्य किसी की समझ में नहीं आया। सब पूर्ववत् आनन्दोल्लास चलता रहा।

सभी जिनालयों में विशेष पूजा-पाठ हुआ। बच्चे का जन्म जिस दिन हुआ उस दिन से जन्मकल्याण आदि महोत्सव मनाए गए और जिनमूर्तियों की स्थापना कराई गई। अण्णिग देव का तुला भार सोने से कराया और दस-एक मंदिरों को उसके वजन भर सोना भेंट किया। इतना करने पर भी संपत्ति जरा भी कम नहीं हुई भला जहाँ एक देने पर दो दो आवें तो घाटा कैसे हो? अण्णिग के जन्मोत्सव पर दस्सप ने लाखों खर्च किया। दोनों हाथों लुटा दिया। पर नामकरण के अवसर पर भेंट के रूप में दुगुना जमा हो गया। महासागर हमेशा उदार होता है। मेघों के द्वारा अपनी संचित जलराशि को घर घर गली-गली नगर नगर ले जाकर बरसा देता है। इस बहाने सारे संसार को सुख शांति का संदेश भेज देता है। पर कुछ दिनों में सारा जल इधर उधर बहते भटकते अन्त में उसी सागर में आ समाता है।

अत्तिमब्बे साक्षात् उदारता की पुतली थी। उसका तो राजयोग था। वहाँ लोभ का नाम नहीं था संपत्ति की कमी नहीं थी। जहाँ लोभ नहीं संपत्ति माया आदि की रहती है यह बात चरितार्थ हुई थी।

दसवी सदी के प्रारभ मे चालुक्य राष्ट्रकूट के अधीन थे। राष्ट्रकूट और गग परस्पर सहयोग रखते आए थे। अतएव दोनो की श्रीवृद्धि हो रही थी। गगवशज मारासिह मानो शत्रुओ के लिए सिह ही था। उसका अमात्य था चामुडराय। यही सेनाधिपति भी था। इसे समर-परशुराम और अरिभयकर आदि कहा करते थे। राष्ट्रकूटो का कर्क स्वय दुर्बल था। अतएव गग्रो के कृपा-बल पर राज्य करता था।

यद्यपि राष्ट्रकूट और चालुक्यों में नाता-रिश्ता था, फिर भी कभी कभी आपस में सघर्ष भी कर बैठते थे। अरिकेसरी द्वीतीय के जमाने मे रष्ट्रकूटो में परस्पर फूट पैदा हुई। गोज्जिग ने अपने बडे भाई को सिहासन से उतार दिया और स्वय राजा बन बैठा। वह प्रजा पीडक बन कर कुख्यात हुआ। तब अरिकेसरी द्वितीय ने विवश हो कर गोज्जिग पर धावा किया और उसे हराया। राष्ट्रकूट साम्रज्य के उत्तराधिकारी के रूप में गोज्जिग के चाचा बद्देग को अभिपिक्त किया। तभी से अरिकेसरी राष्ट्रकूट प्रतिष्ठापनाचाय नाम से प्रख्यात हुए। कृष्ण तृतीय के जमाने में राष्ट्रकूट साम्राज्य सुभद्र था, पर जब कृष्ण का पुत्र सिहासन पर बैठा तो साम्राज्य में विघटन-कारी शक्तियाँ बल पकडती गई। परिणामत राष्ट्रकूट और चालुक्यो के सबध साम्रज्य की सीमा में कभी कभी सघर्ष होने लगा।

तैलप के हितैपियो ने सलाह दी स्वामिन्! आप जितना सतर्क रहें उतना कम है। राष्ट्कूट जैन हैं और आप के सचिव और सेनाधिप भी जैन हैं। अब लडाई में कही धोखा दे बैठें तो बडा अनर्थ होगा। समझिए सर्वनाश हो जाएगा।

उसके उत्तर में चैंकप ने कहा था किसके बारे में यह कह रहे हैं ? और किससे ? चालनय साम्राज्य की नींव किसने डाली ? हम यद्यपि इसके शासक हैं पर सोचिए इस साम्राज्य का हाथ उनके हाथ में अबतक सुरक्षित रहा है। अबतक हमने जैनधर्मावलम्बियों में राष्ट्रद्रोह की गंध तक नहीं पाई है। अपने धर्म के प्रति आस्था रखते हैं तो योग्य ही है। अतः इस नाते उन पर संदेह नहीं करना चाहिए। आप अपनी बात मन में ही रखे रहिए। किसी के सामने कहने का साहस न कीजिएगा।

इधर समालोचन करने के निमित्त वस्कप और मास्कप को बुलाया गया और वे तुरत आ उपस्थित हुए।

अब राष्ट्रकूटों से युद्ध अनिवार्य बना है। आप में से एक पर राजधानी की रक्षा का भार होगा। दूसरे को रण क्षेत्र का भार सम्भालना पड़ेगा।

— चैंकप ने अपना आदेश सुनाया।

श्रीमान् जी ! यदि आप अन्यथा न मानें तो मैं अपने मन की बात कह देना चाहता हूं।

— वस्कप ने बड़े संकोच से प्रार्थना की।

वस्कप जी ! आप यद्यपि सचिव हैं पर हमने सदा आप की वय और अनुभव देखकर अपने पितृ-तुल्य ही माना है। आप अपने विचार निस्संकोच कह सकते हैं।

प्रभो ! परिस्थिति बड़ी गंभीर और कठिन है। युद्ध में हार हो या जीत दोनों के लिए तैयार तो रहना पड़ेगा। जय हुई तो कोई बात नहीं पर कहीं हार गए तो समझिए कि सारा लोक हमें अपराधी ठहराएगा।

— वस्कप की बात बीच में ही रुक गई।

वस्कप जी कहिए। आप अपने मन की बात कह डालिए तो—

तैलप ने व्यग्रता दिखाई ।

अब राज्य के सब पदाधिकारी जैन हैं। सेना मेरे पुत्र के अधीन है। कही कुछ हुआ तो हम बदनाम होगे। सारा जैन-समाज वदनाम होगा। लोग कहने लगेंगे कि जान बूझ कर हम राष्ट्रकूटो से मिले, इस हार में इनके हथकडा है आदि कह कर निदा करने लगेगे। राप्ट्रकूट भी जैन हैं और उनके सहायक गग भी जैन हैं। उनसे युद्ध करने मुझे और मेरे पुत्र को ही जाना होगा। हम भी जैन हैं। अतएव आप कुछ दिनो के लिए सचिव एव सेनापति पद से जैनो को निवृत्त कर दीजिए। इस प्रकार प्रभो हम को वदनाम होने से बचाइए।

दत्लप ने साग्रह प्रार्थना की।

मल्लप जी, आप अपना मत बताइए ।

तैलप ने उनकी तरफ मुडकर उन का भाव ताडने के लिए पैनी दृष्टि से देखा।

प्रभो ! आप जानते हैं कि मेरे भाई ने आप के लिए प्राण-त्याग किया है। मैं और मेरे पुत्र चालुक्य साम्राज्य के सेवक हैं। इतना होते हुए भी परिस्थिति को देखते हुए कहना होगा कि यह वडी नाजुक है। अपने विचार में सब जैन पदाधिकारियो को नजर वध कर रखना योग्य है। अव की वार युद्ध की वागडोर अपने हाथ मे सभालिए। मानव मन का क्या भरोसा। कौन जाने कब किस प्रलोभन में आकर वह पलट खाएगा ?

इस प्रकार मल्लप ने अपनी समझ मे अमूल्य सलाह दे दी।

आप दोनो समधी है न ? वडे सचिवोत्तम हैं ! बडी योग्य सलाह है ! धन्य भाग !!

-- कहकर तैलप ठठाकर हस पडे।

फिर बेचैनी से उठ खडे हुए और वोले

दत्लप जी, हमने पहले ही कहा है कि आप हमारे लिए

मित्र-तुल्य हैं। आपही ने हमारा पालन पोषण किया है। वस्तुतः भी समझिए कि आप हमारे चाचा हैं आप का पुत्र नागदेव हमारे चचेरा भाई है। अब यदि आप युद्ध करना नहीं चाहते हैं तो एक काम कीजिए हमीं को कारागृह में रख दीजिए। चालुक्य साम्राज्य हमीं को राष्ट्रकूटों के हाथ सौंप दीजिए। औरों की सहायता से लब्ध होनेवाली जयश्री की अपेक्षा अबतक हमारे आत्मीय रहकर हमें महाराजा की गद्दी पर बिठाकर, हमारे यश के लिए कारण बने हुए आप लोगों के सम्मिलित होकर धोखा देने पर मिलनेवाली हार हमारे लिए श्रेयस्कर है। इस हार को हम अपना महाभाग्य मानेंगे। अब युद्ध सन्निहित है। हम किसी को भी पदच्युत करना या रोकना नहीं चाहते। बेड़ा आप के हाथ में है। आप धोखा ही देना चाहें तो कौन रोक सकता है?

इतना कहकर तैलप मण्डप में चले गए।

  

नागदेव महा साहसी था। एक बार युद्ध के हाथी पर गदा प्रहार करके उसका कुम्भस्थल तोड़ डाला था। इस साहस कार्य से प्रसन्न होकर तैलप महाराजा ने नागदेव को भरी सभा में 'भ मल्ल' की उपाधि देकर सम्मानित किया था। कई लड़ाइयों में नागदेव के कारण ही तैलप विजयी बन सके थे।

एक बार की घमासान लड़ाई में एक बात हुई। तैलप की सेना परास्त होकर भागने लगी। तब नागदेव केवल दलपति था। तैलप ने उसे बुलाकर अपनी समस्त सेना का सेनानी बना दिया। नागदेव ने ऐसा साहस दिखाया कि युद्ध का पासा ही पलट गया। वह शत्रुओं को गाजर मूली के समान काटकर फेंकता था। विपक्षियों की सेना अब

लडाई करने आई तो घडी दो घडी के अदर अपने असीम पराक्रम से उन्हें केले की भाति काट काट कर मैदान को पाट दिया था। उस समय दुश्मनो को लग रहा था कि अब खैरियत नही है। भाग जाना भी मुश्किल है। उन्होने विवश होकर कई मतवाले हाथियो के साथ एक दम हमला किया। वे चिग्घाडते हुए नागदेव पर झपटे। नागदेव को पकडने के लिए वे अपनी सूंड ऐसे हिला रहे थे मानो कृष्णसर्प चारो ओर से आ घेर रहे हो। नागदेव अग्निपर्वत सा जाज्वल्यमान था। दोनो हाथ में तलवार लिए उन सूंडो को काट काटकर गिराना शुरू किया। जिस हाथी की सूंड कटती वह चिग्घाडते चिग्घाडते अधा धुध भागने लगता। आपस में टकराकर गिर पडते। गज-सेना की हिम्मत छूट गई। शत्रुओं के छक्के छूट गए। कटी हुई सूंड चटपटा रही थी। लहूलुहान हो गई थी। नागदेव की तलवारें आग की लपटो के समान चमक रही थी। कोमर युद्ध में जय-वधू ने तैलप के गले जयमाला पहना दी। तभी प्रसन्न होकर तैलप ने नागदेव को 'दिग्गज' की खिल्लत दी और सम्मानित किया।

दिन व दिन नागदेव की पद-प्रतिष्ठा बढने लगी। पाचाल सेना-सागर के लिए वडवानल बनकर नागदेव ने विजय प्राप्त की थी। करहट में मल्लप का मुकविला करके सुभट-त्रिनेत्र बन विराजमान हुआ। नागदेव के चरण-चिन्ह देख कर विजय-श्री उसके पीछे पीछे जाने लगी। नागदेव ने न कभी हिम्मत हारी न कभी हार ही इनके पाले पडी।

ऐसे साहसी का समादर करके, स्नेह सपादन करके तैलप ने उसका उत्साह बढ़ा दिया था और उस में राज-भक्ति की जड जमा दी थी।

  

मल्लप और नागदेव दोनों के लिए यह परीक्षा का समय था। राष्ट्रकूट और उसके सहायक भी दोनों जैन थे अपने जैन होते हुए उनसे लोहा बजाना था। अतएव दोनों ने अपने अपने पुत्रों को बुला भेजा। उनके साथ दोनों ने अलग अलग विचार किया। उनका अभिमत जानना चाहा।

पिताजी! युद्ध क्षेत्र में कौन अपना होता है? यदि इस अवसर पर हम दस्त-अन्दाज़ नहीं करें तो अब तक जो कुछ किया है सब व्यर्थ हो जायगा। सच पूछा जाय तो धर्म और राजनीति में गड़बड़ नहीं करना चाहिए। अब तक हमें आश्रय देकर पद और प्रतिष्ठा देकर सम्मान किया है तो चालुक्यों ने। भला राष्ट्रकूटों ने हमारे लिए ही क्या किया है? अब राष्ट्र ऋण चुकाने का मौका आया है तब धर्म के बहाने हम पीछे हट जायें? तब तो हम न इस घाट के होंगे न उस घाट के। इधर-उधर दोनों से भ्रष्ट हो जायेंगे। जैन धर्म ने कहाँ राष्ट्रद्रोह करने का आदेश दिया है? अपने वैरी से टक्कर लड़ने का आदेश गृहस्थों को महावीरस्वामी ने दिया है। मैं मर सकता हूँ पर बदनाम नहीं बन सकता। क्या नमक हराम बन कर नारकीय कीड़ा बनूँ?

नागदेव ने इस प्रकार अपना अभिमत सुना दिया।

मल्लप के पुत्र भी राष्ट्र निष्ठा में अद्वितीय थे। राष्ट्र की पुकार पहले सुनी जाय बाद को और कुछ—इस निश्चय के साथ राष्ट्रकूटों के मुकाबिला करने का संकल्प किया गया।

अतिमब्बे का पुत्र एक साल का था। अण्णिगदेव घर घर आँगन के धीमे हाथों हाथ आता जाता रहा कभी दादी की पीठ पर सवार होकर चलता कभी नागदेव को देखकर दादू जी दादू जी कह उसके कन्धों पर चढ़ बैठता और ताली बजा बजाकर किलकारियाँ भरता था। गुंडमब्बे और अतिमब्बे दोनों को माँ कह देता। यह

सुनकर लोग हँसते, फिर भी वह बुरा नही मानता था। उसका अरबराकर चलना क्या ही अच्छा लगता था। दल्लप को देखते ही उसे घोडा बना कर सवारी का खेल खेलता था। दल्लप को झुकना ही पडता था। वह पीठपर सवार हो जाता, पद्मव्वे दौडे दौडे आती और मुन्नू को सँभालती ताकी वह लुढक नही जाय। गुडुमव्वे और अत्तिमव्वे इस दृश्य को देखकर फूले नही समाती थी। क्योकि नटखट घोडे के समान उस समय दल्लप का उछलना और कूदना क्या ही अच्छा लगता था। चालुक्य साम्राज्य के अमात्य और सेनाधिपति अण्णिगदेव का वाहन बन कर खेलते थे।

एक बार तैलप के यहाँ उसे ले गए थे। तब अण्णिगदेव तैलप को ही घोडा बनाने का आग्रह करते हुए मचल पडा था। बच्चे का मन रखने के लिए वात्सल्य-हृदय तैलप ने घोडा बन कर खेला भी था। अण्णिगदेव का जन्म दिन से दल्लप का घर स्वग सदृश बन गया था। सदा हर्षोल्लास की तरग उठनी रहती थी। घर का सर्वाधिकारी मुन्नू बन गया था। मुन्नू के सार्वभौम अधिकार में किसी को हस्तक्षेप करने का हकनही था। सच तो है कि बच्चो के साथ खेलते समय चाहे कोई राजा हो या मत्री अपना व्यक्तिगत स्थान-मान पद-प्रतिष्ठा आदि भूलकर तन्मयता से खेलने में ही तो आनद है। इससे बढकर घर में सुख सतोष और क्या होगा?

एक बार नागदेव पत्नी और पुत्र के साथ उपवन गया वहाँ बच्चे को पेड की छाया में बिठाकर स्वय पत्नियो के साथ। आँखमिचौनी खेलने लगा। कभी कभी बदरो के समान पेड पर चढते, छलागे भरते। इन को एक पेड से दूसरे पेड पर कूदते देख कर स्वय बदर भी लजा जाते। अण्णिगदेव के आनद की सीमा ही नही रहती। माता पिता को देखकर स्वय छोटे छोटे पेड पकडकर उछलना और कूदना था।

एल्लप और मल्लप दोनों के लिए यह परीक्षा का समय था। राष्ट्रकूट और उसके सहायक गंग दोनों जैन थे स्वयं जैन होते हुए उनसे लोहा बजाना था। अतएव दोनों ने अपने अपने पुत्रों को बुला भेजा। उनके साथ दोनों ने अलग अलग विचार किया। उनका अभिमत जानना चाहा।

पिताजी! युद्ध क्षण में कौन अपना होता है? यदि इस अवसर पर हम शस्त्र-ग्रहण नहीं करें तो अब तक जो कुछ किया है सब व्यर्थ हो जायगा। इस युद्ध काल में तो धर्म और राजनीति में गड़बड़ नहीं करना चाहिए। अब तक हमें आश्रय देकर पद और प्रतिष्ठा देकर सम्मान किया है तो चालुक्यों ने। भला राष्ट्रकूटों ने हमारे लिए तो क्या किया है? अब राष्ट्र ऋण चुकाने का मौका आया है क्या धर्म के बहाने हम पीछे हट जायें? तब तो हम न इस घाट के होंगे न उस घाट के। इधर उधर दोनों से भ्रष्ट हो जाएँगे। जैन धर्म ने कहाँ राष्ट्रद्रोह करने का आदेश दिया है? अपने वैरी से डटकर लड़ने का आदेश गृहस्थों को महावीरस्वामी ने दिया है। मैं मर सकता हूँ पर बदनाम नहीं बन सकता। क्या नमक हराम बन कर नारकीय कीड़ा बनूँ?

नागदेव ने इस प्रकार अपना अभिमत सुना दिया।

मल्लप के पुत्र भी राष्ट्र निष्ठा में अद्वितीय थे। राष्ट्र की पुकार पहले सुनी जाय बाद को और कुछ—इस निश्चय के साथ राष्ट्रकूटों के मुकाबिला करने का संकल्प किया गया।

अत्तिमब्बे का पुत्र एक साल का था। अण्णिगदेव घर घर वंश के जैसे हाथों हाथ माना जाता रहा कभी हाथी की पीठ पर सवार होकर खेलता कभी नागदेव को देखकर बाबू जी बाबू जी कह उसके कंधों पर चढ़ बैठता और ताली बजा बजाकर किलकारियाँ भरता था। गुंडमब्बे और अत्तिमब्बे दोनों रो भी कह देता। यह

सकता है सब कर रहे हैं। एक प्रांत के राजा बना देने तक का प्रलोभन दिया है।

— नागदेव की बात बीच में ही रुक गई।

आपने क्या उत्तर दिया ?

— गुड्डुमव्वे ने कुतहल से प्रश्न किया।

तुम दोनो की राय जानना चाहता हूँ।

— नागदेव ने कहा।

प्रियतम! हमारी राय किस लिए ? क्या यह ऐसी कोई जटिल समस्या है कि हमारी राय लेकर ही उत्तर दें ? जान लीजिए आप की इन दो सुंदर स्त्रियो में कोई एक को माग बैठे तो क्या हमारी राय लेकर उसे जवाब देने की बात सोचिएगा ?

— गुड्डुमव्वे की बात कुछ कठोर ही थी।

देव, क्या हमें स्वामिद्रोह करके शत्रुओं का पक्ष लेना होगा ? तब क्या हमारा वंश रह सकेगा ? हम क्या जीने योग्य रहेंगे ? न! न!! हमें उनका राज्य नही चाहिए ? क्या वह राज्य आचंद्रार्क टिका रहेगा ? शत्रुओं के छक्के छुड़ा कर ही अपनी तलवार नीचे रखिए। नही तो देख लीजिए कि कौन आप का आदर करेगा और कहाँ आप का गौरव रहेगा ?

अग्नि ! क्या ही अच्छा होता कि हम भी बंदर होते तब तो मुन्नू को भी साथ लेकर उछल सकते थे।

नागदेव ने गंभीरता से कहा।

प्रियतम ! क्या इतना सा सुख पाने के लिए बन्दर बनें ? क्या उसे भी अपने साथ लेकर थामने की इच्छा है ? क्या भिखारिनों को अपने बच्चों को गोद में लिए फिरते नहीं देखा है ? चाहे तो मैं भी अग्नि को ऐसे ही बांध के ला जाऊँगी।

— अत्तिमब्बे ने कहा।

नहीं यों ही कहा।

नागदेव ने उतना उत्साह नहीं दिखाया।

प्राणप्यारे ! आज आप अनमन क्यों हैं ? आखिर बात क्या है ?

— गुंडमब्बे ने कुतूहलवश प्रश्न किया।

ध्वनि में ममता और आत्मीयता कूट कूटकर भरी थी।

ठीक ताड़ा गुंडू ! आज एक जटिल समस्या सता रही है।

नागदेव ने उत्तर दिया।

समस्या ? जटिल ? — अत्तिमब्बे ने आश्चर्य से दुहराया।

राष्ट्रकूटों से लोहा बजाना है।

संक्षेप में नागदेव ने कह दिया।

क्या शिमिशिख भी पानी से डरेगा ?

गुंडू ने आश्चर्य प्रकट किया।

चामुण्डराय का सामना करना है।

— नागदेव ने चिंतित मुद्रा बना ली।

संधि कर लीजिए — अत्तिमब्बे ने सलाह दी।

यह बात सोची गई। पर बात नहीं बनी। वे लोग मुझे राष्ट्रकूटों का पक्ष लेने के लिए फुसला रहे हैं। जो कुछ करते बन

सकता है सब कर रहे हैं। एक प्रात के राजा बना देने तक का प्रलोभन दिया है।

— नागदेव की बात बीच में ही रुक गई।

आपने क्या उत्तर दिया ?

— गुड्डुमब्बे ने कुतहल से प्रश्न किया।

तुम दोनो की राय जानना चाहता हूँ।

— नागदेव ने कहा।

प्रियतम ! हमारी राय किस लिए ? क्या यह ऐसी कोई जटिल समस्या है कि हमारी राय लेकर ही उत्तर दे ? जान लीजिए आप की इन दो सुंदर स्त्रियो में कोई एक को माँग बैठे तो क्या हमारी राय लेकर उसे जवाब देने की बात सोचिएगा ?

— गुड्डुमब्बे की बात कुछ कठोर ही थी।

देव, क्या हमें स्वामिद्रोह करके शत्रुओं का पक्ष लेना होगा ? तब क्या हमारा वश रह सकेगा ? हम क्या जीने योग्य रहेगे ? न ! न !! हमें उनका राज्य नही चाहिए ? क्या वह राज्य आचंद्रार्क टिका रहेगा ? शत्रुओ के छक्के छुड़ा कर ही अपनी तलवार नीचे रखिए। नहीं तो देख लीजिए कि कौन आप का आदर करेगा और कहा आप का गौरव रहेगा ?

— अत्तिमब्बे का विचार स्पष्ट था।

प्राणेश्वर ! कल ही आप कूच कर दीजिए। अब किसी से सलाह लेने की जरूरत नही है। हम अपने राष्ट्र के लिए सर्वस्व त्याग करने को सिद्ध हैं। युद्ध में काम आए तो वीर स्वर्ग प्राप्त होगा, विजयी हुए तो यहाँ सम्मान पूर्वक जिएँगे। दोनो दशा में आप की विशद कीर्ति अजर और अमर होगी। यदि अब आप कन्नी काटे या द्रोह कर बैठे तो न केवल आप बदनाम होंगे बल्कि आप की संतान निरंतर इस अपमान का शिकार बन जाएगी।

— गुणमञ्जरी ने निर्णय दे दिया।

प्रियतम आप बिना खाना पीना किए चल उठ आए। आप भग्नमन्य हैं। क्या हम सुन्दरियों के प्रति बनने मात्र से आप निर्वीर्य बन गए? आप केवल ऐसा मन कर रह जायें कभी हम यह पसंद नहीं करती। आप जिस सौन्दर्य का इन आँखों से देख रहे हैं वह छल जानेवाला है। मैं नहीं समझती कि सदमस्त क्यों युद्ध के अवसर पर मानिनियों की सलाह लेने के लिए आए। आप विजय हैं! आप समर विजेता हैं! युद्ध से आप क्यों कर पीछे हटेंगे?

— मतिमञ्जरी ने उत्साह बढ़ाने का प्रयत्न किया।

फूल से फूल पर उड़नेवाले भ्रमर के समान हर्ष चित्त होकर तीनों अपने अभिराग के साथ खूब टहलते रहे। कोकिल के समान कूक कर गुणमञ्जरी ने सबको चकित किया। मयूरी के समान अभिनय करके मतिमञ्जरी ने पति को रिझाया। रसोल्लास से भीगकर तीनों जिनालय गए। वहाँ भक्ति भाव से नमित होकर घर चले आए।

उस रात को बड़े आराम से बिताया। सवेरे नर्तन हुआ। मतिमञ्जरी ने ऐसा नृत्यप्रदर्शन किया मानो स्वर-पुष्प बिखेर रही हो। परम संतुष्ट होकर नागदेव ने उसे दोनों हाथ में कसकर गले लगाया और तुम ही मेरी वीणा हो— कहते हुए रस से रम गया। जब गुणमञ्जरी ने वीणा के तार छेड़े तब नाद-तरंग ऐसी उमड़ उठी मानो ज्योत्स्ना सागर उमड़ पड़ा हो। तब दोनों बहिनों ने अभिनय किया। दुपहरी भी ढली। बहुत गर्मी से छटपटाईं। संध्या की धूप में तन फैलाकर झूमनेवाली भामिनी भी झूम उठी।

सखि! तुम दोनों की कला का पूर्ण रसास्वादन करने के लिए एक जन्म पर्याप्त नहीं है।

रसावेश में नागदेव ने कहा।

इसी लिए तो हम नित्य प्रार्थना करती हैं कि जन्म-जन्मान्तरों

ं आप ही हमारे पति हो।

ऐसा कहकर गुड्डमव्वे मुस्कुराई।

गुडू ! तुम्हारी बहिन की गोद तो भरी। अब तुम्हारी ..

नागदेव भी मुस्कुराए।

हम दोनो बहिनो के आप पति हैं न ? बस उसी तरह अण्णिग हम दोनो की सतान है समझिए। अब भी वह पहिचान नही सकता कि कौन गुडू और कौन अत्ति ! दोनो को माँ कहना है।

• गुड्डमव्वे ने निश्चित होकर कहा।

प्रियतम ! कल जय-यात्रा पर जाएँगे न ? अब आराम लीजिए।

अत्तिमव्वे ने कहा।

अत्ति ! तुम मलय मारुत हो और गुडू चादनी रात है। यह अण्णिग वसत ऋतु है। ऐसे वातावरण में कहो किसे नीद लगेगी ? क्या बेचारी नीद तुम दोनो से भी अधिक प्यारी होगी ?

• नागदेव बोले।

अब भले ही आप को थकावट महसूस नही हो। पर जब बिछुड कर जाएँगे तब की बात कहिए।

गुडमव्वे ने तर्क किया।

गुडू ! घर पर मैं बालक सा रहता हूँ। बड़ी युद्ध के मैदान में पैर रखते ही आगा पीछा कुछ नही सूझता। वहाँ उगलते हुए अग्निवत बन जाता हूँ। वीणा हाथ में लेकर जैसे तुम दोनो इस लोक को भूल जाती हो इसी प्रकार तीरकमान हाथ में लेते ही तुम लोगो को भूल बैठता हूँ। तलवार हाथ में लेकर चलूँ तो घासफूस के समान शत्रुओ को काटने के अतिरिक्त और कुछ सूझता ही नही।

-- इस प्रकार नागदेव ने वीरावेश में कहा।

पौ फटी सी दिखाई देती है। अहा ! शीतल पवन का यह

स्पर्श क्या ही सुखद है। उठिए घड़ी दो घड़ी आराम कीजिए।

रतिमंजरी ने सस्नेह यह निवेदन किया।

प्रिये तपस्या करना, निराहार रहना आदि मेरे लिए मामूली सी बात है। बिना नींद हफ्तों रह सकता हूँ। खाना पानी के बिना रह सकता हूँ। सुना है कि सौदागर मारवाड़ी को सौदा करते समय और किसीका ध्यान नहीं रहता है। वैसे ही जब मैं तुम दोनों के साथ रहता हूँ तो और कुछ ध्यान में नहीं आता। प्रिये तुम मेरी नींद हो। मुंजू तुम मेरी भूख। और यह सुख मेरा धन है।

— नामदेव की बातों से रसिकता बह निकली।

ओहो! आप सचमुच कवि बन गए हैं।

गुडमम्मे हँसी।

मैं कवि भी हूँ और कठोर कवि भी।

नामदेव ने अभिमान से कहा।

सारी रात ऐसे ही गपशप में बिती।

अगर जीवन में ऐसी रात एकाध ही मिले तो भी जीवन सार्थक है।

ऐसा कह कर अपनी प्रियतमाओं को छाती से लगाकर प्यार किया। तब तक अरुणोदय हुआ था। यह देख कर नामदेव ने कहा—

देखो एक भी स्त्री साथ रहे तो नींद बेचारी भाग जाती है तब दो दो ऐसी सुन्दरियाँ यहाँ तो कहना है क्या ?

ऐसा कहकर उठा और अपना काम पर चला गया।

चालुक्य सेना ने समरोत्साह से कूच किया। रणवाद्य बज उठे। विन्ध्योपम हाथी हजारों की संख्या में आगे बढ़े। सब के सब तेल से स्नात थे। उत्साह से चिंघाड़ रहे थे। घोड़ों को देखने से समुद्र में उठनेवाली उत्तुंग तरंग-मालाओं का स्मरण हो रहा था। पदातियों के पदाघात से उठी धूल से आकाश छा गया।

और स्वय दिशाएँ दिशाभ्रष्ठ हो गई । शस्त्रो की चमक ने चकाचौंध कर दिया। यौवनोन्माद में धनुष टकार कर उठे। तरकसो में समद्धि आ गई। चनुरगिनी सेना मान्यखेट पर झपटने चली।

सेनापति की वरदी पहने नागदेव घर आए। सभी वृद्धो को नमस्कार करके आशीर्वचन पाया। जिनगधोदक को रक्षामणि की भाति सिर पर धारण किया। वीरगीत गाती हुई अत्तिमब्बे और गुडुमब्बे ने नागदेव की आरती उतारी और सिर पर वीराक्षताएँ डाली। और दृष्टि दोष दूर करने के लिए एक नारियल तोडने ले आई। नागदेव ने उसे हाथ में लेकर हथेलियो के बीच में ऐसा दवाया कि नारियल एक दम टुकुडा टुकुडा हो गया, पानी चू पडा । पद्मब्बे इसे देख कर हर्षोन्माद में अपनी बहुओ को सबोधन करती हुई बोली—

देखो बहू, तुम्हारे पति की शक्ति कितनी है ।

आप बाहुबली के समान अभिमान-धन बने। शत्रु पर विजय पाकर आप घर लौटें। किसी भी कारण से आप का मन विचलित न हो । आप विजय-वधू के साथ घर आइए ।

— कहकर अत्तिमब्बे ने पति का उत्साह और बढा दिया।

आप लोकैकवीर अर्जुन-से लग रहे हैं। अर्जुन अजेय था, आप भी अजेय रहें। आप युद्ध में काल भैरव हैं। अवश्य अरिपुर भस्म करके मुख दर्शन दीजिएगा।

गुडुमब्बे ने कहा।

अण्णिगदेव को गोद में लेकर नागदेव कुछ क्षण तक खेलता रहा मानो गेंद खेल रहा हो। इस प्रकार सब से विदा लेकर सेनानी नागदेव सेना से मिलने गए। अत्तिमब्बे और गुडुमब्बे की दृष्टि उस पथ पर लगी रही जिस पथ से होकर नागदेव विजय-यात्रा करने निकले थे।

११

राष्ट्रकूटों में युद्ध की कोई विशेष तैयारी नहीं हुई थी। कृष्ण तृतीय के बाद शासन सूत्र भी ढीले पड़ गए थे। सेना में अनुशासन नहीं था। बहुत पुराना साम्राज्य था अतएव वह किसी भांति चला आ रहा था। राष्ट्रकूटों के सामंत गणों की शक्ति अभी अक्षुण्ण थी। दोनों वंशों में कई पीढ़ियों से रक्त-संबंध चला आ रहा था। गंगों का मारसिंह मानो कर्क का अंगरक्षक बना था। अंदर ही अंदर चालुक्य युद्ध की पूरी तैयारी करके इतने अंदर आया [illegible] यह बात न तो गंगों ने जानी थी न राष्ट्रकूटों ने ही। सागर के समान चालुक्यों की सेना आ गई है यह सुनकर कर्क सतर्क हुआ। सोच विचारकर मान्यखेट से निकला और दो-एक दिन में ही चालुक्यों को बीच में रोकने का निश्चय किया।

चालुक्य सेना का सेनाधिपति महा पराक्रमी नागदेव था। उस सेना में ऐसे ऐसे वीर थे जो तूफानवाली बिजली को हाथों से पकड़ने में भी आगा पीछा नहीं करते। नागदेव व्यूह रचकर युद्ध करता था। इस कला में उसका अपार कौशल था। संख्या की दृष्टि से सेना अधिक नहीं थी। फिर भी व्यूह रचना के बल पर उसका बल दुगुना तिगुना हो जाता था। पहाड़ को बहा देनेवाले प्रवाह को कृषि कुशल किसान मिट्टी की बांध डालकर नियन्त्रित कर देता ही है।

राष्ट्रकूटों की सेना संख्या की दृष्टि से चालुक्यों की सेना से कई गुना अधिक थी। भरपूर युद्ध-सामग्री भी थी। पर कोई ऐसा सेनापति नहीं था जो इसका उपयोग करे और सेना का संचालन बुद्धि-मत्ता के साथ कर सके। कोई कायर के हाथ में चक्रायुध हो तो क्या होगा? चक्रायुध चलाने की कला में परिणत हो और समय पर चलाने की हिम्मत ही नहीं तो उसका प्रयोजन है?

हफ्ते भर चालुक्यो और राष्ट्रकूटो मे घमासन लड़ाई हुई। चालुक्यों ने राष्ट्रकूटो पर हमला करके इस प्रकार उनका नाश किया मानो मदमाते हाथियो का झुड ईख के खेत मे पहुच कर सफा चट कर रहा हो। नागदेव जब कमान हाथ में उठा कर तीर चलाता गया तो कहना क्या एक एक तीर वज्र के समान टूट पडता और अपने साथ शत्रु का सिर भी लेकर गिर पडता था। वह हाथ मे तलवार लेकर झपटता तो देखना चाहिए था, वह युद्धोन्माद में कैसे काल-भैरव बन सकता था। उसकी तलवारें क्या थी मृत्यु की जीभें थी। जहाँ निकलती वहाँ चाहे हाथी मिले चाहे घोडा चाट डालती। नागदेव का युद्धोन्माद वर्णनातीत था। वह पैदल सिपाही पर बाज-सा झपटता और उसी को उठाकर शत्रु सेना पर दे मारता। वह तो फेंके जाने पर मर जाता ही पर साथ साथ धक्का देकर अपने साथ दो-चार सिपाही को लेकर चल बसता।

कक नागदेव के आघात से ढेर हुआ। सहसा वर्षा होने पर जनता जैसे भाग निकलती है उसी प्रकार सेनापति के गिर पडते ही राष्ट्रकूट-सेना बेतहाशा भागने लगी। चालुक्यो का सामना करने के लिए कोई नही रहा। राष्ट्रकूटो की राजधानी पर चालुक्यो का झडा फहराने लगा। शतमानो से सचित अपार सपत्ति तैलप के हाथ आई। उन्होने दिल खोलकर सैनिको में उसे लुटा दिया। जो जितना ढोकर ले जा सकता था उसे उतना धन दिया गया।

राष्ट्रकूटो पर चालुक्यो का हमला हुआ है— यह खबर पाते ही मारसिंह अपनी सेना लिए सहायता करने निकला। उस समय चामुडराय अन्यत्र चले गए थे। अतएव मारसिंह को ही आना पडा। पर खेद की बात थी मारसिंह राष्ट्रकूटो की सहायता नही कर सका, क्योंकि तब तक राष्ट्रकूट पूर्णतया हार गए थे। राष्ट्रकूटो के हितैषियो ने राजकुमार को किसी तरह बचाकर गुप्त द्वार से पलायन किया था। रास्ते में ही अनाथ राजकुमार की भेंट मारसिंह से हुई।

मारसिंह को बड़ा दुःख हुआ। सब कट चुका था। मारसिंह के पश्चात्ताप या संताप से अब कुछ नहीं बन सकता था।

फिर भी बदला चुकाने के उद्देश्य से सिंह-गर्जन करके मारसिंह ने नागदेव पर हमला किया। मारसिंह के साथ जोड़ा बजाने में नागदेव को विशेष आनंद मिला। उसका उत्साह उमड़ पड़ा। उसने अपने साहस को सार्थक माना। समझा कि अपना काम पूर्ण हुआ। सोचा कि उत्तर कुमारों से लड़ कर जीतने की अपेक्षा अर्जुन से जोड़ा बजा कर हार जाना भी श्रेयस्कर है। इस में हार जीत दोनों में कीर्ति है। और ऐसा सोचकर नागदेव ने हथियार उठाया। मारसिंह के साथ नागदेव का युद्ध वैसा ही था जैसे भीष्म पितामह के साथ वीर अभिमन्यु का था। मारसिंह की दृष्टि में नागदेव वीरता की पुतली था। उस के सजीव बदन देख कर देखते ही दंग रह गया।

मारसिंह ने द्वंद्व युद्ध करने का निश्चय किया। नागदेव ने भी स्वीकार किया। दोनों मल्ल-युद्ध में उलझ गए। नागदेव का दाँव बजाना क्या था मानो बिजली का कड़कना था।। क्षण भर दोनों ने परस्पर सामर्थ्य का अंदाज लगाते हुए एक दूसरे को घूर कर देखा। यह भरत और बाहुबलि के दृष्टि-युद्ध का स्मरण दिला रहा था। दोनों ने विपक्षी को दाँव में पाने का प्रयत्न किया। दाव को ऐसे भिड़े कि मानो दो सांड अपनी सींगों को अड़ाए एक दूसरे को ठेलना चाहते हों। मतवाले हाथी के समान भिड़े सूंड-सी भुजाएँ विपक्षी को पकड़ में लाने को आतुर हो उठी पर किसी का मनोरथ पूर्ण नहीं हुआ। तब गदा-युद्ध प्रारंभ हुआ। उनके गदा प्रहार से चिनगारियाँ निकल रही थी। अंत में मारसिंह ने एकाएक नागदेव पर सिंह के समान झपट कर गदा की जगह, उसी को पकड़ लिया और आकाश में फेंक दिया। चक्कर के समान हवा में गोता लगाते लगाते उछलकर जैसे ही नागदेव नीचे आ रहा था वैसे ही गेंद की भाँति

उसे पकडकर मारसिह ने जमीब पर दे मारा। नागदेव के हृदय में मानो प्रतिशोघ की आग भभक उठी थी। सभलकर उठा, शार्दूल के समान देखते देखते मारसिह पर सहसा आक्रमण किया। और उसे उठा कर इस भाति मडारने लगा मानो एक पवत दूसरे पर्वत को लिए बवडर में चक्कर काट रहा हो। इस युद्ध को देखते हुए दोनो ओर की सेना निश्चेष्ट खडी थी।

ऐसा लग रहा था कि नागदेव को मारना मारसिह नही चाहता। और मारसिह को मारना नागदेव नही चाहता। सेनाधिकारियो को यह एक वुझौवल पहेली बनकर सताने लगी। कई बार ऐसे मौके दोनो को मिले। यदि चाहते तो विपक्षी का सहार कर देते। पर ऐसे अवसरो पर उदासीन से रह जाते पर एक दूसरे पर ऐसा झपटते कि खतम कराना ही चाहते हो।

सहसा एक दुर्घटना हुई। राष्ट्रकूट के सेनापति वही, एक पेड पर छिप कर बैठा था। नागदेव को दांव पर पाकर सोचा कि अब खतम कर देना चाहिए। तुरत निशान लगा कर नागदेव के छाती पर एक भाला दे मारा। वह नागदेव के वक्षस्थल में जा धसा। नागदेव परकटे विध्याचल के समान बैठ गया। मारसिह ने तुरत उसे दोनो बाहुओ से उठाकर सभालने का प्रयत्न किया। उसे बडा पश्चात्ताप और खेद हुआ। पर किया क्या जाय ? जो नही चाहता था वह हो गया था। मारसिह पर नागदेव की मत्यु का गहरा प्रभाव पडा। उस दिन से उसे अन्नजल तक में अरुचि हो गई। सल्लेखन-व्रती से वीतराग दिखाई देने लगा। विजय से वैराग्य। यही तो विधि-विडबना है। होनहार को कोई मिटा नही सकता। कारण कुछ भी हो जो कुछ होना है वह होकर ही रहेगा।

विजय-श्री ने चालुक्यों का वरण किया। राष्ट्रकूटों के राज्य पर तैलप का अधिकार स्थिर हुआ। पर परिस्थिति ऐसी थी कि जैसे बच्चे को जन्म देकर माँ का स्वर्गवास हुआ हो। क्योंकि नागदेव की मृत्यु ने तैलप को बड़े संकट में डाल दिया था। जब नागदेव का पार्थिव शरीर राजधानी में लाया गया तब उसे गोद में रख कर तैलप इस भांति रो पड़े मानों स्वयं विधवा बना हो। वत्सल का हाल क्या कहा जाय! इकलौते पुत्र को खो कर पागल बना हुआ था।

वत्सल जी! हमारा अभिमन्यु अब नहीं रहा।

— तैलप प्रलाप करने लगे।

प्रभो! अब मेरा क्या होगा? यही एक बेटा था। अब घर पर दो दो विधवाओं को मुंह दिखाने कैसे जाऊं? उनकी सुहाग लुटी हम कैसे जीवित रहें? आप मेरा भी वध कर डालिए। यह सब से बड़ा अनुग्रह होगा। अब मैं जीना नहीं चाहता। मैं तो आत्महत्या कर लूंगा।

— कह कर जब सचमुच संगीन को अपनी छाती में भोंकने लगा तब तैलप ने सहसा उसका हाथ थामकर संगीन को झटके से छीन लिया।

वत्सल जी! क्या मैं आप की संतान नहीं हूं। जब तक मैं जिन्दा हूं तब तक आप अपने को दीन क्या मानते हैं? आप भी आत्महत्या कर लें तो मैं क्या करूं? मेरा क्या होगा? नागदेव की मृत्यु से मुझे क्या कम दुःख हुआ है? वादा करता हूं कि जब तक मैं जिन्दा रहूंगा तब तक आप से पुत्र के रूप में ही व्यवहार करूंगा। मेरे पुत्र को कैसे ला दूं?

होनी किस का है प्रभो? संसार तो क्षण-भंगुर है। खैर, आप

मेरे साथ पुत्र के समान ही वर्ताव किया कर पर ि ा शा ।।
मर नही सकते? सब व्यय का आश्वासन है।

— कह कर दल्लप सिर पर ार उठ गया।

तव फौज के प्रत्येक जवान ने दर ही बड़े शार नाग ो देखा। सब की आखो म आंसू की धारा बह रही थी। विजय लक्ष्मी का स्वागत फल-फूल से नहीं आसू से कर रहे थे। कुंकुम रोली लुटा कर नही सुहाग लुटा कर किया जा रहा था। संगीत पूर शोक और कातरता से • यह विधि विडवना थी।

सुगध द्रव्यो मे भरी पटी में नागदेव का शव विजयपुर भेजा गया। वहाँ शोक और करुणा का सागर ही उमड आया। मे नही सुहागिनी स्त्रियो ने युद्ध की भर पूर निंदा की।

गुड्, मेरे साथ आने का वडा दुराग्रह किया था। तो देखो अब कैसे जीवन को ही नष्ट करना पडा! क्या सोच रही थी कि जीजी के साथ रहना माता के साथ रहने के समान है? अब देखो न? तुम्हारा भ्रम दूर हुआ या नही?

इस प्रकार अत्तिमब्बे प्रलाप करने लगी?

हाय! मैंने तुम से युद्ध जाने के पूर्व अवश्य कहा था कि विजयी हो कर ही दर्शन देना। वह शाप नही था! शुभकामना थी। क्या इसे तुमने चुनौती मान कर मृत्यु को गले लगाया? इस प्रकार क्या मैं ही तुम्हारी मौत का कारण वन गई?

— गुडुमब्बे ऐसा सोचते हुए आँसू वहाने लगी।

मेरे स्वामी! क्या मरने के लिए ही हमारी सलाह माँगने आए थे? बाहुबली के समान बिना आगा पीछा देखे युद्ध करने की सलाह मैंने किस कुघडी में दी?

अत्तिमब्बे पैर के पास बैठकर रोने लगी। नागदेव के शव से वे दोनो इस प्रकार लिपट गई था कि पद्मब्बे को

पुत्र का शरीर दिखाई नहीं दे रहा था। पद्मब्बे ने किसी प्रकार भीड़ के बीच से रास्ता निकाल कर शव के पास जा कर देखा भीम के समान पराक्रमी पुत्र अब रक्त हीन पीला मुख लिए प्रेत बन पड़ा है। यह दृश्य उससे देखा नहीं गया। धँस कर बैठ गई। बेहोश हो गई।

होश आते ही बड़बड़ाने लगी --

अरी मेरे बेटे की बहू बन दूध बताशा खाना चाहती थी। अब मन पूरा हुआ न? दोनों बहिनों ने एक ही को पति बना लेने का आग्रह क्यों किया था ——

— कहती हुई फिर मूर्छित हो गई।

माताजी! अब हमारा क्या होगा अब हम किस लिए जिएँ? हम से कोई अपराध हुआ हो तो क्षमा कीजिए। प्राणेश्वर के साथ हम भी जाएगी।

--- अत्तिमब्बे बोली।

सास जी! आप ही जन्म-जन्मांतरों में हमारी सास रहें। यही मेरी अंतिम प्रार्थना है। अब मुझे सहगमन की अनुमति दीजिए।

कह कर गुंडमब्बे बहन के पैरों से लिपट गई।

गुड्! उठो। उठो। क्या सहगमन करते समय तुम्हें छोड़ जाऊँगी। उठो! हाय रे! क्या मेरे साथ सहगमन करने मात्र के लिए मेरे पीछे पीछे आई थी। उठो बहन! जो मेरा हाल होगा वही तुम्हारा भी होगा।

-- कह कर अत्तिमब्बे ने अपनी बहन को खींच कर छाती से लगा लिया और दोनों फूट फूटकर रोने लगीं।

हाय रे बेटा! हम सब को अनाथ बनाकर क्यों चले।

— ऐसा प्रलाप करती हुई पद्मब्बे ने बेटे के शव को गोद में उठाकर रखा। अत्तिमब्बे छाती पीट पीट कर रो रही थी। वहीं

पास ही बैठी थी।

इसी लिए तो बेटा हमने कहा कि दोनो एक ही को मत वरो। पर हमारी बात किसे पथ्य थी ? अब तक एक दिन भी तुम को रोते हुए नही देखा था। पर अब दोनो एक हो डोली में सुख निद्रा करने का स्वप्न देखते देखते सदा के लिए जीवन को नष्ट कर डाला न ?

अब्बकब्बे बड-बडाने लगी।

अब रोने से क्या होगा ? नागदेव को कोई जिला नही सकोगी। शव को बहुत दिनो तक रख लेना उचित नही है। उठिए उठिए। क्रिया-कर्म की बात सोचिए।

— वयोवृद्धो ने कहा।

क्रिया ! क्रिया !! कीजिए, कीजिए। पर कैसे देखू मैं अपनी दो दो बेटियो के कर्म को। उनकी सुहाग लुटी जा रही है ! पहले हमारी क्रिया कीजिए बाद को जो चाहे कर्म कीजिएगा।

— अब्बकब्बे ने खीफकर कहा।

मल्लप बडा धीर था। पर अब वह भी रो पडा। तैलप की रानी आई और नागदेव की पाद-धूलि से तिलक करती हुई शव के पास बैठ गई। रोनेवालो के बीच में स्वयं आंसू बहाने बैठ गई।

महारानी जी ! मेरे बेटे का बलिदान देखिए।

— पद्मब्बे बोली।

मामी, मेरे वस में क्या है ? अब क्या मैं तुम्हारे बेटे को जिला सकूंगी ?

यह रोने लगी।

रानी जी ! आप लोगो की साम्राज्य दाह ने मेरी दो दो बेटियो के मागल्य को मिट्टी में मिला दिया !

अब्बकब्बे ने डाटते हुए कहा।

ठीक कहती हो बहन ! पर कौन हम स्त्रियों की बात सुनता है। अपनी झूठी प्रतिष्ठा के लिए पुरुष आपस में लड़ते हैं और सुहाग कटती हैं हम स्त्रियों की। हम अबलाओं के आँसू में पुरुष तैरना चाहते हैं। इस में इनकी होड़ लगी रहती है। मेरा बस चले तो मैं युद्ध को सदा के लिए रोकना चाहती हूँ। सोचो न इस विग्रह में हमारा और तुम्हारा क्या स्वत्व है? अब इस साम्राज्य को लेकर भी क्या नामदेव जैसे वैभव को पा सकेगी।

— महारानी ने अपनी असहायकता का वर्णन किया। साथ ही कर्तव्य प्रज्ञा जगाकर सांत्वना देने का प्रयत्न किया।

नामदेव के सब संस्कार की तैय्यारी हुई। अतिमब्बे और और गुदुमब्बे भी तैय्यारी में लगी रही।

बहन ! मेरा अंतिम वर दान दो।

गुदुमब्बे ने याचना की।

गुदु ! क्यों इस प्रकार याचना कर रही हो? मैंने सब के मना करने पर भी क्या अपनी सेना का आधा तुम्हारे लिए नहीं दिया है?

अतिमब्बे बोली।

अब मेरी बात स्वीकार करो बहन। यही मेरी अंतिम अभिलाषा है।

— फिर गुदमब्बे ने प्रार्थना की।

क्या ? बहन !

— अतिमब्बे का कुतूहल बोल उठा।

जीजी ! तुम्हारा बेटा है। मेरा कोई नहीं है। मेरा जीवन अमावास्या की गहरी रात है। तुम मुन्नू के वास्ते जीवित रहो और मुझ निश्चिंत होकर जाने दो।

.... गुदुमब्बे की बात पूरी भी नहीं हो पाई थी कि अतिमब्बे

अत्यत रुष्ट होकर वोली।

भला, वेटे का वहाना दिखा कर मुझे सहगमन से वचित करना चाहती हो? क्या पति पर मेरा कोई हक नही? क्यो तुम ही उन्हें अपनाकर मुझसे सदा के लिए छीन लेना चाहती हो? मैं जिदगी भर जलता रहूँ और निश्चितता से सती वन कर इह और पर दोनो को तुम निभाओ खूब सोचा! सौत आखिर सौत ही तो होगी! मेरा कहना मानो। मानना ही पडेगा। तुमने वादा किया था कि मेरे कहे अनुसार ही चला करोगी। तभी तो मैंने अपने पति के हाथो तुम्हारी माँग भरवाई थी। अब तुम ही घर रहो, मैं सती बनूँगी। क्या अण्णिग तुम्हारा बेटा नही है?

वहन! ऐसा क्यो कहती हो? आखिर ससार क्या कहेगा? जैसे लोग कहेगे वैसे करे।

गुडुमव्वे ने असहायक ध्वनि में कहा।

लोग? ससार! अब कहाँ के लोग और कहाँ का ससार? जब जीवन ही वरवाद हुआ पडा है तो मेरा लोगो से या ससार से क्या वास्ता? जब मेरा राजा ही नही रहा तो यह ससार मेरे लिए घोर नरक है। अब मैं किसी की नही मानूँगी।

—अत्तिमव्वे ने दृढता से कहा।

वहन क्या हम दोनो की प्रतिस्पर्धा में अण्णिग अनाथ बन जाय?

— गुडुमव्वे यह कह रही थी कि अण्णिग वहाँ चला आया। अत्तिमव्वे का मातृ-हृदय मचल पडा। वेटे को छाती से लगा लिया। आँसू दुगुने वेग से उमड पडे। किसी प्रकार सभलकर फिर वोली—

गुडु! मेरे लिए इतना त्याग और करो! लो, यह तुम्हारा वेटा है। तुम्हें सौंप देती हूँ। बदले में मुझे सती होने दो।

अण्णिग को उठाकर अत्तिमव्वे ने गुडुमव्वे की गोद में डाल दिया।

जीजी ! क्या हमारे बुजुर्ग नहीं है ? उनके कहने के अनुसार
म करें।

गुरु ने सलाह दी।

मैं सती बनूँगी ! बनूँगी ! अवश्य बनूँगी ! इसे छोड़ कर और कुछ कहना हो तो कहो।

अतिमब्बे ने अपना निश्चय दुहराया।

सभी हितैषु वृद्धजनों ने मिलकर निर्णय किया कि गुडमब्बे सहगमन करें और अतिमब्बे अण्णिग के पालन पोषण का भार संभालें।

पद्मब्बे ने समझाया —

अत्ति तुम अण्णिग की माँ हो। अण्णिग के वास्ते तुमको जिन्दा रहना ही होगा। क्या मेरा दुःख कुछ कम है ? ऐसे बेटे को खो कर जीने में क्या सुख है ? फिर भी मैं उसके पीछे जा पाऊँगी ? हम बूढ़े हैं। सहगमन की बात भूल जाओ। हमारे लिए जीवित रहो। उसके पुत्र के वास्ते जीवित रहो

सुनिए, संसार माया में जाय। मैं लेकर क्या करूँ ? किसी पर मेरा विश्वास नहीं है। अकाल में पति की मृत्यु हुई। और बेटे से न जाने क्या क्या भोगना पड़ेगा ! मैं पाप पापिनी हूँ मुझे न रोकिए। दुःख भोगने के लिए मैं जीना नहीं चाहती।

अतिमब्बे ने दृढ़ता से कहा।

सोचो तो सही अण्णिग का क्या होगा ? माता का कर्तव्य है कि सन्तान की देख रेख करे। नारी की जिम्मेदारी बड़ी है। नारी के जीवन में एक ओर पति है तो दूसरी ओर सन्तान। दोनों को निभाना होगा बेटी।

पर मैं अकेली क्या निभाऊँ। वे हमें छोड़कर क्यों चल बसे ? हम क्यों पीछे रह जायें !

हाँ वह तो चल बसा। पर सन्तान की रक्षा तो करनी

? अब उस पुत्र के लिए रहना पडेगा। हाँ! गुडुमब्बे की दूसरी है उसे अनुमति दो। पीछे आई थी, आगे जाएगी! तुमने साथ दिया वहाँ वह ——

आगे बोलते नहीं बना फिर भी पद्मब्बे ने उचित सलाह थी।

अत्ति! कैसी अबोध बातें करती हो? इस दुध मुँह बच्चे छोडकर सहगमन करने से क्या तुम्हें शाति मिल सकेगी? क्या का हृदय इतना नीरस रेगिस्थान बन सकता है?

अव्वकब्वे ने डाटनेवाली आवाज में कहा।

अत्तिमब्बे! तुम्हारा हठ करना उचित नही है।

तुम्हारा और तुम्हारे बेटे का भार हम सभालेंगी। तुम्हारे य जिदगी का भार ढोने के लिए हम सब बैठे हैं। लोक हित धना में मन लगाओ। सहगमन ही एकमात्र कर्तव्य नही है। यदि म्हारे कोई सतान नही होती तो कौन तुम्हारे रास्ते का रोडा बनता?

— कह रानी ने भी समझा या बुझाया।

सब का मत एकसा था। अत्तिमब्बे को उसे मानना पडा।

गुडुमब्बे ने नवेली के जैसे साज सिगार कर लिया। जितना सका उतना फूल सिर पर धारण किया। सोलहो सिगार से सज्जित हुई। बडे बूढों को नमस्कार करके आशीर्वाद पाया। पिणग को गोद में लेकर पुचकारा। तब उस के धैर्य की बांध टूट ई। क्षण भर के लिए विचलित हो उठी। फिर किसी तरह सभाल र उसे उतारा और अत्तिमब्बे को छाती मे कसकर लगाया। तब की बाध फिर टूट गई। जगमगाते हुए चदन की चिता के समीप चिता जल रही थी। उसी दशा म उसकी तीन बार परिक्रमा जिनगधोदक लिए सिर आखों पर लगाया। पचपरमेष्ठियो का

नाम जपते जपते चिता में इस प्रकार प्रवेश किया मानों सभा-मंडप में प्रवेश कर रही हो। उस समय उसका मुख अलौकिक कांति से चमक उठा। जैसे बाग में मतवाली लतिका को अगल-बगल सरकाते हुए कोई कलि कुंज में आता है उसी प्रकार लपटों को दोनों हाथों से सरकाती हुई हँसते हँसते चिता पर चढ़ी और पति की गोद में सो गई। चिता की सेज पर पति को गले लगाए रम गई!

भोगते शरीर एक दम दुर्बल बन गया। वह बेचैन थी क्योंकि उसे मरने के लिए स्वातन्त्र्य नही था। कभी कभी उसका नन्हा सा बच्चा पास आता, गोद पर चढता और सूखे स्तनो को चूस चूसकर निराश लौट पडता। कभी कभी ठूंठ से पडी हुई मां को हिला हिला कर जगाने का पयत्न करता और न हिलने पर शरीर की टटोलकर जांच करता। पर अत्तिमब्बे यह सब जानती हुई भी अनजान सी पडी रहती थी। क्योंकि अब उसके लिए ससार में कोई आकपण नही बचा था।

अत्ति! बच्चे का मुंह देखो। उठो। वह बार बार आकर हताश लौट रहा है न?

— पद्मब्बे कह देती। पर स्वय अपना दुख सह नहीं पाती थी। रो पडती थी।

मुझे न रहने देते हैं, न मरने छोडते हैं!!

अत्तिमब्बे कुडबुडाती।

क्या कहती हो बहू! अगर तुम्हें हम लोग सता रहे हैं। तुम्हें हमी लोगो ने अवश्य मरने नही दिया पर क्यो?। हमारे लिए तो नही। उस मुन्नू के लिए तो।

अब मुझे छोड दीजिए। मैं जी कर क्यो घुल घुलकर मरूँ। और कौन-सा सुख बाकी है कि मैं जिदा रहूँ।

अत्ति! उठो। जरा अण्णिग को तो देखो। बेचारा सूखता जा रहा है। जिस प्रकार चड मारुत के झोको से उखाडे गए पेड के कोपलो की दुर्गति होती है वही दुगति अण्णिग की हो रही है। अब इस कुल का वही एक मात्र आधार है। अगर उस की रक्षा नही की तो क्या होगा सोचो तो सही?

— पद्मब्बे ने दीन और खिन्न हो कर कह दिया।

तब तक वहां अण्णिगदेव चला आया। अपनी मां को हिलाते हुए 'मां, मां'! कह पुकारने लगा।

शक्ति ! कैसे वधू ! हृदय विदारक है बेटी। उठो। बेटा तो
हम (?) क्या तुम नहीं चाहती हो कि इस जग में इस इकलौते पोते को
भी देखा बैठूँ? इसकी रक्षा हमारे लिए ही नहीं करो।

— अनुराग हो रो पड़ी।

और माताजी। मैं और किस लिए जिऊँ। विधवा हूँ। समाज का
कलंक हूँ। अमंगल मूर्ति हूँ। मेरा न रहना ही अच्छा है। अमंगल
की मूर्ति बन कर धर्म-कर्म से हीन होकर जीना भी क्या जीना है?
वह(?) सचमुच सौभाग्यवती थी। मर कर अमर बनी। सती सावित्री
बनी। मैं जीकर नरक यातना भोग रही हूँ।

— अतिमन्यु छटपटाने लगी।

जिरा शक्ति ! क्या हम भी नहीं रो रहे हैं? पुत्र को खो कर कौन
सो क्या सुख हम भोग रहे हैं? हम जिंदा हैं तो केवल तुम्हारे लिए
हम और तुम्हारे इस बच्चे के लिए। तुम अभिमन्यु की माँ हो। सोचो
उसके पेड़ ही अपने फल की उपेक्षा करने लगें तो उसका क्या हाल
होगा? यदि तुम ही अपनी संतान की उपेक्षा करो तो बेचारा क्या करे
और कहाँ जाय। तुम्हारी इस उपेक्षा का क्या परिणाम होगा? लोग
से न क्या कहेंगे।

सौमि पद्मावती ने कर्तव्योन्मुख करने की दृष्टि से शक्तिमती
कहा।

दो-एक दिन बीत गए। एक कवि विजयपुर आए। फिर
से भिक्षा की याद आ गयी। भई-पुरानी स्मृतियाँ बाढ़ की भाँति मन
मारी बाधित हुई दामन का दुख फिर जागृत हो उठा।

नो रि परंतु हम बूढ़े हो गए। अब स्वर्ग की साँस लेने जिंदा हैं।
जाने न पानी प्राण और क्या देखना चाहते हैं। हमारा लड़का
हम परंतु आप को बहुत मानता था। आप के काव्य का कंठपाठ किया
था। अर्जुन का साहस बाहुबली का पराक्रम उसका प्रिय भाव था।

उन्हें पढते पढते स्वय फत्गुन या बाहुबली बनने का स्वप्न देखा करता था। अव हमें आँसू की घूंट पीने छोडकर स्वय चल बसा ! वाप के सामने बेटा मरे ! माँ-बाप को शोक-सागर में ढकेल दे। वह अभागा है नहीं, नही, हम अभागे है ! — पुत्रशोक में दल्लप अटसट वकने लगा।

सात्वना देते हुए पप बोले —

दल्लप जी ! आप का दुख मैं समझ सकता हूँ। कहा जाता है कि पुत्र-शोक चिर-स्थाई होता है। पर शोक करें तो किसके लिए ? आप का बेटा जीना और मरना दोनो जानता था। कायर सौ सौ वार मरते हैं। आप का नागदेव कायर नही था। वह तो हमारे फल्गुन और बाहुबली के समान ही वीर था और वीतराग भी था। उसकी मौत पर लाखो की जिदगी न्योछावर है। ऐसे पुत्र को जन्म देकर आप अमर बने हैं। मरना तो अनिवार्य है जरा सोचिए, आप का बेटा मर कर भी अमर वना है कि नही ? कौन आप के बेटे का शौय-पराक्रम नही जानता ? शत्रु तक सराहते हैं ! ऐसे व्यवित पार्थिव शरीर के बधन तोडकर यश काय वन कर अमर होते हैं। वीर पुत्र के योग्य वीर पिता हो कर आप आँसू पोछ डालिए। अ प अत्ति को सात्वना दीजिए और अण्णिग को सुयोग्य बनाने का कर्तव्य पालन कीजिए।

पपदेव ! हम कगारे पर के पेड है। अब हम किसकी चि ता करें ? हम सूखे पत्ते हैं। किसी तरह हमारे दिन कट जाएँगे। पर अत्तिमब्बे को सभालना असभव बन गया है। हम प्रयत्न करके हार गए हैं। वह सुन्न-सी वनी है। खाना, पीना, सोना भी विना दवाव डाले नही हो रहा है। आप महाकवि हैं। रस ऋषि है देवलोक से ले कर भूलोक तक आप की पहुच है। आप पत्थर मे जान फूंकने की प्रतिभा रखते हैं। आप पत्थर से भी सभापण कर

सकते हैं। कृपा तो कीजिए कि अलिमब्बे लोक-व्यापार में प्रवृत्त हों जाय ताकि बच्चे को संभाल लें।

— वसन्तपण ने अपनी विवशता व्यक्त करते हुए प्रार्थना की।

पप जी ने अत्तिमब्बे से भेंट की। कहाँ वह कुसुमकली और कहाँ वह शोक। उसे न किसी के आने की खबर रहती न जाने की। चिन्ता में डूब रही थी। जिंदगी ही जिसके लिए दूभर बनी हो वह औरों की बात सुनकर क्या करे?

अत्ति! बेटी!! मेरी ओर देखो। मैं आया हूँ।

— पम्पदेव ने अत्तिमब्बे का ध्यान खींचने के लिए कहा।

बेटी। जो होना नहीं चाहिए था वह हो गया। किसका वश है? जो पद वह वन्द्य है? चार-सी तो तुम जाना है। यहाँ का कर्म समाप्त होते ही हर किसी को जाना पड़ता है। यहाँ किसका चलता है? क्यों बेटी। तुम क्या ना समझ हो।

पप महाकवि ने सान्त्वना पूर्वक जगाया।

मामा जी! आप अब आए? पर यहाँ सब समाप्त हो चुका है। बताइए तो सही अब इस जिन्दगी की अपेक्षा मौत लाख भली है कि नहीं? आप अरिकेसरी की मृत्यु से संतप्त थे। मैं आप को सांत्वना देने का प्रयत्न कर रही थी। अब मैं समझ गई। मामा जी! मेरी वेदना किसी के मिटाए नहीं मिट सकती। लोग आते हैं। सान्त्वना देते हैं। पर क्यों सांत्वना नहीं मिलती? आप कवि हैं। कवि की दृष्टि से विचार कर बताइए कि क्या इस आघात को सह कर भी जिया रहें और क्यों?

अत्तिमब्बे ने अपना दुःख कह सुनाया।

बेटी! जीवन बहुमुखी होता है। पति और पुत्र उसका एक अंग मात्र है। अब तुम्हारा पति मात्र नहीं रहा। और सब कुछ तुम्हारे सामने पड़ा है। जिन्दगी के कई पहलुओं को सजाने के लिए

तुम्हें जीना ही होगा। आर्तध्यान नरक का द्वार है। तुम बरसात की बूंद से डरकर बाढ में बह जाना चाहती हो ! यह उचित नही है।

पप कवि ने समझाने का प्रयत्न किया।

मामा ! मेरी आवश्यकता किस को पडी है ?

— अत्तिमब्बे के स्वर में निराशा जनित कपन था।

बेटी। आदिदेव के सन्यास स्वीकार का प्रकरण तुमनें पढा ही होगा। तब उनकी रानियाँ, यशस्वती और कुमद्वती क्या पति के होते हुए भी पति-हीन नही बनी ? उस का जो अकथनीय दुख था वह क्या इस दुख से कुछ कम था ? क्या उन्होने सहन नही किया ? इतना ही नही अपनी सतानो की रक्षा करने के लिए और उनके उज्वल भविश्य के लिए दिन-रात परिश्रम नही किया ? पति के सन्यास लेन मे रूठ कर उन्होने अपनी सतानो की उपेक्षा तो नही की ? उठो बेटी ! अण्णिग की देख-भाल में पति वियोग का दुख भूल जाओ और देश भी तुम्हारी सेवा की प्रतीक्षा कर रहा है

मामाजी ! मैं क्या कर सकती हूं ?

ऐसा निराश मत बनो। कन्नड-साहित्य की श्रीवृद्धि और विकास तुम पर निर्भर है। और

कैसे मामाजी ! मैं कवि थोडे ही हूं। मैं क्या लिख सकूंगी ?

अत्तिमब्बे ! कवियो का अस्तित्व तुम जैसी कल्पलता पर निर्भर है। साहित्य की रक्षा करने के लिए समय समय पर उसकी प्रतिलिपियाँ बनवानी होगी। कवि काव्य लिखे और तुम उसकी प्रतिलिपियाँ बनवाकर रक्षा करो। दानो का महत्व है एक निर्माता है दसरा सरक्षक ! सृष्टि करनेवाले सृष्टि करें। पालन करना तुम्हारे हाथ है। नही तो सृष्टि नष्ट हो जाएगी। बेटी तुम जैन साहित्य की प्रतिलिपियाँ कराओ। देश के कोने कोने तक पहुचाओ। हो सके जहाँ कही आवश्यकता हो वहाँ जिनालयो का निर्माण कराओ।

देखो तुम जैसे शासनाधिकारियों पर निर्भर है जैन साहित्य और संस्कृति। जैन धर्म और जिनागम तुम्हारे जैसे उदार चित्तवालों का मुंह ताक रहा है।

पद्म कवि ने इस प्रकार कर्तव्य-बोध का परिचय करा दिया और अभिमन्यु के शून्य जीवन को कार्यों से भर देने का प्रयास किया।

पर मामा जी! यह काम धन से होता है मुझ से नहीं। मैं निमित्त मात्र हूं। मैं न रहूं तब भी धन रहेगा ही। अब मुझे यह सब धर्म का ढकोसला-सा लगता है।

और एक बात है बेटी! आमीण युद्ध में मरे?

पद्म देव ने दूसरे प्रकार से समझाने का प्रयत्न किया।

धाड़ मार कर अभिमन्यु बोली —

मरे नहीं! किसी हत्यारे ने छिप कर वार किया और हत्या की।

ऐसा ही हुआ है बेटी बड़ा अन्याय हुआ और अधर्म भी। फिर भी युद्ध में न जाने कितने जवान कट मरे?

मामा जी! मैं क्या करूं? हजारों ढेर हो गए।

बेटी! उनकी माँ बहिन और बहुओं का दुःख कौन दूर करे? उन में से बहुतों को दो कौर अन्न तक नहीं मिलता होगा। जानती हो बहन उनकी जिंदगी कैसे दूभर है? उठो उनकी सेवा करो। भगवान की कृपा से तुम्हारे पास अपार संपत्ति है। उन अबलाओं की सेवा में खर्च करो। उन हतभागिनियों के आंसू पोंछो! उनका दुःख तुम समझ सकती हो। तुम ही दूर कर सकती हो।

— पद्म देव की बातों का देवा पर असर पड़ने लगा।

  

चालुक्यो के द्वितीय तैलप ने राष्ट्रकूटो को पराजित किया और विशाल साम्राज्य के साम्रट बने। आपने राजकुमार इरिववेडग को युवराज बनाया। अभिषेक का महोत्सव बडी धूम से मनाया गया। इस अवसर पर साम्राट ने लक्कुडी और मासवाडी के कुल एक सौ चालीस ग्रामो के राजा अण्णिग को घोषित किया। नागदेव को जो जो राज-सन्मान प्राप्त थे उन सभी सन्मान को सव-सेनाधिपत्य के साथ उस अण्णिग को दिया।

अत्तिमब्बे के सबधी, नातेदार रिश्तेदार आदियो ने समयोचित सदेशादि भेजकर, साधुवाद दिया। इस प्रकार हर एक ने उसका उत्साह वढा देने का प्रयत्न किया।

अत्ति! तुम्हारा यह लाडला कैसा भाग्यशाली है!

पद्मब्बे ने वलैय्या ली।

हाँ हा! सब का भाग्य बिजली-के समान चकाचौंध करनेवाला अवश्य होता है पर कितने समय के लिए? यह सब इद्रचाप-सा आकर्षक अवश्य है पर मन में आने के पूर्व ही विधि उसे मिटा डालता है! तब उसका नामोनिशान तक नही रहेगा। गहरा अधकार छा जाएगा।

अत्तिमब्बे ने अपने अनुभव की बात कही।

जब तक रहता है तब तक वह आकर्पक है। इस आकर्पण में ही सच्चा जीवन है। अण्णिग अब राजा बना — यह सत्य है। जब तक धम पर उसका राज्यशासन टिक रहेगा तब तक वह धर्म हमारी रक्षा करेगा।

— पद्मब्बे ने अपना विचार स्पष्ट किया।

वह ठीक है। राज्य हो या कोश जब तक धर्म से अनुप्राणित हो तो सार्थक रहेगा। तभी उनकी शोभा है। माँ! एक बार हम लोग राज्य की सैर कर आवें।

सुनाया कि सब अनुभव करते क्षण मानो वे स्वयं स्वर्ग से वंचित हुए हों।

तदनन्तर पं० कवि ने स्वयंप्रभा के विरह का वर्णन किया। इससे श्रोताओं का कोमल अंतःकरण पिघल कर बह उठा। सब को आँसू बहाते देखकर अत्तिमब्बे और गुंडमब्ब भी आँसू बहाने लगीं।

ललितांग का अगला जन्म मानवयोनि में हुआ। मर्त्य लोक में उसका नाम वज्रजंघ था। स्वयंप्रभा असह्य विरह ताप से जल रही। वह भी इस लोक में आई। उसका नाम श्रीमती था। यहाँ श्रीमती और वज्रजंघ का विवाह हुआ। इन्होंने यथोचित रीति से अनेककाल तक जगत्सुख भोगा। एक दिन की बात है। सेवकों ने शयन के शयनागार में सुगंध धूम जलाकर गवाक्ष बंद किया। ऐसा नित्य किया करते थे। पर उस दिन धुआँ अधिक उठने लगा। इधर दैव प्रेरणा से उन्होंने खिड़कियों को इस भाँति बंद किया कि मंद मारुत तक आकर इन के शयन सुख में बाधा नहीं डाल सके। परस्पर एकबाही किए रात भर विहार करते रहे। पर उसी मुद्रा में न जाने कब इन दोनों के प्राण पखेरू उड़ गए थे। सवेरे सेवकों को कलेवर मात्र मिले। यही तो प्रथम जीवन का आदर्श है। पं० कवि ने इस अध्याय को समाप्त किया। श्रोताओं की भावुकता रस-धारा बन बह चली।

अगले जन्म में इन दंपतियों का जन्म भोग भूमि में हुआ। यहाँ चारण मुनियों को भक्ति से भिक्षा-दान करने के पुण्य प्रभाव से अगले जन्म में भोगभूमिजा स्वयंप्रभा स्त्री जन्म से निवृत्त होकर स्वयंप्रभ देव बन गई। तदनन्तर जन्म में श्रीधरदेव सुविधि नामक महाराजा बने। स्वयंप्रभ सुविधि का पुत्र केशव बना। इस प्रकार पं० कवि ने आदिदेव बनने तक की कथावस्तु का निरूपण संक्षेप में सुना दिया।

आदिदेव तक राम रसिक थे उनकी रसिकता में उनकी

चालुक्यो के द्वितीय तैलप ने राष्ट्रकूटो को पराजित किया और विशाल साम्राज्य के साम्रट बने। आपने राजकुमार इरिवबेडग को युवराज बनाया। अभिषेक का महोत्सव बड़ी धूम से मनाया गया। इस अवसर पर साम्राट ने लक्कुडी और मासवाडी के कुल एक सौ चालीस ग्रामो के राजा अण्णिग को घोपित किया। नागदेव को जो जो राज-सन्मान प्राप्त थे उन सभी सन्मान को सर्व-सेनाविपत्य के साथ उस अण्णिग को दिया।

अत्तिमब्बे के सबधी, नातेदार रिश्तेदार आदियो ने समयोचित सदेशादि भेजकर, साधुवाद दिया। इस प्रकार हर एक ने उसका उत्साह बढा देने का प्रयत्न किया।

अत्ति! तुम्हारा यह लाडला कैसा भाग्यशाली है!

पद्मब्बे ने बलैय्या ली।

हाँ हा! सब का भाग्य बिजली-के समान चकाचौंध करनेवाला अवश्य होता है पर कितने समय के लिए? यह सब इद्रचाप–सा आकर्पक अवश्य है पर मन में आने के पूर्व ही विधि उसे मिटा डालता है! तब उसका नामोनिशान तक नहीं रहेगा। गहरा अधकार छा जाएगा।

अत्तिमब्बे ने अपने अनुभव की बात कही।

जब तक रहता है तब तक वह आकर्पक है। इस आकर्पण में ही सच्चा जीवन है। अण्णिग अब राजा बना — यह सत्य है। जब तक धम पर उसका राज्यशासन टिक रहेगा तब तक वह धर्म हमारी रक्षा करेगा।

— पद्मब्बे ने अपना विचार स्पष्ट किया।

वह ठीक है। राज्य हो या कोश जब तक धर्म से अनुप्राणित हो तो सार्थक रहेगा। तभी उनकी शोभा है। माँ! एक बार हम लोग राज्य की सैर कर आवें।

— अतिमब्बे ने अपनी इच्छा बता दी।

अति ! तुम्हारी इच्छा ही हम लोगों की इच्छा है। हम केवल तुम्हारी हंसी देखना चाहती हैं। तुम हंसती रहो तो बस हम और कुछ नहीं चाहिए।

ऐसा पद्मम्ब ने कहा। यात्रा की तैयारी हुई।

पद्म देव ने उस अवसर पर सादुवाद देने के साथ साथ दीन दुखियों के प्रति अतिमब्बे का ध्यान आकर्षित किया।

अतिमब्बे ने पूरे के राज्य को देख लिया। गांव गांव में यथोचित स्वागत सत्कार हुआ। राजा अय्यिण भी माताजी के साथ ही था। प्रत्येक गांव को अतिमब्बे ने दर्शन दिए। शक्ति भर घर घर जाकर जनता के सब दुख की बात जानने का प्रयत्न किया। स्वयं पद्म देव की बात उसके चित्त पर चढ़ी रहती थी। कहीं मंदिर चाहिए कहीं कुआं चाहिए कहीं धर्मशाला चाहिए — यह सब पूछ-ताछ कर के जान लिया। जनता की मांगों को पूरा कर दिया। कभी ना नहीं कहा चाहे मांग व्यक्ति की हो या समाज की। जनता ने भी राज भक्ति से अपार धन राशि अर्पित की थी। अतिमब्बे ने उसमें यही कुछ न कुछ जनोपयोगी धार्मिक कार्यों में लगा दिया। कहीं जल पर्याप्त नहीं थी तो तुरंत वहीं के जनकों से आवश्यक हिस्सा माफ करके भू-हीन किसानों के घर बसा दिया तो कहीं किसानों के लिए आवश्यक बैल आदि दे दिलाकर उनकी सहायता की।

अतिमब्बे ने सोचा कलबुर्गि राजधानी बनने योग्य स्थान है। सब से पहले यहीं जिनालय की नींव डाल दी। आदो स्वयं गुरुओं को नमन करके जिनालय बनाने का संकल्प किया। उसका मानचित्र बनवा लिया। उसके समाप्त होते ही अय्यिण के लिए महल भी बनवाना चाहा।

एक बार एक विजयपुर आया। अतिमब्बे से मिलकर

नागदेव की मृत्यु पर अपना शोक व्यक्त किया। अत्तिमब्बे को सात्वना दी।

रन्न ! हमारी यह दशा हुई। तुम्हें कवि चक्रवर्ती बना देने का स्वप्न देखते देखते उन्होंने आँखें मूंद ली। उनकी आशा पूर्ण होनी चाहिए।

— ऐसा कहते हुए अत्तिमब्बे रो पडी।

माँ, आप का दुःख कौन दूर कर सकता है? उसे आप कर्तव्य में भूलने की चेष्टा कीजिए। मैं कवि चक्रवर्ती बनूं या नहीं बनूं सो बात दूसरी है। जब ऐसे कवि चक्रवर्तियों का आश्रयस्थान ही नहीं रहा।

— रन्न ने खिन्न होकर कहा।

तात ! हताश होना बुरा है। वे होते तो तुम्हारी प्रतिभा और विद्वत्ता से अवश्य आनंदित होते और तैलप चक्रवर्ती के दर्बार ले जाते। वहाँ तुम्हें सम्मानित देख कर फूले नहीं समाते !!

— कह कर अत्तिमब्बे अपनी असहायकता पर रो पडी।

आप आँसू न बहाइए। जब वे ही नहीं रहे तो अब मैं मान-सम्मान ले कर क्या करूं।

बेटा, निराश न बनो। वे चल बसे। पर उनकी अधूरी आशा-अभिलाषाओं को पूर्ण करना हम लोगों का कर्तव्य है। तुम जिस दिन कवि चक्रवर्ती बनोगे उसी दिन मेरे प्रियतम की आत्मा को सच्ची शांति मिलेगी।

माँ मैं कैसा अभागा हूँ। पितृ-तुल्य मेरे स्वामी का अंतिम दर्शन तक नहीं पा सका। उस समय धूप देने तक मेरे भाग्य में नहीं बदा था। कम से कम आप कहला भेजती।

बेटा ! उस अपार शोक में मुझे एक भी नहीं सूझा।

— अत्तिमब्बे का गला गद्गद हो गया।

मा मैंने आप को दोष नहीं दिया । मेरे दुर्भाग्य की बात कही ।

रत्न ने कहा ।

क्यों वत्स ! कुछ लिख रहे हो ?

— मतिमन्त ने पूछा ।

अभी नहीं पर लिखने की बात सोच रहा हूँ ।

परमात्मा पर भरोसा रखकर लिखना प्रारंभ करो । मामाजी से कहकर अवश्य मैं चक्रवर्ती के पास भिजवा दूँगी ।

— मतिमन्त ने प्रोत्साहन दिया ।

अब मेरी एक प्रार्थना है ।

— रत्न ने विनती की ।

कहो बेटा ! मेरे लिए तुम और अभिनव दोनों एक से हो । जो चाहे मांगो । पैसे की कमी हो तो जो जितना चाहे उठाना । संकोच मत करना !

ऐसा कह कर तिजोरी की चाबियाँ उस के हाथ दे दीं ।

माताजी ! आप के आशीर्वाद से रुपए पैसे के लिए मुझे कभी दूर जाने की आवश्यकता नहीं पड़ती । आप का नाम लेते ही लाखों रुपये मिल जाते हैं । हाल ही में चामुण्डराय जी जबलपुर आए थे । उधर जो कुछ उनके-मुख से सुना सब उन्हीं से जाना । राष्ट्रकूटों के पतन और अम्माजी की मृत्यु की बात भी आपने बड़े दुःख से कही । सुनकर अजितसेनाचार्य जी रो पड़े । आचार्य जी ने मुझे आप के पास भेजा है ।

आचार्य जी की आज्ञा शिरोधार्य है । अवश्य मैं उसका पालन करूँगी । हाँ मुझ से बड़ा अपराध हुआ है वत्स ! कि पहले

— मतिमन्त की आवाज अपराधी की सी लड़खड़ा रही थी ।

माताजी, अव भूल चूक की वात नही। उमे भूल जाइए। जो होना था हो चुका। अव जैन-धम, जैन-साहित्य और जैन-सस्कृति का नाश नही होना चाहिए। ये रत्न-त्रय हैं। अव इन की रक्षा का भार आप पर है। अव राष्ट्रकूटो के पतन से अपार क्षति हुई है उसे आप भर सकती हैं। यही अजितसेनाचाय जी का सदेश है।

— रन्न की ध्वनि कपित थी।

तात ! कैसा भार मुझ पर लादा जा रहा है ! सो भी एक विधवा पर, इतना भार ? यदि वे रहते तो मैं विना आना-कानी किए हामी भर देती। मैं ही अनाथ हूँ। मै क्या आश्रय दूंगी ? मैं धम-कर्म हीन विधवा हुँ। मैं कैसे धम की रक्षा कर पाऊँगी ? सस्कार विहीन विधवा मे सस्कृति का वचाव होगा ? मै एक दुवल नारी हूँ। तिसपर पति हीना दीना दुखिनी हूँ। मुझसे कवियो को आश्रय मिल सकेगा ? जैन साहित्य अपार है। उसका पुनरुद्धार क्योकर मुझ हत भागिनी से सभव है ? जो भार राष्ट्रकूट सार्वभौम सभाल रहे थे उसे इस भाग्य-हीन नारी पर लादना क्या उचित है ?

— अत्यत हताश हो कर अत्तिमब्बे बोली।

माता जी ! आप हीन-भावना का त्याग कीजिए। क्या सुमेरुपर्वत को एक कछुए ने पीठ पर धारण नही किया ? वृत्रासुर की पीडा से ससार को किसने वचाया-एक मामुली हड्डी ने तो ? आप तो महा महिमामई हैं। उदार हैं। आप सुसस्कृत महिला हैं। आप से क्या नही होगा ? आचार्य ने सोच-समझकर ही आप को इस कार्य में नियोजित किया है। शुभ-सकल्प कीजिए। शुभ ही होगा !

— रन्न ने आत्म-विश्वास जगाने का प्रयत्न किया।

रन्न ! तुम भी ऐसा कहते हो ? वत्स ! मेरी योग्यता ही कितनी है ? मैं अकेली क्या कर पाऊँगी। आचाय का आदेश

टकराते नहीं बनता। क्या करूँ ?

अतिमब्बे सिर पर हाथ धरे बैठ गईं।

माताजी ! आप के सुझावसे जैन समाज सब समझ सकता है। राजाश्रय की प्रतीक्षा में बैठे रहना उचित नहीं है। जनता स्वयं यह भार उठावें। आज जन-शक्ति राजा महाराजाओं से भी बढ़ कर ऐसा कार्य कर सकती है। इसका प्रमाण आप दे सकती हैं। आप नारी रत्न हैं। आप सब के सम्मुख एक जीता जागता आदर्श बन कर विराजें। इसीलिए मैं आप की ओर से आचार्य जी को आश्वासन दे चुका हूँ

— रन्न ने कहा।

रन्न ! क्यों तुमने ऐसा किया ? बिना सोचे-समझे ऐसा वचन दे देना क्या उचित है ? आखिर मेरी शक्ति और सामर्थ्य को क्या जानते हो ? अकेली मैं क्या कर पाऊँगी ?

माताजी यदि आप चाहें तो सौ सौ सम्राट भी नहीं कर सके इतना कर सकती हैं। मुझे पूरा विश्वास है।

रन्न ! मेरे पिताजी कहा करते थे कि कवियों का व्यवहार मान शून्य-सा रहता है। आज उस कथन का अर्थ समझ गई। क्या एक अबला नारी सम्राटों की बराबरी कर पाएगी ?

व्यंग से हँस पड़ी।

माताजी ! आपने देखा है कि युद्ध से कैसा अनर्थ हुआ है ? आप के आँसू अब वरदान बनें। आप जनता में सच्चे धार्मिक संस्कार डालने का प्रयत्न कीजिए। हिंसा को मिटा डालने के लिए अहिंसा का प्रचार कीजिए। इस नर-हत्या को रोकने के लिए लोगों को सुसंस्कृत बनाइए। अब जो पति पुत्र हीन अबलाएँ हैं उन्हें आश्रय दीजिए। उनकी सहायता से अनाथ शिशुओं की रक्षा का भार उठाइए और नव निर्माण की नींव डालिए यही आचार्य के उपदेश का

तात्पर्य है आप हँसी में उसको न उडाइएगा।

तात ! आचार्य जी तपस्वी है। उन के आदेश का पालन करना हमारा कर्तव्य है। मै अपनी सीमा से भी परिचित हू ँ। फिर भी इतना अश्वासन दूगी कि हा अपने जीवन के प्रत्येक क्षण मैं सस्कृतिक काय के लिए अपित कर सकूगी। अपनी सारी सपत्ति का उपयोग उम के लिए कर दूगी। इतना मेरी ओर से आचार्य-चरणो में निवेदन करना।

तब रन्न ने अत्यत दीन भाव से कहा

माँ, मेरी भी एक प्राथना है। आप उसे स्वीकार करें।

रन्न ! तुम ही मेरी पहली सतान हो। अण्णिग से वढकर तुम को मानती हू ँ तुम्हें क्या सकोच है ? मन की वात कहो।

— वरदायिनी माता सरस्वती के समान आश्वासन दिया।

माताजी ! चामुडराव जी अत्यत आदर के साथ मुझे निमत्रण दे रहे हैं। आप की अनुमति मिलें तो मैं उनके यहाँ कुछ दिन रहना चाहता हू ँ

रन्न ने निवेदन किया।

रन्न ! मेरे रहते औरो के यहाँ जाने की आवश्यकता क्या है ? किसी का मुँहताज क्यो बनना चाहते हो ? जो चाहे मुझ ही से ले लो।

— अत्तिमब्बे की ध्वनि में तिरस्कार का भाव था।

माताजी ! आप से निराश होकर थोडे ही मैं चामुडराव के यहाँ जा रहा हू ँ। उनकी प्रार्थना स्वीकार करके वहाँ जाने का आदेश आचार्य अजितसेन जी ने दिया है। पर आप की अनुमति के विना मैं कैसे जा सकता हू ँ। मै गुरुजी के आदेश से वढकर माँ की इच्छा मानता हू ँ। आप जो भी कहें मै मानने को तैयार हू ँ।

-- रन्न ने स्पष्ट किया।

रन्न ! आखिर तुम्हारी क्या इच्छा है ? जाना चाहते हो तो

जाओ। पर निराश्रित मानकर यहाँ मत आना। जब तक मैं जीवित हूँ तब तक तुम आराम से यहाँ रहो। अपने को अनाथ मानने का कारण नहीं। समझे।

माताजी! क्या मैं आप पर सन्देह कर सकूँगा? आप ही के कृपामय से आज मैं एक मनुष्य हूँ। नहीं तो न जाने किसके यहाँ पानी भरते या रसोई पकाते पड़ा रहता। आप की कृपा से पढ़ा-लिखा हूँ। आप की कृपा है कि आज चारुदत्त जैसे महानुभाव मुझे अपने यहाँ बुला रहे हैं।

— रत्न की ध्वनि में कृतज्ञता सनी हुई थी।

रत्न! जाओ! कवि हृदय में जगह जगह भ्रमण करते रहने की इच्छा बनी रहती है। राजजी तो बड़े महानुभाव हैं। पर एक बात याद रखना कि जब तक तुम्हारा आदर सत्कार होता रहेगा तब तक वहाँ रहना। कभी किसी भी कारण से जरा सा अनादर देखा तो यों ही चले आना। तुम्हारे लिए मेरा मन सदा खुला रहेगा।

इतना कहते कहते मतिमन्दे का गला बैठ गया। आँसू बह निकले।

रत्न ने झुक कर माता की पद धूलि उठाई और उसे सिर आँखों पर रखा।

रत्न! राजजी के साथ जा रहे हो तो न जाने फिर कब हमारी और तुम्हारी भेंट होगी। इसीलिए चाहती हूँ कि तुम विवाह कर लो। तब कहीं मैं निश्चिन्त होऊँगी।

इस प्रकार मतिमती ने रत्न के विवाह का प्रश्न छेड़ा।

जैसे आप की इच्छा। मैं कभी आप की बातों का उल्लंघन नहीं कर सकता।

क्या कहीं कन्या देखी जाय?

माताजी एक काम कीजिए। मेरे पिताजी को समाचार भेजिए।

सभव है कि कही आपने कन्या देखी होगी।

— रन्न ने कहा।

जिनवल्लभ की बहन की यमज सतानें थी। बडी का नाम शाति छोटी का जक्कि था। इनके सगे-सबधियो में अधिक पढा लिखा रन्न ही था। कन्याओ के पिता आदिराजु का आग्रह था कि या तो दोनो कन्याओ का पाणिग्रहण करें या नही। विजयपुर में ही विवाह महोत्सव सपन्न हुआ। रन्न का विवाह उस ठाट बाट के साथ सपन्न हुआ जैसे किसी राजकुमार का हुआ करता है।

जक्कि और शाति के साथ रन्न का चामुडराय के दरबार जाना निश्चय हुआ।

१४

रन्न को विदा करते समय अत्तिमब्बे ने अपने और गुडुमव्वे के गहनो को अत्यत उदारता से शाति और जक्कि में बाँट दिया। निर्धन परिवार की वे कन्याएँ इतना आभूषण पाकर कृतकृत्यता का अनुभव करने लगी। उनकी दृष्टि में अत्तिमब्बे सामान्य मानवी नही साक्षात् देवी थी। तलकाडु जाने के पूर्व उनको उतना ही दुख अत्तिमब्बे को छोडते हुआ जितना नैहर छोडते हुए हुआ था।

उन बहुओ की बिदाई के बाद फिर अत्तिमब्बे के जीवन में उदासी उतर आई। विवाह की घूम स्तब्ध निराशा में बदल गई। अत्तिमब्ब सदा यही सोचा करती थी रष्ट्रकूटों का पतन हमारे ही कारण तो हुआ। इस से समाज और धर्म का जो भी नष्ट हुआ है उसे क्योकर भर पाएगी? ऐस अवसर पर गुडुमव्वे की सलाह और आश्वासन बड़े काम का होता। पर वह अब कहाँ? एक बार अपनी सास से मिलकर अत्तिमब्बे ने प्रश्न किया

क्या हमारे ही कारण राष्ट्रकूटों का नाश हुआ ?

बहिन ! क्या व्यर्थ भावना पकड़ी कर बैठी हो ? क्या कोई किसी का नाश कर सकेगा ? राष्ट्रकूटों का पुण्य क्षय हुआ । तभी उनका वैभव मिटा । साम्राज्य गया । क्या तुम षट्खण्डाधिपति भरतेश की कथा नहीं जानती ? भरतेश का दावा था कि उनके समान षट्खण्डों पर किसी और का आधिपत्य पहले नहीं हुआ था और शायद ही आगे हो । अपने नाम पर वीरशासन सुरवान के उपदेश से वृषभ के साथ वृषभाद्रि गए । वहाँ अपना नामोल्लेख लिखवाना चाहते थे पर कहाँ लिखवाते ? वहाँ देखते हैं कि कई पूर्वज चक्रवर्तियों के कई लेख पड़े हुए हैं । मिटते गए पर कभी उसका अन्त दिखाई नहीं दिया । बेटी हम जिसे नया समझते हैं वह न जाने कितने बार हुआ रहता है । उन्होंने कई बार शत्रुओं को हरा दिया था ? अब उनकी अवनति का काल आ गया । हार गए । हम कैसे अपने सिर पर इसका जिम्मा उठा लें ?

पद्मब्बे ने इन शब्दों में सान्त्वना दी ।

माता जी ! अजितसेनाचार्य जी ने रसा के द्वारा कहला भेजा है कि

क्या कहला भेजा है ? क्या आचार्य जी पधारेंगे ? या आश्रम को धन चाहिए पद्मब्बे ने बात काट कर पूछा ।

आश्रम के लिए कुछ नहीं मांगा है । कहला भेजा है कि धर्म संस्कृति और साहित्य की रक्षा का भार हम अपने कन्धों पर लें और

— अत्तिमब्बे की आँखें चमक उठीं ।

सभी ऐसे कामों में हाथ बँटाना हमारा कर्तव्य है । कौन तुम्हारा हाथ रोकेगा ? न मैं रोकूँगी न वे । जो चाहे करो । भगवान का दिया है काहे के लिए ? जितना बने करते जाओ

सर्व प्रथम अहिंसा का प्रचार करना चाहिए । अब लोगों को रक्षितपन मूर्ति प्रतिष्ठा की बात सूझने के लिए। प्रतिष्ठा करवाना होगा ।

इस प्रतिस्पर्धा का परिणाम देख ही रहे हैं। युद्ध कभी न हो ऐसा कुछ करना होगा। अब जो उजडे हैं उनको बसाना होगा। अनाथ शिशुओ की देख-रेख का प्रबंध करना होगा। दीन दुखियो की सेवा करनी पडेगी। इस पर धर्म संस्कृति और साहित्य का भार भी उठाना हो तो न जाने कितना धन लगेगा !

अत्तिमब्बे ने अपनी समस्या बताई।

अत्ति ! धन की चिंता मत करो। अपने पास जो कुछ है सब खर्च हो जाय तब भी चिंता करने की बात नही। तुम्हारा बेटा अब राजा है। समझो कि हमें कल्पवृक्ष की छाया मिली है। हम अब जो चाहे कर सकते है।

— पद्मब्बे ने भरोसा दिया।

अत्तिमब्बे ने देश की सुव्यवस्था का प्रबंध करके सैकडो लिपिकारो को बुलवाया। बंकापुर से मँगाए गए ग्रंथो की प्रतिलिपियाँ उतरवाने लगी। प्रत्येक ग्रंथ की सौ सौ प्रतियाँ तैयार होने लगी। यह देख कर दल्लप दंग रह गया। मल्लप प्रसन्न हुआ। हाथियो पर लदे ताडपत्र देख कर सब आश्चर्य चकित हुए। हजारो कंठ (धातु की कलम) बनवाए गए। कंठ भी लोहे या चांदी के नही, सोने के बनवाए गए। प्रतिलिपिकारो से ताडपत्र पर जैन आगमो और शास्त्रो की प्रतियाँ बनने लगी।

इतने बडे पैमाने पर कभी किसी ने प्रतिलिपियाँ बनवाने का प्रयत्न नही किया था। अत्तिमब्बे ने सहस्रो प्रतिलिपियाँ बनवाकर जैन मठो को दान दिया। जैन सन्यासियो को शास्त्र दान किया। जिन ग्रन्थो की प्रतिलिपि करने में आठ आठ साल लगते ऐसे धवल जयधवलादि ग्रन्थो की भी सैकडो प्रतियाँ बनाई गई।

अत्तिमब्बे की दृष्टि लोकव्यवहार से उचट गई। आध्यात्मिकता की ओर अग्रसर होने लगी। घर पर रहते हुए अन्तर्मुखी रहती।

तपस्या करती। जैन मुनियों की सेवा में लगी रहती। एक ओर से जिनालयों की मरम्मत का प्रबंध किया। जहाँ कहीं जैन श्रावक अधिक संख्या में रहते थे वहाँ स्वयं जिनालय बनवाने लगी। लक्कुंडी का जिनालय इस ढंग से बनवाया गया कि वह हर दृष्टि से असदृश बन जाय। कई अग्रहार बनवाए। मंदिरों का निर्माण हुआ। अन्नदान का प्रबंध किया अनाथालय बनवाए। शास्त्र प्रवचन और काव्य-वाचन की व्यवस्था बड़े पैमाने पर हुई।

अत्तिमब्बे ने कन्नड साहित्य की ओर विशेष ध्यान दिया। संस्कृत प्राकृत तथा अर्धमागधी ग्रन्थों का आदर समस्त भारत में हुआ करता है। अतएव उन ग्रन्थों की प्रतिलिपियाँ कहीं न कहीं होती रहती हैं। पर दुर्विनीत पम्पण, कुमर्देदु गुणवर्मा जैसे सारे कन्नड के कवियों के कृतियों का तथा पम्पदेव के आदिपुराण विक्रमार्जुन विजय पोन्न कवि के भुवनैक रामाभ्युदय और शांतिपुराण का आदर कर्नाटक मात्र में सजग है। इनकी प्रतियाँ कन्नड जनता ही बना सकती है क्योंकि वह उन्हीं के काम की होगी। अत एव कन्नड जनता की उपेक्षा इस संबंध में कदापि नहीं होनी चाहिए। ऐसा सोचकर जहाँ अन्यान्यों की सौ सौ प्रतियाँ बनवा रही थी वहाँ कन्नड ग्रन्थों की हजार हजार प्रतियाँ बनवाने लगी। राजा-महाराजाओं ने भी इतनी प्रतियाँ नहीं बनवाई होंगी। इस प्रकार अत्तिमब्बे कवि कुल के लिए चिंतामणि बन गई। जनता के लिए दानचिंतामणि बनी। डेढ़ हजार सोने के जिन प्रतिमा बनवाकर दम्पतियों को निमंत्रित करके वस्त्रों और जिन प्रतिमाओं का दान किया और समझाया — देखो! तुम आदर्श दाम्पत्य जीवन बिताओ। जिनों की पूजा करो ग्रन्थों का पाठ करो। तुम्हारे कष्ट दूर होंगे। ऐसे आशीर्वाद देकर विदा करती थी।

वे कहते — जी आप के आदेशानुसार हम यथा संभव चलने का प्रयत्न करेंगे।

और एक बात । तुम अपने जीवित काल में, जब कभी सभव वने तब, किसी न किसी ग्रथ की कम से कम पाच प्रतियाँ लिख कर दान करते जाओ । यह आश्वासन तुम लोगो से चाहती हूँ ।

माताजी ! आप के शुभाशीर्वाद से पाच ही क्यो पचास प्रतियाँ बनवाकर दान करेंगे । यह तो हमारे उद्धार की बात है।

इस प्रकार सहर्ष वादा करते और बिदा लेते थे।

इस प्रकार अत्तिमब्बे का दान एक को दस, दस के सौ के हिसाब से बढाते बढाते व्यापक आदोलन सा बन गया । कन्नड प्रदेश में ग्रन्थो के प्रसार का इतना व्यापक आदोलन कभी नही हुआ था। नव-दपतियो के लिए यह एक आवश्यक कर्तव्य बन गया। इस प्रकार जब जनता में साहित्याभिरुचि बढ गई तो यह कहने की आवश्यकता नही कि कवियो के जीवन पर क्या ही अच्छा प्रभाव पडा करेगा। वे सोचने लगे अब राजाश्रय की आवश्यकता ही क्या है ?

अत्तिमब्बे बकापुर गई । अजित सेनाचार्य के दर्शन पाए। अपने पुत्र अण्णिग को श्री-चरणो में अर्पित करते हुए निवेदन किया कि आचार्य जी ! यही हमारे वश की एक मात्र ज्योति है। यह सौ वर्ष तक प्रज्वलित रहकर धर्म का प्रकाश फैलाते रहे— ऐसा आशीर्वाद दीजिए।

क्या पूरा सौ साल का जीवन चाहती हो बेटी ?

— आचार्य जी मुस्कुराते हुए बोले ।

स्वामिन् ! हम लोगो के कारण राष्ट्रकूटो का पतन हुआ । नही तो उनसे धर्म और समाज । बडा उपकार हुआ होता । अब मैं और यह सौ सौ साल जीवित रह कर समाज की सेवा करना चहती है। राज सुख भोगने के लिए नही । जीवन के प्रत्येक क्षण को अहिसा-धम के प्रसार मे लगाने के निमित्त चाहती हूँ। आप के आशीर्वाद मे धर्माभिरुचि अत तक बनी रहे।

बेटी ! तुम साधारण स्त्री नही हो । आदिदेव की जननी

मरुदेवी के समान तुम भी लोक-कल्याण मार्ग में लगी हुई हो। तुम इस अभियान के भरोसे जनता के अपार दुःख दैन्य को दूर करके लोक कल्याण पथ पर अग्रसर हो रही हो। कर्नाटक का कोई भी शासक तुम्हारी बराबरी नहीं कर सकता। तुम व्यक्तिगत शील चारित्र्य से कर्नाटक की आदर्श महिला मणि हो। इससे भी बढ़कर भक्त शिरोमणि हो। और जैन धर्म एवं संस्कृति की तो मुकुटमणि हो। हमने सोचा था कि राष्ट्रकूटों के पतन से जैन धर्म का भाग्य सूर्य अस्त हुआ पर तुम्हारी योजना बद्ध कार्यों से विश्वास हुआ कि जैन धर्म और संस्कृति का नाश असंभव है।

प्रभो! आप मुझे न बनाइए। आप की बातों से इस दुर्बल नारी का सिर चकरा जाएगा।

— अत्तिमब्बे ने घबराते हुए कहा।

देखो बेटी! तुम पक्की हो। कच्ची नहीं। सदियों से पर्वत के तल में पड़े पड़े पुद्गल मार सह सह कर कोयला अमूल्य हीरा बन जाता है। तब उसकी चमक असदृश हो जाती है। तुम ऐसे ही हीरा हो हीरा। तुम्हें बनाने के लिए नहीं कह रहा हूं। सत्कर्म देख कर साधुवाद देना चाहिए। तुमने धर्म के मंगलमय स्वरूप का दर्शन करा दिया। तुम्हारा जीवन जितना कल्याणमय है उससे भी अधिक कल्याण मय तुम्हारे पुत्र का जीवन होगा। अत्तिमब्बे तुम जहाँ भी रहो वही तीर्थ बनेगा। तुम्हें वाक्‌सिद्धि का वर प्राप्त है। तुम्हारे स्पर्श से मिट्टी का ढेला भी सोना बन जाएगा।

— आचार्य के हृदयांतराल से बातें निकल रही थी।

मैं सिद्धि नहीं चाहती न स्पर्श से सोना बना देना ही। आप की चरण धूलि का मूल्य क्या यह सोना है? आप की पद-धूलि मेरी आँखों का अंजन बने। आप के श्री-चरणों के प्रभाव से यह मेरा हृदय जिन मंदिर बन जाय। मैं बन चाहती हूं न मान सम्मान

चाहती हूँ, केवल यही चाहती हूँ कि मेरी जीभ सदा जिनमत्र जपा करे ! मेरे कान जिनस्तुति से भर जाय ! मेरा हृदय समवसरण बने और जिनेंद्र का सिहासन हो। दीन धर्म की सेवा करने के लिए जितनी बार चाहे मुझे जन्म मिला करे ।

— ऐसा कहते कहते गद्गद् हो गई।

बेटी ! तुम परम सात्विक हो। हमारे जैसे यतियो के लिए भी तुम्हारे दर्शन से स्फूर्ति और प्रेरणा मिला करेगी।

— आचार्य जी ने मुक्त कठ से अत्तिमब्बे का यशोगान किया।

अत्तिमब्बे बकापुर के आश्रम में कुछ दिन ठहर गई। आश्रम को चिता से मुक्त करने के लिए अपनी सपत्ति का आधा हिस्सा दान पत्र करके दे दिया। अपन हाथ से रसोई बना कर विद्यार्थियो को खिलाया। बीमार विद्यार्थियो की सेवा की। आश्रम से बिदा लेने के पूर्व अजितसेनाचाय से बोली

आचार्य जी, आप हमारे समाज के रत्नो को बटोर कर लाते हैं और उन्हें सान पर चढाकर चमका देते हैं। इन विद्यार्थियो में न जाने कितने अनर्घ्य निकलेंगे। आप बिना सकोच मुझे आज्ञा दे सकते हैं। आप की सेवा के लिए सदा कटि बद्ध रहूँगी। अपनी और आधी सपत्ति भी चाहे तो लिखवा लीजिए। स्वय इस आश्रम में परिचारिका बन कर रहने के लिए भी तैयार हूँ। आप के दर्शन से बढ कर और कोई सपत्ति मुझे नही चाहिए। इस नश्वर सिहासन पर बैठने की अपेक्षा समवसरण के द्वार पर परिचारिका बन कर खडे रहने में अधिक सुख है। यह श्रेय और प्रेय दोनो है।

— यह कहते समय अत्तिमब्बे पुलकित हो रही थी।

बेटी ! ठीक कहती हो। एकाध जन्म में समवसरण के द्वार पर परिचारिका करते रहे तो सभव है कि जिन ही बन जाने

का पुण्य प्राप्त हो।

इन शब्दों में नत मस्तक अत्तिमब्बे एवं अभिनव को हँसते हँसते आशीर्वाद दिया।

१५

अजितसेनाचार्य जी के दर्शन से अत्तिमब्बे का उत्साह दुगुना बढ़ गया। उसने सोचा कि मानव की आयु सीमित है। अब अंतिम सांस लेनी होगी यह कौन जाने। अतएव जो भी कुछ धर्म-कर्म करना है जल्दी से जल्दी करना है ताकि हँसते हँसते विदा ले सकें। ऐसा सोच कर उसने निश्चय किया कि कोई भी ग्रंथ चाहे किसी जाति पंथ या देशीय का लिखा क्यों न हो अगर वह कन्नड़ में है तो उस की प्रतिलिपियाँ बनवा दूँगी।

अत्तिमब्बे का संकल्प कर्नाटक के कोने कोने में पहुँच कर धर्म एवं साहित्य की धारा प्रवाहित कर सका।

धर्म वही है जो सब के सुख का साधन हो। इस का स्वरूप समझने पर किसी भी भाषा में समझाया जा सकता है। संस्कृत में ही धर्म ग्रन्थ रचा जा सकता है यह बात नहीं। देश-कालानुसार जनता की भाषा में सरल शैली में धार्मिक ग्रन्थों की रचना होनी चाहिए। तभी जनता में धार्मिक भावना जाग्रत होगी अंध-विश्वास दूर होगा। सच्चे ज्ञान के प्रकाश में अधर्म रूपी अंधकार मिट जाएगा।

यह अत्तिमब्बे का कथन था। उसने कन्नड़ भाषा लेखकों के कष्ट को दूर कर देने की प्रतिज्ञा की। पंडितों से सादर निवेदन किया कि वे जनता की भाषा में रचना किया करें तभी जनता का ज्ञान

चुका सकेंगे। ऐसे व्यक्तियो को चुनचुन कर अपने यहाँ स्वागत किया जो केवल कन्नड में ही रचना किया करते थे। उनका आदर और सम्मान इस कदर किया कि कोई राजा-महाराजाओ से भी करते नही बने । कर्नाटक में मलय मारुत के समान चक्कर काटते हुए सस्कृति का पचार किया । उन दिनो में कर्नाटक में शैव, वैष्णव, बौद्ध और जैन सप्रदाय प्रचलित थे । अत्तिमब्बे, इन सभी धर्मों का समादर किया करती थी। मठ मदिरो को भर पूर दान भी देती थी। अतएव चतुस्समय सरक्षिका नाम से विख्यात हुई ।

राष्ट्रकूटो के पतन के साथ ही माल्व स्वतत्र बना । दिन ब दिन इन की शक्ति भी बढती गई । उत्तर के कई प्रदेशो को जिन पर राष्ट्रकूटो का शासन चल रहा था मालव परमारोने हडप लिया। बाद को कन्नड जनता पर भी आक्रमण करने लगे। तैलप ने कई बार उनका मुकाबिला किया। उनसे लोहा बजा बजाकर थक गया था। अत में अपने पुत्र इरिवबेडग के नेतत्व मे बडी सेना भेजने का निश्चय किया। इरिवबेडग यात्रा के पूर्व अत्तिमब्बे से आशीर्वाद पाने के लिए आया। मल्लप तथा दल्लप दोनो ने हाथ जोड़कर होनहार चक्रवर्ती साम्राट का स्वागत किया।

माताजी, मैं समर-यात्रा पर निकला हूँ। यही मेरी प्रथम यात्रा है। आशीर्वाद दीजिए। ताकि मैं विजयी बनूँ।

ऐसा कहते कहते अत्तिमब्बे के चरण-रज उठा कर सिर पर चढा लिया ।

बेटा ! क्या तुम को मेरे आशीर्वाद चाहिए ? समर में सम्मिलित होनेवालो को आशीर्वाद देने में मुझे भय होता है।

अत्तिमब्बे पीछे हट गई।

माताजी ! आप को हमारे राज्य की प्रत्येक प्रजा देवता मानती है। आप का आशीर्वाद वज्र-कवच होगा। आप के स्पर्श में

संजीवनी शक्ति है। आप की कृपा दृष्टि से मृतक भी जी उठता है।

राजकुमार ने प्रार्थना की।

बेटा ! रहने दो। मैं जानती हूं कि मुझ अभागिनी की योग्यता कितनी है ! ज्योतिषी की बेटी विधवा बन जाती है ! तुम्हारे कहने के अनुसार रत्ती भर भी मुझ मे शक्ति होती तो क्या मैं अपने प्राणेश्वर को खो बैठती ? अपनी प्यारी बहन को अग्निशय्या पर लेटने की नौबत आती ? यह जनता मुझे देवी कह कर तृप्ति पाती है ! और परमात्मा की कृपा पर भरोसा रख कर जाओ।

देवि, आप मेरे सिर पर हाथ रख कर कह दें कि तुम विजयी बनो।

— ऐसा कहते हुए हरिवेग ने और एक बार चरणों में सिर झुकाया।

अत्तिमब्बे हर्षित हो उठी। बोली—

बेटा ! धर्म युद्ध करो। प्रलोभन में मत फँसो। जाओ। विजयश्री के साथ लौट आओ। धर्म तुम्हारी रक्षा करेगा।

अत्तिमब्बे के आशीर्वचन और स्पर्श पाकर हरिवेग को बड़ा आनंद मिला। तब उठ कर पास ही बैठे हुए रन्न की ओर देख कर बोला—

महाकवि की जय ! आप समर-यात्रा में साथ दें तो अच्छा होगा। आप से हमारा उत्साह बढ़ेगा और युद्ध के साक्षात अनुभव से आपका साहित्य सजीव बनेगा।

हमारे कविवर्य कोरे लेखनी चलानेवाले नहीं हैं। यह स्वयं परशुराम के शिष्य हैं। इन का परशुराम चरित एक बड़ा वीर रस प्रधान पद्य काव्य है। अतः इसलिए युद्ध कोई अपरिचित घटना नहीं है।

अत्तिमब्बे ने कहा।

जी हाँ । मैंने भी परशुराम चरित पढा है। ऐसे कविसिंह साथ रहेंगे तो समर भूमि भी रसागार बनेगी। दो उद्देश्य लिए यहाँ चला आया था । सर्व प्रथम आप से आशीर्वाद पाना था , पाया। दूसरा, इस महाशक को अपने साथ ले जाना है । आप की आज्ञा हो तो ये अवश्य साथ चलेंगे।

— इरिवबेडग ने प्राथना की।

रन्न ! क्या कुमार की बात मानोगे ?

अत्तिमब्बे ने रन्न से पूछा।

आप के आशीर्वाद मिले और आदेश हो तो मैं कुमार के साथ समर भूमि की यात्रा कर के लौट आऊँगा।

रन्न न अत्तिमब्बे पर सारा भार डाल दिया।

रन्न ! तुम्हारे द्वार पर भाग्य ही चला आया है। जाओ। देखो, समर में साहस की कमी न हो और धर्म-ग्लानि भी न हो !

— ऐसा कह कर विदा किया।

परमारो के साथ महीनो तक लोहा बजाना पडा। रन्न स्वय शस्त्र उठाना चाहता था, पर इरिवबेडग ने अनुमति नही दी। बोले–

अभी क्या बिगडा है कि आप हथियार उठा लें । आप की वाणी सजग हो, आप हमारे जवानो में आग सुलगाइए। उनका समरोत्साह बढाइए — यही हम आप से आशा रखते हैं — माताजी का भी यही आदेश था न ?

युद्ध समाप्त हुआ। इधर रन्न का गदायुद्ध भी समाप्त हुआ। इस काव्य का नाम साहस भीम विजय रखा गया। इरिवबेडग और साहस भीम में अभेद दृष्टि रख कर काव्य की रचना हुई। दुर्योधन का छल, निर्व्याज एव निश्छल प्रेम आदि सद्गुणो को भी मुक्त कठ से सराहकर चरित्राकन में नवीनता दिखाई गई थी । स्वाभिमान का सजीव वर्णन काव्य की विशेषता बन गई । कवि ने इरिवबेडग को

काव्य समर्पित किया था ।

चालुक्य सम्राट तैलप रन्न के युद्धवर्णन में अपने पुत्र इरिवबेडग के युद्ध कौशल का वर्णन देख कर प्रसन्न हुआ । कर्नाटक के सम्राट ने कवि रन्न को कवि-सम्राट कह कर समादृत किया । स्वर्ण-दण्ड चमर चंवर हाथी घोड़ आदि सभी राजगौरव कवि को प्राप्त हुआ । ग्राम को जागीर में दिया । रन्न ने इन सारी विभूतियों को ला कर अत्तिमब्बे के चरणों में अर्पित किया और निवेदन किया —

माताजी ! मैं आप का स्नेह-शिशु हूं । यह सारी विभूतियें आप की हैं । आप के पद रज के सम्मुख इनका क्या ऐसे हजारों राजा-महाराजाओं से प्राप्त सम्मान भी तुच्छ है । अपना कल्याण इन विभूतियों में नहीं आप के पद रज में देखता हूं । वही मेरे लिए सब कुछ है ।

रन्न कवि भाव परवश हुए ।

रन्न तुम्हारी कीर्ति से मेरा हृदय फूले नहीं समाता । तुम्हारा कीर्तिलता जैसे जैसे बढ़ बढ़ा उठती है वैसे ही वैसे मेरे हृदय का हरषायु उमड़ पड़ता है । मेरे स्वामी का स्वप्न यथार्थ बन रहा है । अब तक तुमने जो भी काव्य रचना की वह केवल लीला है यश चाह है लोक प्रसिद्धि की भूख से प्रेरित थी । वह अब मिट गई होगी । अब आत्मोद्धार के लिए काव्य लिखो । तीर्थंकरों की शरणागति ही मेरे लिए तुम्हारे लिए और समस्त लोक के लिए गतिप्रद है । तीर्थंकरों की लीलाओं का वर्णन करो । तब मैं अपनी ओर से तुम्हें एक विभूति दूंगी — समझे ।

— कह कर मुस्कराई ।

माताजी आप के शुभाशीर्वाद ही पर्याप्त है । तीर्थंकर पुराण रचूंगा । अब मैं नरकाव्य भी रचना में प्रतिभा का अपव्यय नहीं होने दूंगा । शीघ्रातिशीघ्र आप के आदेश का पालन करके कृतकृत्य

बनूंगा फिर से झुक कर प्रणाम किया और चरण धूलि का तिलक लगा लिया ।

१६

चामुडराय ने माता जी की आज्ञा मानकर उसकी महादिच्छा को पूर्ण करने के लिए श्रवणबेळगोळ के चद्र-गिरि शिखर पर बाहुबली की बृहदमूर्ति खुदवाई । यह समाचार हवा के साथ आसेतु हिमालय फैल गया । अभिनव समवसरण क्षेत्र बेळगोळ बना । श्रावकों की कतार चीटी की कतार सी लग गई । रन्न कवि ने विजयपुर को समाचार भेजा । चामुडराय के आज्ञानुसार रन्न ने अत्तिमब्बे को सपरिवार भगवद्दर्शनार्थ आने का निमत्रण दिया । राचमल्ल गग ने तैलप, दल्लप और मल्लप को अलग अलग निमत्रण भेजा । अत्तिमब्बे ने निमत्रण स्वीकार किया । लक्कुडि की राजामाता को यथासम्मान लिवा चलने का प्रबध रन्न ने कर दिया ।

भगवद्दर्शन करने तक केवल फल और दूध पर रहने का सकल्प अत्तिमब्बे ने किया । यह सुनकर उसके नातेदार और रिश्तेदार सब भय भीत हुए । कहाँ विजयपुर और कहाँ श्रवण बेळगोळ! जल्दी से जल्दी जाना भी चाहें तो कम से कम पद्रह दिन लगेंगे । रास्ते में पडनेवाले जिन-मदिरो के दर्शन करते हुए जाने लगें तो महीने से कम तो नही होगा । उतने दिनो तक कैसे फल खाकर या दूध पीकर रहे ? यात्रा के अवसर पर व्रत-नियमोका पालन कैसे सभव होगा ? शरीर को इतना कसना ठीक नही ।

पद्मब्बे ने इन शब्दो में बहू को समझाया ।

माताजी ! मैंने संकल्प कर लिया। उन्हीं भगवान् गोम्मटेश्वर बाहुबली की प्रेरणा से ही तो ऐसा किया। कुछ नहीं होगा — सब उनकी कृपा है। आप व्यर्थ चिंता नहीं करें।

— अत्तिमब्बे ने दृढ़ता से कहा।

अत्ति ! तुम बड़ी हठीली बन गई हो। बड़ों की बात मानना चाहिए। उनके मना करने पर तुम्हें किसी अनुष्ठान में नहीं लगना चाहिए। दूध और फल के बदले रोटी और जल ले लो समझी।

अक्कमब्बे ने सुझाया।

मां ! तुम नहीं खाओगी तो मैं भी नहीं खाऊँगा।

— अण्णिग देव ने कहा। उस समय सहसा उसके आँसू निकले।

अण्णिग ! रोओ मत ! उनकी प्रेरणा से ही तो ऐसा कर रही हूं। अतः उनकी प्रसन्नता के लिए किया जा रहा है अतः किसी को उसका विरोध नहीं करना चाहिए। यह अनुचित होगा।

— अत्तिमब्बे ने बेटे को समझाने के बहाने सब को समझा दिया। और लोगों ने इस बारे में कहना छोड़ दिया।

अत्तिमब्बे ने रन्न महाकवि और पोन्न महाकवि को भी कहला भेजा। वे आए। फिर नगर भर में यह ढिंढोरा पिटवा दिया कि जो भी बाहुबली के दर्शनार्थ उनके साथ जाना चाहे निकले। उनका सारा खर्च दिया जाएगा।

असहाय और निस्सहाय व्यक्तियों के लिए अत्तिमब्बे कामधेनु थी। उसके सम्मुख जाने पर दरिद्र से दरिद्र भी श्री-सम्पन्न बन जाता। कष्ट में पड़े हुए लोगों का कष्ट दूर हो जाता। कभी वह रोगियों को देखती तो अपने हाथ से उनकी सेवा करती दवा देती और तन्दुरुस्त हो जाने के पश्चात भी महीनों उनके लिए पुष्टिकर दूध फल आदि का प्रबंध करती। दीन दुखियों की सहायता करना उसका

व्रत था। जाति-पाति की वात सेवा मे नही देखी जाती थी। ऐसी अन्नपूर्णा जब यात्रा के लिए निमन्त्रण दें तो कौन उस मौके को हाथ से जाने देगा? कुछ लोग यात्रार्थी वन कर आए। कुछ एक परिचारक वर्ग में सम्मिलित हुए। कल्पवृक्ष की छाया में रहते समय राजा और रक में विशेप क्या कुछ भी अतर नही रह जाता। अमृत वांटने वक्त जिस किसी के हाथ में पडा वह अमर वन गया।

अत्तिमब्बे का यात्रा-दल प्रति दिन दस मिल चलता। सैंकडो वैल गाडियाँ थी। वालक वृद्ध ओर रोगी गाडियो पर सवार थे। तत्परता से उनकी देख-भाल होती थी। अत्तिमब्बे, पदमब्बे और अण्णिग एक रथ पर जा रहे थे। औरो के लिए भी यथायोग्य रथ दिया गया था। अत्तिमब्बे केवल दूध और फल ले रही थी। सो भी दिन में एक वार। पर उसकी शक्ति कुठित नही हो रही थी। सभी यात्रियो से स्वय मिलकर सुख-सुविधा का विचार करती थी। उनको हिडोले पर विठाए शिशुवो के समान सभाले ले जा रही थी। जिन-मदिरो में पडाघ डालती। सब ग्रामवासियो से मिलकर दान-दक्षिणा आदि से उनका यथायोग्य सत्कार करती थी।

पद्रह दिन वीत गए। अत्तिमब्बे के स्वास्थ्य में कुछ गडवडी दिखाई देने लगी। वह कमजोर वन गई। दिन में केवल एक वार दूध और फल मित मात्र मे लिया करती थी। पर विना विश्राम लिए काम करती थी। परिणाम यह हुआ कि सेहत गिरती गई। इतना दुर्वल वन गई कि लोग घवरा गए।

वेटी! तुम कर्नाटक की देवी हो। तुम्हारे रहने से यह देश हरा भरा रहेगा। तुम दुवल हो तो देश दुवल होगा। देश की संस्कृति क्षीण हो जाएगी। दूध और फल ही सही कुछ अधिक लिया करो।

— पप महाकवि ने समझाया।

माताजी आप अन्न-प्यास से दुर्बल बनती जा रही हैं यह किसी को अच्छा नहीं लगता । यह व्रत आप के बूते का नहीं है छोड़ दीजिए । समवसरण के लिए आयोजन क्या निश्चित नहीं रहे? जिनेश्वर भी नहीं आप भी ही चिंता में डूबे रहें। आपने सेवाधर्म की दीक्षा ली है तो उपवासों की आवश्यकता आप के लिए नहीं है। पप महाकवि की सलाह मानिए। सोचिए, यदि वृक्ष की जड़ सूख जाय तो वृक्ष कैसे हरा रह पाएगा ?

— *रन्न ने प्रार्थना की।*

मामाजी ! आप और हम रत्नोपजीवी हैं। आप जैसे व्यक्ति भी मेरे संकल्प में विघ्न डालने का प्रयत्न करें यह क्या उचित है ? इस मिट्टी के ढेले को बड़ा महत्त्व दे रहे हैं क्या मेरे पीछे ही प्रलय हो जाएगा ? मेरे मुँह के खाने पर ही जिन पूजा और मेरे अभीष्ट के सूखने पर ही आना पड़ेगा। ऐसा मान कर चलूँ ! क्या आप समझते हैं कि यह सब मैं करती जा रही हूँ । ममता ने आप की समझ को क्या मार डाला है ?

— अत्तिमब्बे ने खिन्न होकर जवाब दिया।

पोन्न जी ! कम से कम आप के कहने पर अत्तिमब्बे मान लें । एक बात कह देखिए। क्या हम लोग चुपचाप देखते रहें और कर्नाटक माता को सूनी करते जाय ?

रन्न ने पोन्न फुसलाया ।

रन्न जी हम सन्यासी हम व्रतनियमों के पालन में कैसे विघ्न डालें ? कौन जाने कि किस व्यक्ति में कौन-सी शक्ति छिपी रहती है ? उपवास से भले ही देहशक्ति क्षीण हो पर आत्मशक्ति की वृद्धि होती है। आप चिंता नहीं कीजिए ।

पोन्न जी ने उत्तर दिया।

स्वामिन् ! न जाने इस संसार में कितनी बार जन्म ग्रहण

किया है । विषय सुख के लिए अनत काल से अनत जन्म ले चुकी हूँ। केवल एक जन्म का एक अश परमपद पर अर्पित करना चाहती हूँ तो भा न जाने कितनी विघ्न-बाधाएँ आ रही हैं। हमारे आत्मीय गुरुजन परिजन ही विघ्न डालते हैं तो क्या करूँ।

— अत्तिमब्बे ने अत्यत विषाद व्यक्त किया।

बेटी ! तुम खिन्न न हो । चाहे जो परिस्थिति हो व्रत में बाधा न आने दो । ससार की दृष्टि से तुम और हम दोनो बडे सनकी हैं। हम दोनो के सिर अध्यात्म की सनक सवार है।

.... इन शब्दो में पोन्न कवि ने अत्तिमब्बे को आश्वासन दिया ।

करीब एक महीना बीता होगा कि यात्री-दल चन्नरायपट्टण पहुचा । उस रात को वहीं ठहरे । प्रात काल स्नानादि से निवृत्त होकर सब ने अल्पाहार लिया । अत्तिमब्बे ने अपने नियमानुसार दूध-फल लिया। सिद्धि की प्रतीक्षा में सफल हुए योगी के समान उत्साह से आगे आगे बढी । प्रतिक्षण बडी कातरता से परमात्मा के दर्शनार्थ सिर उठा उठा कर देखती न जाने कब मिलें । आधे घटे भर यात्रा की होगी कि सहसा दर्शन मिले । ऐसा लगा कि बाहुबली अपने मुग्ध मुखमडल पर मृदुमुस्कान लिए यात्रार्थियो पर कृपा दृष्टि फैला रहे हो । यात्रार्थियो का स्वागत कर रहे हो । सहस्रों कठो से एकाएक जयघोष हुआ । कदम कदम बाहुबली की मूर्ति स्पष्ट से स्पष्ट तर बनते गई ।

अगल बगल में धान के खेत थे मानो हरे मखमल बिछा दिए हो । जहाँ तहाँ क्रौंच बगुले आदि पक्षी उड रहे थे । एक के बाद एक जलाशय मिल रहा था। जलाशयो में अनगिनत कमल खिले थे। परमात्मा के दिव्य सान्निध्य के सूचक थे ये दृश्य ! ब्रह्मानद रसानद के आवरण में अधिक आकर्षक बन जाता है । वैसे ही श्रवणबेळगोळ

बाणउवसट्टन के प्रकृति-सौंदर्य से अत्यंत आकर्षक बनता जा रहा था। रन्न कवि का मन चंचरीक बनकर कमल के चारों ओर मंडराने लगा। उन कलाओं को देखते ही स्वयं कवि मन उसके उन्नत इन्द्रगिरि पर रसयात का अनुभव करके पुलकित हो उठा। अत्तिमब्बे की दृष्टि में प्रकृति के कण-कण में भगवद्भक्ति ओतप्रोत दिखाई दे रही थी।

रन्न ने सब से आगे देखकर चामुण्डराय को यात्रा-दल के आगमन की सूचना दी। तुरंत श्रवणबेळगोळ के सदर फाटक पर आकर सपरिवार अगुवानी करने चामुण्डराय खड़ा हो गया। उस महाकवि सहित समस्त आर्यियों का स्वागत किया। पोन्न के चरणों में नमस्कार करके पद रज लिया। काळलादेवी ने सब स्त्रियों का स्वागत किया। अत्तिमब्बे को अत्यंत दुर्बल देखकर दंग रह गई। बोली —

अत्ति! क्यों ऐसा बन गई हो? क्या कोई बीमारी है? देह अच्छी नहीं? हमारे स्वामी के दर्शन से अवश्य तुम्हारी देह सुधरेगी अमृत पान करने का आनंद मिलेगा। तुम तो फूले नहीं समाओगी।

काळलादेवी ने प्यार से अत्तिमब्बे के सिर पर हाथ फेरा। अत्तिमब्बे ने झुककर प्रणाम किया और कहा —

मामी! आपने इस कलि युग में भी समवसरण को धरातल पर उतरवा दिया है। सारा देश आप का आभार मानता है। हमारे जैसे हजारों व्यक्तियों की अपेक्षा आप जैसे एक भी व्यक्ति हो तो देश का सौभाग्य ही सौभाग्य है।

— अत्तिमब्बे ने सद्भावपूर्वक कहा।

अत्ति! तुम कहाँ और मैं कहाँ? व्यर्थ प्रशंसा कर कर तुम विचार रही हो। तुम्हारी बात खूब बूझी हूँ। तुम ने धवल मय रतन की सौ-सौ प्रतिमाएँ बनवाई हैं! तुम ही ने तो डेढ़ हजार स्वर्ण प्रतिमाएँ बना कर दान दिया है। यह क्या कोई मामूली सी

बात है? तुम्हारे दिए सुवर्ण का ढेर लगावें तो ऐसी एक मूर्ति बन सकेगी!

काळलादेवी ने मुक्त कंठ से सराहा।

माताजी, आप एक बड़े पर्वत हैं! और अत्तिमब्बे करुणा तरंग पूरित महासागर है।

— पप महाकवि ने इन महिला-रत्नों का काव्यमय भाषा में वर्णन किया।

मैं पर्वत हूँ और यह सागर तब तो आप शून्य गगन हैं — यही न?

काळलादेवी की हँसी सब को अच्छी लगी।

हाय! हाय! उन्नत विशाल और व्यापक वस्तुओं को आपस में बांट लें तो मेरे लिए बचा क्या रहेगा?

— रन्न ने घबराते घबराते कहा।

घबराओ मत रन्न! तुम मार्तण्ड हो कवि मार्तण्ड!

— पप ने रन्न की पीठ ठोकी।

जी! धन्य भाग! शून्य में भ्रमण कर सकूँगा। और सागर का रस भी ग्रहण कर सकूँगा और पर्वत

— रन्न की बात पूरी सुनी भी नहीं सब हँस पड़े।

सब गोम्मटेश्वर के दर्शन के लिए चले। काळलादेवी की इच्छा थी कि दुर्बल अत्तिमब्बे को डोली के सहारे ले चले।

मामी! मुझ पर आप का असीम स्नेह है। मानती हूँ! भला, डोली पर मैं क्यों चलूं। बच्ची थोड़े ही हूँ।

अत्तिमब्बे ने असम्मति दी।

बच्ची! तुम बड़ी कमजोर हो। अब हठ मत करो। स्वामी का दर्शन करना मुख्य है। चाहे जैसे उनके पास पहुचो! बच्चों, बूढ़ों और रोगियों को चढ़ कर अपने पास आने का आग्रह दयामय गोम्मटस्वामी का नहीं है। जैसे तैसे ही सही उनके पास

पहुंचे यही मुख्य है। अपनी कृपा दृष्टि से मंदस्मिति से अपने पास आनेवालों को देखते हैं। हम लोग खोए गोम्मट का भजन करें तो बैठे बैठे सुनेंगे। बैठे बैठे गाएँगे तो खड़े खड़े सुनेंगे। हम खड़े होकर नृत्यगान करें तो नाचते हुए सुनेंगे। हम उन के भजन कीर्तन में मग्न होकर सुनें तो अपना सामान्य ही है बैठेंगे! अति तुम मेरी अतिथि हो हमारे कहने के अनुसार चलना ही होगा। तुम डोली में बैठो।

— अक्कनादेवी ने आग्रह किया।

स्वामी! कृपया इस विषय में मुझ पर दबाव न डालिए। मैं केवल निमित्त मात्र हूं। गोम्मटेस्वामी मुझे अपने सान्निध्य में उठा ले जाएँगे। ऐसे कृपालु के पास जाने के लिए इन बेचारों के कंधों पर चढ़ूं? उनका नाम जप कर जीव ऊर्ध्व-गामी बनते हैं! क्या मैं पहाड़ चढ़ नहीं पाऊँगी?

— अत्तिमब्बे ने दृढ़ता पूर्वक कह दिया।

अति क्या तुम्हारी बुद्धि नाश होने लगी है? निर्जल निराहार रहने से तुम्हारी देह एक दम कमजोर हो गई है। पैदल निकलोगी तो उनके पास तक पहुंच ही न सकोगी। बड़ी बड़ों की बात मानो। डोली पर चढ़ो।

— कुछ स्नेह भरे अधिकारवाणी से अक्कनब्बे ने कहा।

माताजी आप क्या उस मेंढक की कहानी भूल गईं? उसने महादेव स्वामी का समवसरण देखने की अभिलाषा से एक कमल पुष्प लेकर विपुलाद्रि पर जाने का संकल्प किया। वह गुणस्थान से गुणस्थान तक चलनेवाले महासाधक की भांति चलते चलते जा रहा था कि रास्ते में श्रेणिक महाराज की सवारी आई। आप हाथी पर चढ़ आ रहे थे। तब एक अनहोनी घटना हो गई। हाथी से वह मेंढक कुचला गया। भगवान के दर्शन की आकांक्षा लिए वह

चल वसा । उसके अत करण में समवसरण का दृश्य समा गया था अतएव समाधिमरण का फल पाकर वह देवता वना । विमान पर चढ कर महावीर के समवसरण समारोह पर श्रेणिक से पहले ही जाकर सम्मिलित हुआ । बीच रास्ते आप जिस अनीष्ट की सभावना देख रहे हैं वह सभव बन जाय ! अहोभाग्य है । पर कहाँ मैं उस योग्य हूँ !

• अत्तिमब्बे भावावेश मे बोल उटी ।

लोगो ने सोचा कि उमसे कुछ कहने जाना ही व्यर्थ है ।

अत्तिमब्बे का उत्साह बेहद था पर देह की शक्ति सीमित थी । दस एक कदम चढ सकी पैर ने जवाव दे दिया । आगे चढना सभव नही हुआ । बीच बीच में दम लेते हुए चढने लगी । सो भी कुछ दूर तक । आगे वह भी असभव वन गया । शाति और जवकि सहारा देने को तैयार होकर बोली

मामी ! हम दोनो के सहारे चढ सकती हो । तुम कधो पर हाथ रखे रहो ! हम सभाल लेंगे । शाति ने विनती की ।

शाति ! क्या नही जानती हो कि सब को अपना अपना कर्म फल आप भोगना पडेगा ? यह सहारा दे सकती हो , पर भवसागर में डूबी हुई मुझे कौन सहारा दे पाएगा ?

— वडे मार्मिक ढग से प्रश्न किया ।

आप तो सारा पुण्य अकेली बटोर लेना चाहती हैं । हम लोगो को भी कुछ प्राप्त कीने का मौका देती जक्की ने आक्षेप किया ।

वेटी ! सकल्प करने पर दृढता से पालन करना चाहिए । जैसे जैसे शरीरक सुखसुविधाएँ अधिक होती हैं । वैसे ही वैसे हम भगवान से दूर दूर पडते जाते हैं । धर्म से घवडाने लगेंगे । जन्म जन्मातरो में इस घोस्दे को आराम पहुचाने का ही तो प्रयास किया है ? इतना सुख पाकर भी इस देहे ने आत्मोन्नति के लिए क्या किया है ? शाति ! मैं देह के अधीन नही हूँ देह को अपने वश में

रखना चाहती हूँ कि माँ के समान तुम मेरी शुभकामना देने आ रही हो।

अतिमब्बे ने खिन्न होकर कहा।

पहाड़ को चूमते हुए आकाश में सिर तानकर वह विराट बाहुबली की मूर्ति दर्शनीय थी। विषयकषाय-वासना आदि उसके माथे पर खेलते रहे। उस मूर्ति को एक ही बार देख लेना हमारी आँखों के बूते की बात नहीं। अलग दृष्टि अथवा अविकासित आत्माओं के लिए कैसे संभव हो सकता है! अतएव हम यथावत् दर्शन पा सकेंगे। सहस्र दल कमल पर बाहुबली खड़ा है। चरणों के चारों ओर बाँबी बने हैं मानो घातिकर्म उस रूप में खड़े होकर अपने बचाव का मार्ग ढूँढ रहे हों। उन बाँबियों के शिखरों से सर्प झाँक रहे हैं। माधवीलता वहीं पल्लव का आश्रय पाकर ऊपर चढ़ती गई है जो घुटनों के सहारे चढ़ते चढ़ते किसी प्रकार हाथ का सहारा पा लिया है। वहाँ से बाहुओं लिपटी हुए पत्र तथा फूलों की गुच्छाओं से सुशोभित है। दर्शकों की दृष्टि भी लताओं का अनुसरण करते हुए ऊपर को चली जाती है। विशाल वक्षस्थल देखना चाहिए कैसे विशाल है। भुजदण्ड की छोटी मोटी के समान कंधे में समर्थ महा शक्ति वाली बाहु है। ठोडी कैसे आकर्षक है! जरा ऊपर दृष्टि ले जाने पर मूर्ति कला की चरम परिणति से अभिव्यक्ति मृदु मंदहास होठों पर दिखाई देगा, मंदहास की लहरें अनन्त सुख की तरंगों से दिखाई देंगी। नाक आँख भौंहों और कान घुँघराले केश — एक से एक बढ़कर चित्ताकर्षक हैं। मूर्ति-कला की सीमा बाहुबली का यह पाषाण प्रतीक है।

अतिमब्बे ने मूर्ति की इस भव्याकृति की झाँकी पाकर कृतकृत्यता का अनुभव किया। सहसा उसे नागदेव और गुरुमब्ब का स्मरण जागृत हो उठा अर्थात् प्रसाद आभार तक से भावावेश प्रभावित हो उठा।

स्वामी ! तुम्हारे दर्शन पाने तक उनको जिलाए रखते। तुम्हारे ही समान वे भी स्वाभीमानी थे। तुम्हारे ही जैसे वे भी साहसी थे। यदि जीवित रहते तो तुम्हारे ही जैसे संभव है कि वे भी त्यागी बने होते।

अत्तिमब्बे बडबडाने लगी।

गुडू ! तुम हतभागिनी हो। नही नही तुम दोनो को अपने निकट बुला लेने का भाग्य गोम्मटस्वामी का ही नही है! प्रभो! आज वे दोनो जीवित होते तो तुम्हारी मूर्तियां बनवा बनवाकर भारतवर्ष के कोने कोने में प्रतिष्ठापित करते अर्थात् राष्ट को रक्षाकवच से मढते हमारी गुडू का हृदय इतना उन्नत और विशाल था कि ऐसी दसो मूर्तियो को आराम से सुला लेती थी। उसकी विशालता की समता क्या सागर कर पाते ! प्रभो उन दोनो को मुझसे छीन कर मुझे अधा कर रखा।

अत्तिमब्बे की परा-वाणी मे आकाश भी काप उठा। ठीक उसी समय वहाँ किसी बूढी को लिए कोई आया और वह उस बूढी से पूछने लगा —

नानी ! हम परमात्मा के निकट आए हैं। क्या उनके चरणो तक पहुचा द।

चरण के पास ! नही–नही। मुझे यही बैठने दो। जब तक मेरी दृष्टि मुझे नही मिलेगी तब तक मैं अन्न जल ग्रहण नही करूंगी।

ऐसा कहते कहते कुछ दूर सरक कर बैठ गई। उस कमी का स्पर्श हुआ सा लगा।

यह क्या है ? क्या किसी को कुचला ? हाय हाय।

– बूढी ने कहा।

बूढी माँ ! मैं ! मेरा नाम अत्तिमब्बे है।

अनिमम्बे ! यह नाम सुनते ही बुढ़िया के शरीर में बिजली का संचार हुआ। बोली —

कौन अनिमम्बे? तुम्हारा गाँव कौन सा है? इसी नाम की एक देवी विजयनगर में रहती है।

हाँ हाँ! मैं विजयनगर की अनिमम्बे हूँ।

तब तो मेरा अहोभाग्य है। ठीक समय पर मिली हो। तुम दानचिन्तामणि हो न? तुम कल्पतरु हो। चिन्ताग्रस्त व्यक्तियों के लिए चिन्ता दूर करनेवाली चिन्तामणि हो। माँ तुमने सब की इच्छा पूर्ण की है। मेरी भी इच्छा पूर्ण करो। मुझे दृष्टि दान दो।

उस बुढ़िया ने ऐसे गिड़गिड़ा कर माँगा कि जैसे कंगाल श्रीमंतों से माँगा करते हैं।

बूढ़ी माँ तुम्हारा गाँव कहाँ है?

कोल्हापुर। वहाँ से रवाना होते समय मेरी दृष्टि अच्छी थी। मेरे पास पैसे नहीं थे। हमारे गाँव से कुछ लोग चले। उनके पीछे पीछे चल पड़ी। वे बड़े धर्मात्मा थे। रास्ते भर मुझे खिलाते पिलाते रहे। जब तक आँखें सूझ रही थीं पैदल उनके साथ चलती रही। पर जैसे जैसे दृष्टि धुँधली सी हुई, लाठी पकड़ कर उसके सहारे चलने लगी।

तब क्या तुम्हारी दृष्टि गाँव से निकलते समय स्पष्ट थी?

थी। बहुत अच्छी थी। गाँव से निकले तीन महीने बीत गए। अभी अभी एक सप्ताह पूर्व मैं स्पष्ट देख सकती थी। धीरे धीरे आँख बुझती गई। अब तो महापुरुष है कुछ भी दिखाई नहीं देता। देवी एक बार मेरा स्पर्श करते हुए कहो कि तुम्हारी दृष्टि प्राप्त हो। मुझे विश्वास है कि मेरी दृष्टि साफ हो उठेगी। मैं देख सकूँगी। एक बार मैं अपनी प्रभु देखना चाहती हूँ। बाद का मेरी दृष्टि सदा के लिए बुझ जाय।

बूढी माँ। क्या तुमने इससे पूर्व मुझे कही देखा था ?

हमारे देश में तीन व्यक्ति इतने प्रसिद्ध हैं कि उनको जिन्होने नही देखा वह सचमुच अभागा ही होगा । उन तीनो में पहला स्थान तुम्हारा है, अत्तिमब्बे तुम्हारा है! दूसरा स्थान काळलदेवी का, और तीसरा स्थान है सइ बाहुबली का। इनको देखने के बाद और कुछ नही देखा तो कोई नुकसान नही। प्रथम दोनो को मैंने कोल्हापुर में देखा था। अब मेरे प्रभु के दशन के लिए पाच सौ मील पैदल आई। पर आखिरी घडी में निगोडी आँख बुझ गई। अब देवी दृष्टि दान दो हे दानचितामणि। नही तो मैं यही अनशन करके मर जाऊँगी।

बूढी माँ। मैं भी एक सामान्य अबला नारी हूँ। दृष्टिदान देने की क्षमता मुझ में कहाँ ? पुरखो ने सग्रह करके अपार सुवर्ण-राशि रख छोडी थी। उसे बाँट बाँटकर खाली करती आई। तालाब का पानी भरा था, नाले में बहा दिया। यह अपनी मेहनत की कमाई थोडे ही थी। जनता की सपत्ति थी जनता में बाँटी गई। तालाब का पानी तालाब में ही समा गया। बस कतज्ञ जनता मुझे दान-चितामणि कह कर सम्मानित करती है।

रहने दो देवि। मेरे लिए प्रभु से प्रार्थना करो किसी तरह दृष्टि-दान दो।

बुढिया बच्ची सी मचलने लगी। अत्तिमब्बे के चरण पकड कर रो पडी। अत्तिमब्बे का अत करण विश्वानुकप से द्रवित हो उठा। सीधे उठकर प्रभु के चरणो के निकट आई। प्रभु के चरणो का शुद्ध जल से अभिषेक किया। उस जल के साथ आँसू भी मिले थे। उस पादोदक की कुछ बूँदे उस बुढिया पर छिडकाई गई। अत्तिमब्बे ने आँखें बध करके प्रायना की। .. हे प्रभो। यह एक जीव है जो तुम्हारे दर्शन के लिए लालायित है। हे दयामय। दया करो। कृपालु ! कृपा करो। मैं अपनी एक आँख से तृप्त होऊगी। दूसरी

आँख की ज्योति इस बढ़िया को मिल जाय। हे प्रभो यदि बुढ़िया को आँखें नहीं दी तो तुम्हारे सिर मेरी सौंह।

— इस प्रकार अतिमब्बे न भक्ति परवश होकर कहा। पादोदक के स्पर्श से उस बुढ़िया ने यह अनुभव किया कि मानों चाँदनी ही उस पर छिड़काई गई। सूरज पर से बादल जैसे हट जाता है वैसे ही आँख पर से वह परदा भी हटा जिस कारण दृष्टि धूम सी गई थी। उसका कुतूहल और उत्साह जैसे जैसे बढ़ता गया वैसे ही वैसे उसकी दृष्टि भी स्पष्ट बनती गई। ठीक उसी समय कहीं से ठंडी ठंडी हवा बहने लगी। काले बादलों ने घर कर सूरज के तेज कम कर दिया। कुछ बूँदें भी गिरी। प्रभु पर स्वर्गीय अमृत कलश का अभिषेक हुआ। बरसात का वह उस प्रकाकृति पर से उतरते उतरते बड़ा आकर्षक लग रहा था। बुढ़िया की आँखें स्पष्ट दिखाई देने लगी। उसने बाहुबली की मूर्ति को मापाद मस्तक देखा। बरसात में भीगती था रही थी पर जनता को इसका ध्यान ही नहीं था। सब आनंद सागर में डूब हुए थ। अतिमब्बे के आनंद का तो पार पार ही नहीं था।

अतिमब्बे ने सभी को अनुग्रह करके भले दी! जनता मे यह समाचार जिस दृष्टि को भी मात करते हुए फैल गया। मस्तकाभिषेक के निमित्त भरत भूमी के कोने कोने से भक्तजन आया ही था। उनमें जो जो मूक बधिर समझे लूले कोढ़ी तपरी आदि थे सब अतिमब्बे के पास आए। अपने कष्ट से पार करने के लिए प्रार्थना की। बाहुबली की अपेक्षा जनता अतिमब्बे के शांति-ध्यान में तन्मय होने लगी। अतिमब्बे न देह की परवाह की ओर ध्यान न देकर दिन रात उनके रोगों को दूर करने के निमित्त प्रभु से प्रार्थना करने लगी। जिनका प्रारब्ध दू हुआ था उनको वाञ्छित फल मिला। प्रभु ने अतिमब्बे को निमित्त बना लिया। उसका यश दिग्दिगंत फैलने लगा

अजितसेनाचाय जी ने अत्तिमब्बे से कहा —

जनता के दुख दद को दूर करने जाकर अपनी सारी शक्ति गँवाती जा रही हो। यही हाल रहा तो साल डेढ साल मे अपनी शक्ति से वचित हो जाओगी। क्या कोई साग-पात तौलने के लिए सोने का तराजू और हीरे का वटुआ वनवाएगा! इन वातो से विरत हो जाओ।

आचाय जी, क्षमा कीजिए! भवरोग को दूर करने के लिए तीथकरो ने युग युग तक तपस्या नही की? स्वामी! तीर्थकर महाप्रभुओ की शक्ति अपरिमित थी। मैं गरीबिन क्या कर सकूंगी? यदि मुझसे जनता का दुख दद दूर हो सकता हो तो हो जाने दीजिए। मैं निमित्त मात्र हूँ। सव प्रभु की कृपा है।

— अत्तिमब्बे ने विश्वानुकप से आर्द्र होकर कहा।

देखो वेटी, तीथकरो की वात अलग है। इस मत्य लोक मे कई ऐसे महानुभाव हैं जिन्हे अपूव सिद्धियाँ मिली रहती हैं। पर विशेष परिस्थिति के अतिरिक्त अन्यत्र उसका उपयोग नही करते। तुम तो सिचाई करने की धुन में जलाशय की वाँध ही तोडने लगी हो

आचाय जी ने कहा।

तव मैं क्या करूं? वताइए।

अत्तिमब्बे नतमस्तक थी।

वेटी! जनता से सहानुभूति रखो। धीरज वधाओ। भगवान का भरोसा रख कर भक्ति सहित प्रार्थना करने कहो। वे प्रार्थना करें। अन्यथा तुम्हारी यह दया अनुचित होगी। जनता आलसी वनेगी और तुम्हारा दीवाला निकलेगा। अव भी चेतो! यह महिमा-प्रदशन की भूख दवाई जाय। अपने आत्मा-कल्याण की वात सोचो कोई भी तीथकर यों ही जनता के दुख दद दूर नही करते। जिस प्रकार वैद्य दवा देता है और परहेज

कर रोगियों को पहन के लिए कहता है उसी प्रकार तीर्थंकर भी स्वास्थ्य-लाभ का मार्ग सुझाते हैं। और केवल आवश्यक प्रतीत होने पर दया या अनुग्रह करते हैं। अनन्त शक्ति सम्पन्न परमात्मा ही जब इतना सजग रहता है तो अल्पशक्ति पुरुष तुम्हारे लिए कितना संयम चाहिए, सोचो तो सही। अपने अपने कष्टों से पार होने के लिए उन्हीं को प्रार्थना करने का आदेश दो। जनता की भक्ति भावना को जागृत करो। सब में अनन्त शक्ति अन्तर्निहित रहती है। तुम्हारा काम उस शक्ति के स्रोत की ओर संकेत करना मात्र है। समझो!

— आचार्य श्री ने चेतावनी देने के साथ अतिमल्ल को कर्तव्य का रास्ता भी दिखाया

१७

अच्छिन्न देव युवक हुआ था। कनकपुरी में एक जिनालय बन कर तैयार हुआ था। मूर्तियों में बाहुबली की मूर्ति अद्भुत थी। मंदिरों में कनकपुरी का मंदिर अद्भुत था। जनता मुक्त कंठ से दोनों का यशोगान कर रही थी। कनकपुरी राजधानी बनने योग्य कोट, शहर, दुर्ग आदि से सम्पन्न हो गया। अतिमल्ल के नेतृत्व में ही महल, मंदिर, प्रासाद आदि बन गए। कनकपुरी के जिनालय में पंच कल्याण महोत्सव की तैयारी होने लगी। अतिमल्ल की योजना थी कि मंदिर में जिनमूर्ति की स्थापना हो महल का प्रवेशोत्सव हो और साथ ही साथ अच्छिन्न देव का शुभ विवाह भी सम्पन्न हो। अतिमल्ल की इस योजना का सब ने अनुमोदन किया।

अतिमल्ल के पाच भाई थे। भाइयों के यहाँ कन्याएँ थी। सब

के सब अत्तिमब्बे की बहू बनना चाहती थी। एक दृष्टि से उन में होड मच गई थी।

बेटियो ! मेरा इकलौता बेटा है। कैसे मैं सब को बहू बना सकूंगी ? एक, नही तो दो को बहू बना सकूंगी।

. . अत्तिमब्बे ने इन भतीजियो को समझाया।

मामी ! यह अण्णिग के अनुरूप है। विचार कर देखो।

— गुडुमय्य की छोटी बेटी की ओर से किसीने कहा।

मामी ! तुम सुमती को मत भूलो, सबसे सुदर है। अवश्य अण्णिगदेव इसे पसद करेंगे।

— एळमय्य की मझली बेटी की ओर से किसीने कहा।

मामी ! चद्रप्रभा में रानी बनने योग्य लक्षण है। देखो बदन कैसा गठीला है।

— पोन्नमय्या की दूसरी लडकी की सिफारिश इन शब्दो में पेश हुई।

मामी ! वह खूब गाती है आप के बेटे को रिजाने की कला भी जानती है। रोज आप को भजन सुना करेगी आप सोचिए और इसे ही अपनी बहू बना लीजिए।

आहवमल्ल की ज्येष्ट पुत्री का प्रस्ताव इन शब्दो में किया गया।

वल्ल की बडी लडकी घुघुराले केशवाली विमला थी। उस की योग्यता को प्रतिपादित करते हुए कहा गया

मामी ! यह खूब अभिनय कर सकती है। जिनेंद्र की पच कल्याण महोत्सव का ऐसा अभिनय कर सकेगी कि आप के समक्ष वह यथार्थ में उतरा हुआ लगेगा। गाने में भी किसी से कम नही है।

अत्तिमब्बे ने सब की बातें सुनी। सब को सात्वना देती हुई

बोली कि —

देखो यदि अग्निल माने तो मैं सब को वधू बना लूँगी।

अग्निल ने शीतला और विमला को पसंद किया। एक ही मुहूर्त में एक साथ दोनों कन्याओं का अग्निल से पाणिग्रहण हुआ। नगरी उस समय अमरावती के समान सुशोभित थी। पंचकल्याण महोत्सव हुआ जिनेंद्र का प्रतिष्ठापना-समारोह भी संपन्न हुआ। इसी समय इस विरचित अजित पुराण का प्रकाशन-महोत्सव भी अपूर्व ढंग से मनाया गया।

अजितनाथ दूसरे तीर्थंकर थे। आदिनाथ के दिव्य चरितों का अनुवाद पंप महाकवि ने कर दिया था। अब कवि चक्रवर्ती रन्न ने अजितनाथ की लीलाओं का गान किया था।

अयोध्या में जितशत्रु राज कर रहा था। उनकी रानी विजयसेना देवी थी। इन की ही संतान अजितनाथ थे। आप के जन्म के अवसर पर देवलोक ही पृथ्वी पर उतर आया था। अहिंसा धर्म के प्रभाव को दिखाने व प्रसार करने के लिए अवतरित अजितनाथ का जन्मोत्सव बड़ी धूम से मनाया गया। यथा समय अजितनाथ का पाणिग्रहण एक हजार कन्याओं से हुआ। वे युवराज भी बने। सहस्र लक्षक कोल कोमलाओं के साथ कई वर्ष रासक्रीडा आदि भोग विलास में मग्न रहे। एक बार उल्कापात हुआ। सहसा उनको लगा कि सारा संसार ही एक उल्का है न जाने कब इसका भी पतन होगा। अतएव सहसा विरक्त बने और दिगंबर सन्यासी हुए। कई वर्षों तक तपस्या करते करते जीव और कर्म के स्वरूप और संबंध समझा। तप में सिद्धि मिली। घाति कर्म नष्ट हुआ। अजितनाथ तब जिनेंद्र बने। समवसरण महोत्सव में सभी देवगण उपस्थित हुए। धर्म सभा में इस जिनेंद्र ने तीनों लोकों के सम्मुख जीव और कर्म का स्वरूप समझाया और उनकी संख्या उन से होनेवाली अनर्थों का वर्णन किया।

कर्म से छुटकारा प्राप्त करने का रहस्य वताया। इन सवका उपदेश सर्व भाषामयी दिव्य ध्वनि में दिया जिसे श्रव्यकोटि ने सुना और समझा।

इन तीर्थंकर के काल के चक्रवर्ती सगर थे। रन्न ने अजितनाथ पुराण में इनका भी वर्णन किया है। सगर की राजधानि अयोध्या थी। वही से आप पट्खण्डो पर शासन कर रहे थे। वृषभाचल पर पूर्व में भरतेश ने अपनी विजयगाथा खुदवाई थी। उसी की वगल में सगर ने कविरत्न से अपनी विजयगाथा खुदवाई। छियानबे हजार सुर सुदरियाँ उनका रनवास में थी और साठ हजार पुत्र थे और षटखण्डो के राज्यशासन आदि में निरत सगर ससार सागर में पूर्ण निमग्न थे। उनको समझा वुझाकर आत्मकल्याण के मार्ग पर लगाने के उद्देश्य से, उनके जन्म जन्मातर के मित्र मणिकेतु दो-एक वार प्रयत्न कर विफल मनोरथ हुए थे।

एक वार सगर चक्राधिप के साठ हजार कुमारो ने लील। से कैलास पवत के चारो ओर खाई खोदने का सकल्प किया। इससे असतुष्ट होकर मणिकेतु ने अपनी विद्या के वल पर भ्रम उत्पन्न कर दिया कि इन सव को भस्मी भूत कर दिया हो। उन में से केवल भगीरथ वच गया। उसने अपने भाइयो का हाल सगर से निवेदन किया। उस समय विप्र-वेश घर कर मणिकेतु आया और अपने इकलौते वेटे को, जिसे मृत्यु ने छीन लिया था, वचा देने का अग्रह करते हुए रो पडा। सगर की रानियाँ भी उसे घेर कर अपनी अपनी सतान को जिला देने का आग्रह करने लगी। सगर की सभी बहुऐं वहाँ आ गई अपने पतियो के वियोग में आँसू वहाते वहाते सागर ही उमड दिया। इस ऊधम के वीच सगर में वैराग्य जगा। ससार की अनित्यता का बोध उसे हुआ। संसार का त्याग किया। प्रेयसियो की ओर भी नही देखा। पुत्रो के शव तक नही देखा।

कर्म से छुटकारा प्राप्त करने का रहस्य बताया । इन सबका उपदेश सर्व भाषामयी दिव्य ध्वनि में दिया जिसे भव्यकोटि ने सुना और समझा ।

इन तीर्थंकर के काल के चक्रवर्ती सगर थे। रन्न ने अजितनाथ पुराण में इनका भी वर्णन किया है । सगर की राजधानि अयोध्या थी । वही से आप षट्खण्डो पर शासन कर रहे थे। वृषभाचल पर पूर्व में भरतेश ने अपनी विजयगाथा खुदवाई थी। उसी की बगल में सगर ने कविरत्न से अपनी विजयगाथा खुदवाई। छियानवे हजार सुर सुदरियां उनका रनवास में थी और साठ हजार पुत्र थे और षटखण्डो के राज्यशासन आदि में निरत सगर ससार सागर में पूर्ण निमग्न थे । उनको समझा बुझाकर आत्मकल्याण के मार्ग पर लगाने के उद्देश्य से, उनके जन्म जन्मातर के मित्र मणिकेतु दो-एक बार प्रयत्न कर विफल मनोरथ हुए थे।

एक बार सगर चक्राधिप के साठ हजार कुमारो ने लीला से कैलास पर्वत के चारो ओर खाई खोदने का सकल्प किया। इससे असतुष्ट होकर मणिकेतु ने अपनी विद्या के बल पर भ्रम उत्पन्न कर दिया कि इन सब को भस्मी भूत कर दिया हो। उन में से केवल भगीरथ बच गया। उसने अपने भाइयो का हाल सगर से निवेदन किया । उस समय विप्र-वेश धर कर मणिकेतु आया और अपने इकलौते बेटे को, जिसे मृत्यु ने छीन लिया था, बचा देने का अग्रह करते हुए रो पडा । सगर की रानियां भी उसे घेर कर अपनी अपनी सतान को जिला देने का आग्रह करने लगी । सगर की सभी बहुऐं वहां आ गई अपने पतियो के वियोग में आंसू बहाते बहाते सागर ही उमड दिया । इस ऊधम के बीच सगर में वैराग्य जगा। ससार की अनित्यता का बोध उसे हुआ। संसार का त्याग किया। प्रेयसियो की ओर भी नही देखा। पुत्रो के शव तक नहीं देखा।

दिगंबर सन्यासी बन गए । उधर राज्याभिषेक के होते ही मुनिचन्द्र पट्टराज रन-रत्न मोह निद्रा से जाग उन्होंने पिता की विरक्ति की बात सुनी । उन का भ्रम भी दूर हुआ । वैराग्य के महापूर में बह गए । सब के सब दिगंबर मुनि बने । कुछ समय के बाद मणीरथ भी अपने पुत्र बाहुबल को राज्य सौंप कर दिगंबर बने और कठोर तपस्या में निरत हुए । कालक्रम में कर्मक्षय हो गया केवल ज्ञान संपन्न हुए । रन्न ने अजितनाथ तथा सगर के इस दिव्य चरित्र को अत्तिमब्बे के परिवार को सुनाया । इसे सुनकर सब प्रसन्न हुए ।

अजितनाथ पुराण में रन्न ने अत्तिमब्बे का यशोगान भी मुक्त कंठ से किया था । अजितनाथ पुराण के उपोद्घात के रूप में अत्तिमब्बे का वृत्त जोड़ा गया है । अत्तिमब्बे का नाम इस कारण से अमर बना है । अत्तिमब्बे के व्यक्तित्व को बड़े ही सुंदर निरूपित किया है । पुराण प्रसिद्ध महिला रत्नों की कतार में रखकर दिखा दिया है कि वह किसी से कम नहीं है । रन्न ने अत्तिमब्बे को जिन जननी के समकक्ष माना है । कुवलय वनिता अभिनव वाग्देवी । चक्रवर्ति पूजिता जिनशासन प्रदीपिका । दानचिंतामणि । विनय चूड़ामणि । सम्यक्त्व शिरोमणि । शीलाभरणा । गुणमाला कब्बता आदि विशेषणों से रन्न ने अत्तिमब्बे का यथार्थ गुणगान किया है ।

अत्तिमब्बे ने अजितपुराण की एक हजार प्रतियाँ बनवाईं । मठों और मंदिरों में इस बाँट दिया । योग्य यतियों को भी दान दिया । महामना अत्तिमब्बे ने रन्न का सुवर्ण तुलाभार करके वह सुवर्ण कवि को दे दिया । और भरी सभा में रन्न का यशोगान करते हुए सम्मानित किया । कन्नड भाषामृत को दुहकर औटाकर इससे मलाई निकालकर रखने का श्रेय इस कवि का था । कन्नड भाषामृत जमाकर दही बनाकर मथकर उससे नवनीत निकालने का श्रम योग्य का था । कन्नड भाषामृत से बने नवनीत को औटाकर सुगन्धित घृत

बना देने का श्रेय रन्न के पाले पडा। ये कन्नड साहित्य के रत्न त्रय हैं। मैं दानचितामणि हूँ सही, पर मेरा यह पुत्र रन्न केवल दान-चितामणियो और सम्यक्त्व चूडामणियो का यशोगान करनेवाले चारण शिरोमणि है।

ऐसा कहकर अत्तिमब्बे ने सब का आनद बढा दिया।

१८

राष्ट्रकूटो के बाद गगराज्य दुर्बल बना। चामुन्डराय ने शस्त्रसन्यास ग्रहण किया और गोम्मट के सान्निध्य में ही आत्मचिंतन में लीन रहने लगा। जैसे ही समर परशुराम के शस्त्रन्यास का समाचार चोळो ने सुना तो उनमें सुप्त राज्य-दाह रूपी साप फन फैलाने लगा। कर्नाटक पर मद गज के समान चढ आए, पदतल पर आए हुए गावो को कुचल डाला। इस प्रकार चालुक्य साम्राज्या पर धाक जमाने के निमित्त आगे बढे। इरिवबेडग ने तुगभद्रा पार करके चोळो का मुकाबिला किया। सर्व सेनापति अण्णिगदेव ने इरिवबेडग का दाहिना हाथ बनकर चोळो से युद्ध किया। युद्ध में चालुक्य जीत तो गए पर दुर्भाग्य से ठीक उसी समय वर्षा प्रारभ हुई। तुगभद्र में बाढ आई। नदी के इस पार चालुक्यो की सेना, रसद उस पार रह गई। शस्त्रास्त्र भी उसी पार था। चालुक्य सेना हतबुद्धि-सी हो गई। न रसद न शस्त्र। करें ही क्या? ऐसे अवसर का लाभ उठाते हुए चोळो ने फिर से धावा बोलने का निश्चय किया और रास्ते में पडनेवाले गाँवो को लूटते हुए अपने लिए अवश्य रसद आदि जुटाने लगे। पहले चोळ हार गए थे और दुम दबा कर भाग खडे हुए थे।

अब रणोत्साह ने तुंगभद्रा की ओर कूच किया। इधर विजई चालुक्य सेना खाली हाथ रह गई थी। दोनों के बीच में केवल छः मील का अन्तर रहा होगा। एक के सिर पर विजय सवार थी इसी के कारण दूसरे के सिर पर शैतान सवार था बदला लेने के क्रोध के कारण।

एक दिन चोलों के पड़ाव में एक पालकी आई। उसके साथ पन्द्रह-बीस कहार भी थे। सैनिकों ने उन्हें रोका और डांट कर पूछा कि तुम कौन हो? और कहां से आ रहे हो? इस पालकी में कौन है?

हम तलकाड़ी जा रहे हैं? पालकी में राजमाता विराज रही हैं? — कहारों ने कहा।

यह उत्तर चोलों को अचंभे में डाल दिया। फिर उन चोलों ने सोचा कि यदि इसे हम कैद कर रखें तो अवश्य चालुक्य संधि कर लेने के लिए विवश हो जायेंगे। इस अवसर का खूब लाभ उठा सकते हैं। सेनापति को समाचार दिया गया। उन्होंने आते ही पालकी से उतर जाने की आज्ञा दी। कहारों ने म्यान से तलवार खींची फिर पालकी के चारों ओर खड़े हो गए। अत्तिमब्बे ने बाहर झांकते हुए पूछा कि किसने हम को रोका है?

हम चोल सेनापति हैं। हमारी आज्ञा है कि तुम उतर आओ अब हमारी हिरासत में हो समझी?

— सेनापति ने बड़े घमंड से कहा।

मैं क्यों उतर आऊं? कैसे तुमने मुझे हिरासत में लिया है? और क्यों

— अत्तिमब्बे की भौंहें तन गई थी।

अरे! क्या बकते हो! दो चार जमा दे तो दिमाग ठिकाने आएगी। चोटी पकड़ के उतारा लो।

चोल सेनापति ने अपने जवानों को आज्ञा दी।

कहारो ! तुम धीरज रखो ।

— अत्तिमब्बे ने कहरो से कहा । बाहर आई । चोळो के सम्मुख खडी हो गई और बोली

क्या मुझे हिरासत में लेना चाहते हो ? हम ने क्या अपराध किया है ? बताओ ।

अपराध ! अपराध यही कि तुम हमारे दुश्मन की माँ हो । तुम्हारे बेटे ने हमारे सैकडो जवानो को मारा है । उस अकेले व्यक्ति के कारण हम हार गए, नही तो सारा कर्नाटक हमारे पदतल पर आया होना ।

— सेनानी ने दात पोस कर जवाब दिया ।

मेरा पुत्र तुम्हारे ही समान सेनाधिपति हैं । अपने कर्तव्य का निर्वहण मात्र उसने किया है । क्या चालुक्य सेना में तुम्हारे हाथ किसी की मौत नही हुई ? वाद विवाद क्यो ? अपने व्यवहार की बात अपने पास ही रहने दो ।

अत्तिमब्बे ने सलाह दी ।

वाह ! तुम बडी चालाक हो ।

— व्यग से हँसते हुए सेनापति ने अपने सैनिको की ओर लाल लाल आँखो से देखते हुए कहा —

- क्या देखते हो ? बढो आगे ! ले लो हिरासत में !

वे आगे बढे । पालकी को घेर लिया । अत्तिमब्बे की' भौंहे चढ गई । बोली

खबरदार ! कही आगे एक कदम आया तो कुशल नही होगा । स्त्रियो, बाल बच्चो और निरीह जनता को कुचल कर साम्राज्य स्थापित करनेवाली तुम्हारी ऐसी बुद्धि पर थक है। तुम्हें धिक्कार है ।

अत्तिमब्बे ने जोर से कह दिया ।

जैसे ही योद्ध सैनिकों ने उसे पकड़ने के निमित्त हाथ बढ़ाया वैसे ही क्रुद्ध होकर ज्वाला मुखी के समान आग उगलती हुई दृष्टि से घूरकर अपने पदतल पर रहनेवाली मुट्ठी भर मिट्टी के उन सैनिकों की ओर फेंक दिया। उन को ऐसा लगा कि सैकड़ों हजारों बिजलियाँ एक साथ उन पर टूट पड़ी हो। विपक्षियों के लिए जहाँ बिजलियाँ टूट पड़ी थी वह स्वयंदीप कराहों को यात्रियों का जाल दिखाई दे रहा था। सभी योद्ध अव्याहत से मूर्छित हो गए। अतिमब्बे ने नमस्कार जपते हुए पालकी की परिक्रमा की। कहारों और पालकी को घर कर एक अग्निस्तम्भ निर्मित हुआ। घरे के अन्दर रहनेवालों को वह बचाती था। प योद्धों को वह सचमुच अग्निस्तम्भ ही था। उस अमानुषिक व्यापार से योद्ध हत प्रभ होकर खड़े रह गए।

अतिमब्बे पालकी म बैठ गई और पालकी आगे बढ़ी। पालकी और कहारों के चारों ओर निर्मित वह अग्निस्तम्भ भी उसी प्रकार आगे बढ़ा।

बढ़ी हो बढ़ी की यात्रा के बाद अतिमब्बे की पालकी तुंगभद्रा के किनारे आ पहुँची। चालुक्य सेना के पड़ाव पर उतरते ही अतिमब्बे ने मन्त्रजप करते हुए योद्धों का विसर्जन कर दिया। उस मन्त्र शक्ति से दोनों के बीच में विद्युत् प्राकार सृष्टित हुआ। चालुक्य सेना में यह लीला देखकर सारी सेना चकित हो उठी। खबर पाकर हरिवर्मदेव सेनाधिपति अम्बिद को साथ लिए चला आया। इस अमानुषिक एवं अप्राकृतिक दृश्य से वह चौंक उठा। सोचा अब हम दूरे फंसे न पीछे हटते बनता न आगे बढ़ते पीछे सैन्य प्रवाह है आगे यह अलौकिक विद्युत प्राकार है क्योंकि प्रवाह में उतरे तो हाथी भी पीठी से बह जाते। आगे यह आवस्था योद्धों का कोलाहल क्षण क्षण बढ़ रहा है। वे बढ़े आ रहे हैं। अब सब के पाले में फँस जाएँगे। हरिवर्मदेव चिंताक्रांत हुआ। अम्बिद को भी

कुछ नही सूझ रहा था। दोनो घबरा उठे। तब वहाँ सहसा एक पालकी दिखाई दी। आश्चर्य से दोनो देख ही रहे थे। अत्तिवब्बे वहाँ थी इरिववेडग आगे बढा।

माताजी ! कैसे समय दर्शन दिए।

कह उस के पदतल पर सिर रख दिया। अण्णिग भी कम चकित नही था। माताजी के चरणो में नतमस्तक हुआ। पदतल पर वह भी गिर जाता पर वहाँ इरिवबेडग दण्डवत पडा हुआ था। माताजी से बोला

माँ हम सकट में फँसे हैं। पीछे प्रवाह आगे शत्रु। अब यह नया सकट भी उपस्थित हुआ। खैर, आप श्रवणबेळगोळ मे क्यो कर आई? चोळ बडे नीच होते हैं।

अत्तिमब्बे ने इरिवबेडग को ऊपर उटाया। देह में लगी धूल पोच डाली। अण्णिग के सिर पर प्यार से हाथ फेरा।

माँ ! वही, सामने चोळो का सेना है। हमारे पास कुछ भी ही बचा है न रसद न शस्त्र! हम बडे सकट में फँसे हैं।

घवडा हट से अण्णिग फिर बोला।

अण्णिग घबराओ मत ! जब तक मैं जीवित हूँ कर्नाटक साम्राज्य का बाल तक बाँका न होगा। मेरे रहते न तुम्हारे लिए अनिष्ट की सभावना है न इरिववेडग की ही। बेचारे चोळो की कौन कहे चाहे तो समस्त भारत के राजा-महाराजा भी एक साथ आक्रमण करें। सेना को सँभालो। मेरी तप शक्ति से निर्मित इस विद्युत्प्राकार के निकट आने का साहस शत्रु करें तो जल जाएँगे।

— अत्तिमब्बे ने आश्वासन दिया।

माँ ! तुगभद्रा को शात करने के लिए कुछ तो करो।

— अण्णिग ने प्रार्थना की।

अण्णिग ! यह तुगभद्रा ही क्या? आवश्यकता हो तो मैं

सप्त समुद्र को अपार पौरुष से सोख सकती हूं । डरो मत । पार करने के लिए सन्नद्ध हो जाओ ।

— इस प्रकार धैर्य देकर अत्तिमब्बे ने पुत्र को और हरिसवेडन को विदा किया ।

अत्तिमब्बे के आगमन का शुभ समाचार चालुक्य सेना के कोने कोने में पहुंच गया । प्रत्येक सैनिक में विचित्र स्फूर्ति का संचार हुआ ।

चोलों ने आक्रमण करने का साहस किया । पर आगे बढ़ नहीं सके । उस विद्युत् प्राकार कूप-एक को पहले से निकट तक आ नहीं सकते थे ।

अत्तिमब्बे की शक्ति का अनुभव था अतएव आगे बढ़ने का विचार छोड़ दिया । दूर ही से चालुक्य सेना की गतिविधि को देखते रहे ।

चालुक्यों का आत्मबल ऐसा जाग पड़ा था कि उन्होंने बेधड़क खाना पिया । पेड़ के नीचे आराम से लेट कर पान चबा कर आया । धूप उतर गई । चालुक्य सेना नदी पार करने की तैयारी में लग गई । एक रथ पर जिन-मूर्ति को बिठा दिया । सैकड़ों दीप जलाए गए । पुष्प गुच्छों से रथ सजाया गया । अत्तिमब्बे भी रथारूढ़ हुई । जिन-मूर्ति के पलंग पर बैठ गई । उसकी बगल बगल में हरिसवेडन और अण्णिग बैठ गए । रथ में चार सफेद घोड़े जोते गए । उस नदी में उतार दिया । न दी का पानी किसी प्रभाव के कारण दस दस गज हट गया । बीच में रास्ता खुला । रथ आगे बढ़ा । पीछे से सैकड़ों हाथी हजारों घोड़े लाखों सिपाही चल पड़े । आश्चर्य की बात यह थी कि यह विद्युत् प्राकार भी उसके पीछे पीछे चलने लगा ।

चोल सेनापति यह देख ही रहा था । नदी पार करते हुए

शत्रु को रोकने की इच्छा थी फिर भी कुछ करते नही बन रहा था। इस विवशता नें उसको बेचैन कर दिया। फिर भी सेना को आज्ञा दी कि तीरो से हमला करो। उनके फेंके बाण अत्यत वेग से चले आते पर इस ज्योतिर्मंडल के पास आते ही पर जले पक्षी की भाँति गिरा जाते और जल जाते।

घडी दो घडी के अदर सारी चालुक्य सेना नदी के उस पार थी। चोळो ने भी इस मौके का लाभ उठा कर नदी पार करना चाहा। पर एक तो उस प्रज्वलित दीवार के निकट ही नही आ सके। सेना के पार पहुचते ही अत्तिमब्बे रथ से उतर आई और पूजा के फूलो को अजली में भर कर नदी पर चढाया। तुरत ही ऐसा शब्द हो उठा मानो समुद्र ही छीक रहा हो। पानी उमड आया।

बाढ के आघात से किनारे पर के वृक्ष गिर पडे। जिस से तुगभद्रा की शोभा और बढ गई। कर्नाटक महिला-रत्न के कीर्ति-प्रवाह में चोळों का पराक्रम बह गया। कर्नाटक की सीमा से बाहर खदेडने तक अत्तिमब्बे की मत्रशक्ति ने चोळो का पीछा किया।

१९

अत्तिमब्बे आँखो देखा की एक एक करके महान विभूतियाँ अस्तगत होती जा रही थी। ऐसे अवसरो पर कहती प्रभो! क्यो मेरे भाग्य मे ये सब मुझे देखना बदा है। खैर तुम्हारी इच्छा! कभी-कभी आप्तेष्टो की मृत्यु का समाचार मिलता। तब अपने कान के परदे को फाड देने के लिए प्रार्थना करती।

इस के पिता वृद्धावस्था में लकड़ेि बाए और वहीं अंतिम साथ तोडी। माताजी सती हो गई अंतिमक्षणे बोली —

पिताजी आप देवतुल्य है। आपने बहुत कुछ दान पुण्य किया। इस ढब से आपने दान दिया कि दांये हाथ का दिया बाँए हाथ को पता न लगे। माँ तुमने सचमुच भाग्यवती हो। तुम्हारे ही पुण्य से मैं धनवितामणि हु। आपने अपनी सारी संपत्ति मुझे दे डाली। मुझसे दान धर्म करा लिया। आप का सारा जीवन पति और संतान की परिधि में सीमीत रहा। भरतखंड की महिलाओ का आदर्श था आप का जीवन। अपनी सारी संपत्ति और कीर्ति समाजो म बाँट कर संपन्न थी। अपने व्रत अनुष्ठानादि किए पर किसी को पता भी लगने नहीं दिया। तुम कीर्तिकामना के पुतले थे।

— इस बच्चा में माता-पितरो का स्मरण करके रो पडी।

पितरों का वियोग हुए। थोड़े दिन हुए थे पप महाकवि के देहावसान का समाचार बिजली से टूट पड़ा। उनके साथ उनकी तीनों पत्नियो ने सहगमन किया। कवितागुणार्णव। क्यों तुमने आँखें बंद कर ली? हे नवोथ (हे ववमुख)। कलंकिन अब निगुरा बना। तुम्हारी तीनो रानियाँ तुम्हारे रत्न प्रभ मानो थी। भोगतीरध्र चतुर रत्नाकार रत्न। केवलवन्धकृदि सुनागमनमति !! कलंकि-कल्पका कलाकरण !!! अब तुम्हें कहा पाऊँ ?

— इस प्रकार गुण मनी का स्मरण करके रो पडी।

अभी पप के देहत्याग हुए पंद्रह दिन हुए होंगे वत्सप को मौत सनकुडी में हुई। साथ को सती होने से रोकने का भरसक प्रयत्न किया। मुझ अनाथिनि के लिए ही यही आप रह जाइए कहकर आग्रह किया। पर कौन परंपरा के विरुद्ध जाना चाहता है ? वत्सप कि चिता पर पद्मावती हँसते हँसते सो गई। इस प्रकार अपनी साथ को अग्नि जलाते देख कर अनिमल्दे से रहा नहीं गया। उसे

सभालने के लिए बहुए आगे बढी। उन्ही को सबोधन करते हुए अत्तिमब्बे बोली

ये ऐसे सास-ससुर थे कि कभी मेरे हाथ को रोकने का प्रयत्न नही किया। मुझे पतिहीना अनाथिनी जानकर सदा मेरी इच्छाओ को पूर्ण करने में लगे रहे। मैंने इनकी सारी सपत्ति लूटी इनके घर का मानो दीवाला ही निकाला। तब भी उसके मुह से चकार तक नही निकला।

ठीक इन्ही दिनो में पोन्न और अजितसेनाचार्य जी के अतिम दिन भी आए। प्रभो! कहकर रो पडी। सोच रही थी कि सचमुच पापी चिरायु होते हैं। आंख के आंसू अब सूख गए थे। सदा सुन्न से बैठे रहती सदा मन ही मन आचाय और पोन्न की महिमा का स्मरण किया करती थी। दो दिन बीते। काळलादेवी के काल कवलित होने का समाचार मिला।

मामी! काळलादेवी! घमड तुम्हारे नाम लेनेवाले के निकट भी नही रह सकता! गोम्मट के अत्युन्नत विग्रह खडा करके स्वर्ग और मर्त्य का अतर नाप दिया। मैं भावगीति हू तो तुम एक महाकाव्य हो।

कर्नाटक के महान व्यक्तित्व एक एक करके अस्त होते जा रहा है और देश अनाथ बन रहा है। न जाने और भी क्या क्या देखने के लिए मैं जीवित हू!

अत्तिमब्बे की आहें निकलने लगी। परिस्थिति ऐसी थी कि अत्तिमब्बे सदा सशक रहने लगी। दिन-रात उसे यही भय रहता कि कही कोई बुरा सुनना नही पडे। न जाने आज किसकी मौत होनेवाली है? उठते बैठते दुखद समाचारो का भय उसे सताने लगा था। एक दिन चामुडराय के स्वर्गवास का समाचार मिला।

—मामा जी मैं आप के प्यार को कैसे भूलू? आप के धैय स्थैर्य का स्मरण करके हृदय भी आश्चर्य चकित होता है। आप कैसे

महामहिम हैं। आप महामना हैं। आप की बराबरी करनेवाला इस संसार में कौन होगा? माताजी की आज्ञा के बहाने आपने इन्द्रगिरि की चोटी को कोमल बनाने को बाध्य किया और उस पाषाण को सजीव किया। बाहुबली की अनुपम मूर्ति गढ़ा? प्रस्तर प्रतिमाओं में जैसे बाहुबली हैं वैसे ही भव्यात्माओं में आप महान हैं अवश्य हैं। सचमुच आज कर्नाटक अनाथ हुआ। शिल्प-लोक निष्प्रभ हुआ। कन्नड़ काव्य-उपवन अंधकार मय बन गया। अब क्या बचा है? किस लिए अब जीवित रहना है? क्यों और किसके वास्ते मैं जीवित रहूँ?

— अत्तिमब्बे बार-बार बहुत रुदन करी।

अत्तिमब्बे अब पूर्ण विरक्त बन गई। कभी कभी सम्पत्ति भी दान दे बैठी। लोकधर्म कभी का मिट गया था। आए दिन मृत्यु का समाचार सुन सुनकर विषम होकर मोहकर्म भी मंद गया। अब उपवास करके देह शोषण करने लगी। दिन रात तपस्या में लीन रहती। स्वप्न में भी समवसरण को देखती हुई दिव्य ध्वनि सुनने के साथ में आत्मचिंतन में डूबी रहने लगी। लौकिक से विरक्त तो हुई पर लोक से विरत नहीं हो सकी। सदा याचकों की टोली पीछे पड़ी रहती। कभी कभी अत्तिमब्बे का हाथ खाली रहता। तब भी न नहीं कहती। अपनी वस्तुओं में कुछ न कुछ दिया देती थी। कभी कभी पुत्र के पास ही याचकों को भेजने के लिए विवश हो जाती थी।

प्रतिदिन मन्दिर प्रातःकाल अत्तिमब्बे के चरणों पर सौ मुद्राएँ चढ़ाकर रखा जाता था। उन में से एक एक मुद्रा अपने पोतों को देकर अपनी पुत्री को दस दस देकर, उस के नाम पर दस मुद्राएँ जमा रखती और बाकी सब दान देती थी। एक बार मठ दूर से आश्रम के व्यवस्थापक आए।

उन्होंने निवेदन किया

माताजी! आश्रम की आर्थिक स्थिति शोचनीय बन गई है।

विद्यार्थियो की सन्ख्या बढ रही है पर आमदनी घटती जा रही है। देने के लिए है कौन ? राष्ट्रकूटो के अधःपतन मे हमारी रीढ टूट गई। चामुंडराय भी गए। कल्पतरु सी काळलादेवी भी अब नहीं। गंगो की ओर से जो भी वार्षिकी बधी थी वह कम कर दी गई है। हम किंकर्तव्य विमूढ बने हैं। अजितसेनाचार्य की बातो के सहारे हम यहाँ चले आए। आचार्य जी ने कहा था कि जब तक अत्तिमब्बे है तब तक आप को चिन्तित होने की जरूरत नहीं होगी। संकट की स्थिति में दानचिन्तामणि के पास कहला भेजने पर सहायता मिल जाएगी। यही कहते कहते ध्यान भाव से समाविस्थ हुए थे। हम सब के द्वार खटखटा चुके। हर कही हमें वहान से टालने का स्वभाव दिखाई पडा। कही कही इतना दुःख सुना कि बस चलता तो अपने हाथ से उनकी ही कुछ सहायता कर आते। अन्त मे आप को ही कष्ट देना पडा। आप की अनुमति हो तो कही उधार लेकर अपना काम चला लेंगे। नहीं तो यही एक जैन विश्वविद्यालय है। इसे भी बंद कर देंगे। कन्नड प्रात में अब केवल दो ही जैनियो के आधार बच हैं। एक तो आप है दूसरे श्रवणबेळगोळ के गोम्मटनाथ हैं।

अत्तिमब्बे ने यह सब शांतचित्त से सुना। सोचने लगी — मेरी भूल थी कि मैं दानचिंतामणि बनी। समाज के दैन्य को दूर करने का बीडा व्यर्थ ही क्यो उठाया ? औरों के समान कही अज्ञात रह जाती तो यह संकट नहीं रहता। क्या जैन समाज रसातल चला गया ? यदि जनता अपनी ओर से जितना बने उतना ही हाथ बंटावें तो इस विश्वविद्यालय का भार संभालना कठिन होगा ? कैसी दरिद्रता आई है ? यह धनाभाव का परिणाम नहीं, भावना के अभाव का परिणाम है। जनता स्वार्थी और भाव-शून्य बन गई है। क्या करूँ ? अपने पास मैंने एक कानी कौडी तक नहीं रखी।

ऐसे सोचते सोचते अत्तिमब्बे की आँखो से आँसू की बाध

द् ई।

उसके आँसू देखकर आश्रमवासी बोले —

माताजी ! क्षमा कीजिए। आप को हमने कष्ट दिया। यह हमारी दुर्बलता थी। आप आँसू बहाइए! अजितसेनाचार्य जी की बात मानकर विवश होने पर चले आए। और आश्रम को चाहे बंद कर सकते हैं पर आप के आँसू देख नहीं पाते। आप का रोना और गोम्मटेश्वर का पतित हो जाना दोनों एक सा है!

प्रभुजी ! मैंने अजितसेनाचार्य जी को वचन दिया था। वचन का पालन करूँगी। आखिर दानदेनेवाली मैं कौन हूँ! अजितसेनाचार्य की धरोहर मेरे पास है। वही मेरे लिए अक्षय निधि है। आश्रम को बंद करने की बात सोची भी नहीं जा सकती। हाँ परिस्थिति के अनुरूप हमें परिवर्तन करना पड़ेगा। अब बंकापुर का काम समाप्त प्राय है। अब हमारे लिए सजीव कल्पवृक्ष केवल गोम्मटेश्वर है। अतएव उसे श्रवणबेळगोळ ले जाइए। हमारा विश्वविद्यालय वहाँ चल सकेगा। उसका नाम गोम्मटेश्वर विश्वविद्यालय हो। जब कवि जिस विश्वविद्यालय में अध्ययन कर रहा था वह बंद क्यों हो! जिस विश्वविद्यालय ने रन्न जैसे कवि दिया है उस का नामो निशान तक रहने नहीं पाय? चामुंडराय को शिक्षा पढ़ाकर यशस्वी बना हुआ विद्यालय स्थगित हो जाय? नहीं नहीं कष्ट का सामना करना है। करेंगे। चिन्तित न हो। श्रवणबेळगोळ में स्थापित करके चला दें। अभी इसका प्रबंध कर दीजिए।

— इतना कहकर अत्तिमब्बे अंदर गई। गोम्मट विश्वविद्यालय के लिए बहुओं से सहायता की याचना की।

बहुओं ने कहा —

माताजी ! हमारी सारी संपत्ति आप ही की देन है। इतना स्नेह हम पर आप रखा है कि हम ये छोड़े नहीं बने। आप

के नाम पर हम अपना सारा सुवण विश्वविद्यलय के लिए दान देंगी केवल इस मागल्य, नत्थू, नूपुर, कर्ण–फूल और दो दो चूडियो को रख लेगी।

ऐसा कहती हुई दोनो वहुओ ने अपना सारा सुवर्ण लाकर सचालको के सम्मुख ढेर लगा दिया।

महाशय ! अव इस से किसी भाति काम चलाइए। आगे भगवान की कृपा। श्रवणवेळगोळ में विश्वविद्यालय प्रतिप्टापित हो तो चिता नही रहेगी। कई महानुभाव परमात्मा के दर्शन के लिए आते रहेगे। कम से कम सौ में विद्यालय का एक दानी निकलेगा तो भी काम से चलता रहेगा।

— अत्तिमव्वे ने यह कह कर उन सचालको को विदा किया।

दिन बीतते गए। अत्तिमव्वे की भक्ति भी बढती गई। साक्षात् मूर्तिमती भक्ति ही बन गई। आंखो में सदा परज्योति की झाकी बसी रहती। कानो में सदा भगवन्नमामृत की धारा वहुएँ वहा रही थी। उसकी जीभ पचनमस्कार से पगी रही। अत्तिमव्वे में भक्ति के अनुपात में शक्ति भी बढी। अपनी अपूर्व शक्ति को छिपाए रखने का भर सक प्रयत्न किया करती थी, पर उसे अपना सयम कभी कभी तोडना पडता था। एक वार लक्कुडि में इरिववेडग का दरबार लगा हुआ था। वहाँ राजगज मस्ती में पागल बना और जो भी कुछ मिला नष्ट करने लगा। आखिरकार सीधे इरिवबेडग के दरबार में ही घुस पडा। इरिववेडग को सूंड मे उठाकर चक्राकार घुमा ने लगा इरिववेडग वह चीख उठा।

माँ ! वचाओ ! मा वचाओ !!

अत्तिमव्वे महल में ही थी। न जाने कैसे उसे यह बोध हुआ। दौडते दौडते दरबार आई। पचनमस्कार का जप करते हुए हाथी के पास गई। उसे देखते ही हाथी शात हुआ।

क्यों गजराज ! तेरी क्या सूझी ? अतिमब्बे के पद पर तेरी नजर लगी । धन्य तेरे को ।

— ऐसा कहते हुए उसकी पीठ सहलाने लगी । हाथी ने हरिबदेव को सूँड से उतार दिया । अतिमब्बे ने चरण पर पड़े हुए हरिबदेव को उठाया । उस का स्पर्श क्या था संजीवनी का स्पर्श करता था । वह नव चैतन्य पाकर जाग उठा । बोला —

मां तुम्हारी बड़ी कृपा है । नहीं तो मैं बे-मौत मारा जाता । वह अब भी थर थर कांप रहा था ।

उसे अभय दान देते हुए अतिमब्बे बोली —

बेटा ! गोम्मटनाथ की कृपा है ! पंचनमस्कार जपा करो ।

एक बार सपरिवार वन विहार करने अतिमब्बे गयी । नदी के किनारे पड़ाव पड़ा । सब अपने अपने खेल कूद में मग्न थे । नागदेव नामक अतिमब्बे का एक पोता था । वह न जाने कब दादी की जिन-मूर्ति लेकर खेलने गया । उसे मालूम रहा था कि वह हाथ से छूटी और नदी में कहीं खो गयी ।

अतिमब्बे ने अन्न जल छोड़ दिया । शपथ पूर्वक कहा कि जब तक काळगादेवी की दी गई पार्श्वनाथस्वामी की यह मरकत मूर्ति नहीं मिले तब तक अन्न जल ग्रहण नहीं करूँगी । यों ही वृद्धावस्था के कारण अतिमब्बे दुर्बल थी । अब निराहार रहने लगी । अन्निग परेशान हुआ । सारी नदी छनाई गई पर कहीं मूर्ति नहीं मिली । वैसे ही दस मूर्तियाँ बनवाकर माता जी के चरणों में अर्पित करने का वादा किया पर उसने स्वीकार नहीं किया ।

आठ दिन अतिमब्बे निर्जल रह गई ! उस दिन फिर हाथी के सिर अचानक सवार हुई । वह लोह-शृंखला तोड़कर भागा । रास्ते में जो कुछ मिला कुचल डाला । सीधे नदी में उतरकर उस जिनबिंब को सूँड से उठाकर झूमते-झूमते महल की ओर चला । अचरज हुआ

दृश्य को देख कर भक्ति-परवश हुई । पार्श्वनाथ की जय, गजराज की जयवाली घोषणा गूज उठी ।

हाथी आगे बढा । जहाँ अत्तिमब्बे थी वहाँ आया । अत्तिमब्बे की गोद में जिन-बिंब रख दिया । अत्तिमब्बे ने हाथी का सत्कार गन्ने आदि खिलाकर किया । सप्ताह भर जिनोत्सव मनाया गया। पोतो ने उस में भर-पूर योग दान दिया । भक्ति की बाढ उमड पडी ।

एक बार गोम्मटेश्वर जिनालय के सचालक फिर से आए।

महाशयो ! आप के शुभागमन से बडा हर्ष हुआ । मैं आप की क्या सेवा कर सकती हूँ ।

अत्तिमब्बे ने सतृप्ति से विनयपूर्वक प्रश्न किया ।

माताजी ! आप के दान से श्रवणबेळगोळ में विश्वविद्यालय बना । यात्रार्थियो से भी कुछ न कुछ मिलता ही रहता है । पर इसी से विश्वविद्यालय का काम सुचारु रूप से चल नही सकता । अभी कोई समस्या नही है । फिर भी आचार्यपाद का अभिमत है कि इस के लिए स्थाई व्यवस्था हो जानी चाहिए । मूल-निधि आप के नाम पर स्थापित हो जाय । अतएव यहाँ आकर आप को कष्ट देना पडा ।

सचालको ने निवेदन किया ।

मूल-निधि की बात है ? कितने की होगी ?

• अत्तिमब्बे ने सहज ही प्रश्न किया ।

कम से कम एक करोड की तो होना ही चाहिए ।

— सचालको ने उत्तर दिया ।

यह सुनते ही अत्तिमब्बे का उत्साह ठडा पडा । पर इस भाव को व्यक्त नही किया । उन लोगो से इतना ही कहा कि आप यही रह जाइए । एक सप्ताह के अदर इसका प्रबध हो जाएगा ।

अत्तिमब्बे यो तो खाली हाथ थी । अपना कहने के लिए एक

कौड़ी भी नहीं रही फिर भी उसने सुपात्रको तो आश्वासन दे दिया।

पार्श्वनाथ के सम्मुख चुपचाप बैठे बैठे मानसिक पूजा करने लगी। मन ही मन सुवर्णाभिषेक भी कर दिया। पांच दिन बीत गए।

प्रभो क्या अंतिम दिनों में मेरी बात खाली चली जाय? अब तक तुम्हारी कृपा से किसी को भी ना नहीं कहा। अब तक मेरी लाज रखी। आखिरी दम तक मेरी लाज रखना। तुमसे कभी मैंने अपने लिए कुछ नहीं मांगा है जनता के लिए मांग रही हूं। देश के लिए मांग रही हूं। दीन दुखियों को मेरे घर आने की प्रेरणा देनेवाले तुम ही तो हो। क्या यही तुम्हारी लीला है? अब यह मनमनोमोह से सुपात्र कैसे जा सके? करोड़ रुपयों की मांग कौन कर रहा है? यह तुम्हारी प्रेरणा नहीं है? मुझ अबला की परीक्षा लेना चाहते हो? तुम तो स्वामी जानते ही हो कि इस अकिंचन के पास क्या है और क्या नहीं है। निस्तेज सूर्य कांतिहीन चन्द्र दान न दे सकनेवाली दान चिंतामणि! इनका रहना न रहना बराबर है। प्रभो अब मेरे घर में स्वर्णवृष्टि हो ताकि आए हुए ये अतिथि खाली हाथ न लौट पावें। फिर मुझे समाधिमरण ही दे दो। कोई बात नहीं।

इस प्रकार उसका रोमरोम रो रहा था। ठीक उसी समय इस के पीछे पोतियाँ चली चली आईं। पोता ने देखा कि दादी की आंख बह रही है। पद्मरत्न से रहा नहीं गया। पूछ लिया —

दादी रो क्यों रही हो?

— [illegible] ने प्रश्न किया।

दादी? तबीयत तो ठीक है?

पद्मरत्न ने हाथ से छूकर प्रश्न किया।

दादी! बताओ तुमको क्या चाहिए? रोओ मत।

जो चाहे मांगो मैं ला दूंगा। तुम रोओगी तो मैं भी रो दूंगा।

— चौथे नागदेव ने सहानुभूति मे सनी आवाज में कहा और हथेली से आंसू पोछ डाले।

बच्चो ! मैं क्या उत्तर दूं ? तुम में से कोई मेरी मांग पूर्ण नही कर सकोगे।

ऐसी बात नही दादी। हम अवश्य कर देंगे।

— प्रत्येक ने विश्वासपवक कहा।

देखो ! मुझे बहुत पैसे चाहिए। मेरे हाथ में एक पैसा तक नहीं है।

अत्तिमब्बे ने अपने पोतो के सम्मुख अपनी शोचनीय स्थिति का वणन किया।

बस ! पैसे के लिए रो रही हो ?

इतना कह कर सब वापस गए और कुछ ही क्षणो मे लौट आए।

दादी ! लो इतना मेरे पास है।

—गुडमब्बे ने अजुली भर सुवण मुद्रा लाकर अत्तिमब्बे के सामने रख दी। इसी प्रकार अब्बकब्बे और पद्मब्बे ने किया।

दादी, अब मेरे पास सिफ इतना ही धन है। इस में आधा तुम लो। आधा मेरे पास रहेगा।

— नागदेव ने बांटते हुए कहा।

बेटा ! तुम्हारी बहनो ने अपनी सारी पूंजी दे दी। तुम तो केवल आधा देने की बात कहते हो। यह क्यो ?

नागदेव को गोद में लेकर प्यार से अत्तिमब्बे न प्रश्न किया।

दादी ! और आधा हिस्सा बचा कर रखे रहूंगा। और कभी तुम्हें जरूरत पडे तो ला दगा। समझी !

— बहुत ही सहज भाव से छोटे नागदेव ने उत्तर दिया।

अतिमब्बे का हृदय फूल उठा। आनन्दाश्रु के फौव्वारे फूट निकले।

कंजूस कहीं का। दादी! यह बड़ा कंजूस है।

सब बहनों ने एक स्वर में प्रहार किया।

पगली! तुम सभी मेरे ही समान मूर्ख हो। यह मेरा मुन्नू बड़ा समझदार है और होशियार है। एक ओर उदारता से दान करता है तो दूसरी ओर कुछ आपद्धन भी बचाए रखता है। दोनों चाहिए नहीं तो मेरे ही समान तुम लोगों को रोना पड़ेगा।

— इस प्रकार पोतों को समझा बुझाकर देखा साढ़े तीन अंजुली भर स्वर्ण मुद्राएं थीं। अतिमब्बे ने उन्हें अंजुली में भर कर भक्ति पूर्वक पार्श्वनाथ का स्वर्णाभिषेक किया कुबेर का खजाना ही मानों बहा दिया। क्षण भर अन्तर्मुखी हो ध्यानस्थ रही। आँखें क्या खुली देखती है सामने एक ओर अण्णिग दूसरी ओर हरिकेशव खड़े हैं। पोते सब चले गए हैं।

हरिकेशव! कब आए बेटा? तैलप जी कुशल से तो हैं? महारानी जक्केश्वरीदेवी कैसी हैं?

माताजी! सब कुशल हैं। आप के दर्शन की इच्छा हुई। चला आया। हरिकेशव ने उत्तर दिया।

चक्रवर्ती सार्वभौम को इस बुढ़िया के दर्शन की चाह! कहो किसलिए आए?

अब अतिमब्बे हँस पड़ी।

आप को झूठ? तब तो मेरा चक्रवर्ती पद आधी घड़ी भी नहीं रहेगी माँ। सचमुच आप ही के दर्शन के लिए आया। पिताजी ने आप की सेवा में कहला भेजा है कि नागदेव के स्वर्गवास होने पर नियमानुसार राज्य की ओर से कुछ क्षतिपूर्ति देनी थी। उस समय भूल गए। अब एक सप्ताह से पश्चाताप के मारे उन्हें सोते जागते शांति नहीं मिल रही है और आपद्धन के रूप में मक्खन देह की

धरोहर भी हमारे पास पडी हुई है । वह भी आप को मिलनी चाहिए। इसे चुकता कर देने के निमित्त मुझे भेजा है । हिसाब लगाने पर कुल दो करोड दो लाख मुद्राएं निकली । उसे हाथियो पर लादकर यहाँ ले आया हूँ, स्वीकार कीजिए और शुभाशीर्वाद दीजिए ताकि हमारे वश का भला होता रहे।

अत्तिमब्बे ने पूजाविग्रह हाथ में लिया और ऊपर उठाते हुए कहा

प्रभु पार्श्वनाथ सब का भला करेगा । मेरे बालबच्चे अलग नही तुम अलग नही हो । जब तक मैं जीवित हूँ तब तक तुम लोगो का बाल तक बाँका नही होगा ।

फिर पुष्प का प्रसाद इरिवबेडग को दिया। चरणामृत दिया। जैसे बाल बच्चो को दिया करती थी वैसे ही भोग चढाए गए मेवा आदि भी इरिवबेडग और अण्णिग को दिया।

ठीक उसी समय रन्न कवि हाँफते हाँफते आ उपस्थित हुआ। अत्तिमब्बे के दर्शन से सतुष्ट होकर बोला

माता जी ! इधर एक सप्ताह से न जाने आप क्यो खिन्न हैं । कम से कम मुझसे अपना दु ख कहे देती !

घबडाए हुए पूछा।

बेटा ! कैसे जाना कि मैं दुखी हूँ ।

माँ ! मैं भत्तग्राम में भले ही रहूँ पर मेरा मन सदा आप ही के चरणो में लीन रहता है। आँख अधी हो पर ही की आँख अधी नही होती । मेरे साथ चलिए । प्रमाण दे दूंगा ।

इतना निवेदन करके अत्तिमब्बे, अण्णिग और इरिवबेडग को साथ ले गया और महल के आँगन मे अपने रथ पर स्थित मूर्ति को अनावरण कर देने का आग्रह अत्तिमब्बे से किया । अत्तिमब्बे ने विवश होकर उसका अनावरण किया और दग रह गई। वहाँ अतिमब्बे

को ही पद्मासनासीन सुवर्ण प्रतीक के रूप में पाया। उसकी आँखों से बहते आँसू के बिन्दु स्पष्ट दिखाई दे रहे थे। इसे देखकर सब आश्चर्य चकित हुए।

तात ! कहाँ से इतना सोना आ गया ?

अग्निमन्ये ने राम से पूछा।

माताजी आप का दिया हुआ है आपने मेरा तुला भार करा दिया था। उस सोने से आप की मूर्ति गढ़वाकर नित्य पूजा कर रहा हूँ।

जीवित व्यक्तियों की मूर्ति बनवानी नहीं चाहिए! मृत व्यक्तियों की मूर्तियाँ बनाई जाती है।

अग्निमन्ये ने कहा।

माता जी ! आप तो अमर है। आप इस नियम के अपवाद हैं।

— राम ने गम्भीरता पूर्वक झुककर नमस्कार किया।

पागल कहीं का ! सोना दिया था आराम से रहने के लिए। बाल बच्चों और उनकी माँ को आभरण बनवाते। आराम का जीवन बिताते। उसके बदले मुझ जैसी साधारण स्त्री की मूर्ति बनवाने में सारा सोना गवा बैठे। मुझ जैसी विधवा अनाथिनी की मूर्ति बनवाकर पूजा की ? तुमने अपनी मूर्खता से इस तरह चार चाँद लगा दिए हैं ! मेरे नानाजी कहा करते थे कि कवियों का व्यवहार ज्ञान शून्य रहता है। तुम्हारा बर्ताव साक्षी भर रहा है। इस सुवर्ण से सहस्रों जिन-मूर्तियाँ बनवा सकते थे ! अग्निमन्ये ने राम को डाँटा।

माताजी ! जिनेन्द्र आप की दृष्टि में बड़े हैं पर हमारी दृष्टि में आप बड़ी हैं ! आपने मेरी गलतियों को छोड़कर छिपाकर सैन्नी चोरी एक कर दी है। मेरे बेटे राम को इतना दिया है कि कोई हिसाब नहीं कर पाता। मेरी पुत्री छोटी अग्निमन्ये का तुलाभार करके चोखा सोना ही दे रखा है। अब मुझे पहला भी सूझ नहीं है। मैं भ्रम से रहता हूँ। यदि किसी दिन मैं निर्धन भी बनूँ तो आप की

मूर्ति के सामने बैठकर प्रार्थना करूँगा ।

यह कहते समय रन्न भाव-परवश था।

सबो ने मिलकर भक्ति पूर्वक अत्तिमब्बे की सुवर्ण प्रतिमा उठाई और सीधे महल के दीवानखाने ले आए । वहाँ इरिवबेडग के द्वारा लगाए गए सोने के ढेर के सम्मुख रख कर इरिवबेडग, अण्णिग और रन्न तीनो ने मिलकर उस मूर्ति का अभिषेक ऐसे ही किया जैसे जिन-मूर्ति का किया जाता है । जलाभिषेक, क्षीराभिषेक और गधाभिषेक किया । अजली में भर-भर कर सुवर्ण से भी अभिषेक किया। बहू-बेटे, बालबच्चे सब ने मिलकर अत्तिमब्बे की जय ! दानचितामणि की जय ! सम्यक्त्व चूडामणि की जय ! कह कर जयघोष किया ।

अत्तिमब्बे को बच्चो का यह खेल अच्छा लगा । वह आनद से फूल उठी। पार्श्वनाथ की हरी मूर्ति को अपनी सुवर्ण-मूर्ति की जाघो पर रखा और कहा —

महाप्रभो ! इन बालको को आशीर्वाद दो । मैं नही जानती कि ये क्या कर रहे हैं । अच्छा है या बुरा, तुम ही जानो । इसे स्वीकार करो । इन पर अनुग्रह करो ।

— भक्तिभाव से अत्तिमब्बे गद्गद् हो उठी।

अत्तिमब्बे की सुवर्ण प्रतिमा की जाँघो पर पार्श्वनाथ की मूर्ति रख देने से ऐसा लग रहा था मानों दानचितामणि सम्यक्त्व में पनपकर फूली-फली और पगी हो ।



परिशिष्ट

पारिभाषिक शब्द-कोश

अकृत्रिम जिनालय

स्वयं निर्मित जिनमंदिर कुल ८ ५६ ९७ ४८२ ऐसे मंदिर तीनों लोकों में पाए जाते हैं। यहाँ केवल देवताओं की ओर से जिनों की पूजा होती है।

अनुमोदन पुण्य

किसी सत्कर्म के अनुमोदन से मिलनेवाला पुण्य।

अपराजित

पूर्व विदेह के अजितवीर्य तीर्थंकर।

अर्हत (अर्हंत) केवली और तीर्थंकर

घातिकर्मों से मुक्त चेतनाओं को अर्हत कहते हैं। उनकी दो कोटियाँ हैं 1) जो अपने निर्वाण के लिए प्रयत्नशील होते हैं वे केवली हैं और 2) जो लोक-सामान्य की मुक्ति की कामना रखते हैं ऐसे विश्वानुकंपी चेतना तीर्थंकर हैं। ये दोनों जिन और सर्वज्ञ भी कहलाते हैं। इनका शरीर अप्राकृतिक होता है। जरा स्वेद आदि रहित एवं सदा सुवासित रहता है। इस परम पवित्र शरीर का ही दूसरा नाम परमौदारिककाय है।

आर्यिका

जैन संन्यासिनी विरक्ता।

ईशानकल्प

पृथ्वी के ऊर्ध्व भाग में क्रमशः दो-दो लोकों के आठ स्तर हैं

जिन को कल्प कहते है। प्रथम स्तर में दक्षिण की ओर फैले हुए लोक को ईशानकल्प कहते हैं ।

ऊर्जयत

जुनागढ (गुजरात) के तीन मील दूरी पर रहनेवाले गिरनार को ऊर्जयत कहते हैं। यही बाईसवें नेमिनाथ तीर्थंकर ने निर्वाण प्राप्त किया ।

कर्म - घातिकर्म और अघातिकर्म

यह अचेतन तत्व है । काया, वाचा मानसा कर्म सग्रह हुआ करता है । यही जीव के जन्म, जीवन और मरण का कारण है । दैविकगुणो को आच्छादित करनेवाले कर्म को घातिकर्म कहते है। ज्ञानावरणीय, दशनावरणीय मोहनीय और अतराय ये घातिकर्म के अवातर भेद हैं। नाम, गोत्र, आयु और वेदनारूप कर्म का नाम अघातिकर्म है। घातिकर्म से मुक्त जीव जिन कहलाता है अघातिकर्म से भी मुक्त होने पर जिन ही सिद्ध कहलाता है ।

कषाय सल्लेखन

अतरग के रागद्वेष को क्रमश कुचल डालनेवाला व्रत

कुन्दकुन्द

ई पहली सदी में विद्यमान जैनाचार्य थे । प्रवचनसार, नियमसार, समयसार और पचास्तिकाय नामक दार्शनिक ग्रन्थो के रचयिता है ।

कैलासगिरि

आदि तीर्थकर आदिदेव का निर्वाण-स्थान ।

गुणस्थान

जैनागमो के अनुसार मुक्ति पथ के चौदह गुणस्थान है ।

बारहवें तीर्थंकर वासुपूज्य का जन्म और निर्वाण स्थान । भागलपुर (बिहार) के पास आजकल चंपापुर नाम से यह स्थान प्रसिद्ध है ।

क

मध्यस्थान में एक उत्तम

घातिकर्म से मुक्त जीव

ई. दूसरी सदी में गुणधर मुनि ने १८ गाथाओं में कषाय प्राभृत नामक आगम ग्रंथ की रचना की। उस पर वीरसेनाचार्य एवं उनके शिष्य जिनसेनाचार्य ने (८१४–८७२) क्रम से २ और ४ श्लोकात्मक व्याख्या लिखी है। इस व्याख्या का नाम जयधवल है ।

विश्वात्मरूप पूरित मुक्त-आत्मा

तीर्थंकर-वाणी

ई. दूसरी सदी में भूतबली और पुष्पदंत आचार्यों ने मिलकर छः सौ सूत्रों में जिनागमों का संग्रह किया । इस पर वीरसेनाचार्य (८१४-८७२) ने ७२ श्लोकों की व्याख्या लिखी। इस वृहत्कृति का नाम धवला है ।

तीर्थंकर बनने की योग्यता प्रदानवाला नाम कर्म ।) माँ के

गर्भ में आने के छ महीने पूर्व 2) जन्म लेने पर 4) वैराग्य-प्राप्ति के बाद, 5) केवलज्ञानी बनने के समय और अघातिकर्मों से मुक्त होकर सिद्ध बनने के अवसर पर चतुर्निकाय अमरों द्वारा मनाए जानेवाला उत्सव।

पचनमस्कार

जैन गायत्री। अर्हत, सिद्ध, दिगंबराचार्य, दिगंबर यति (उपध्याय) और दिगंबर मुनि इन पाचों के दैवी गुणों का स्मरण करना।

पचपरमेष्ठि

अर्हतादि पाचकोटि के जीव जो पचनमस्कार के विषय हैं।

परीषह

मुक्तिपथ के राडे।

परमौदारिककाय

अप्राकृतिक तत्व से निर्मित १०८ लक्षणों से युक्त अर्हत देह।

पिंच

जैन साधु के हाथ में रहनेवाले मोर पिच्छ के झाडू।

बलदेव

त्रिषष्ठि - शलाका-पुरुषों में नौ बलदेव माने जाते हैं।

रत्नत्रय

1) सम्यग्दर्शन (जैनागमो पर विश्वास) 2) सम्यक्ज्ञान (जैनागमों का ज्ञान) 3) सम्यक्चारित्रय जैनागमो के अनुरूप जीवन बिताना।

लोच

सिर और दाडी-मूंछ के बाल उखाडने की क्रिया।

वासुदेव

त्रिषष्ठि-शलाका पुरुषों में नौ वासुदेव और नौ प्रतिवासुदेव भी हैं। प्रतिवासुदेव को पराजित करके वासुदेव अर्ध चक्री बनते हैं।

विदेहक्षेत्र

तीर्थंकरों का निवास स्थान। जम्बूद्वीप के सप्त क्षेत्रों में चौथा।

श्रावक-श्राविका

जैन गृहस्थ नर-नारी।

समवसरण

तीर्थंकरों के सत्कार समारम्भ जो देवताओं द्वारा आयोजित होता है। इस सभा में तीर्थंकर उपदेश देते हैं।

सम्यग्मिरण

शुभ-संकल्प में आनंदवाली मृत्यु।

सम्मेदशिखर

यहाँ बारह तीर्थंकर निर्वाण हुए हैं। बिहार प्रांत में हजारीबाग जिल्ला में है। ४४८१ फुट ऊँचा है।

सामयिक

संध्या समय की प्रार्थना।

सल्लेखना

दो प्रकार के हैं 1) कषाय सल्लेखन अर्थात् रागद्वेष का ह्रास और 2) काय सल्लेखन-आमरणान्त अशनादि का त्याग।

सिद्ध

घनघातिकर्म से मुक्त जीव।

सिद्धलोक

जैनागमों के अनुसार त्रिलोक में अंतिम लोक जहाँ सि[द्ध] निराकार स्थिति में अनन्तकाल अनंत विहार करते रहते

परिशिष्ट

शुद्धि पत्र

विज्ञ पाठको से निवेदन है कि नीचे के सही रूप मकेनानुसार यथास्थान जोडकर पढे ।

पृ स	पक्ति	शुद्पाठ	पृ स	पवित	शुद्धपाठ
10	10	राजकीय	20	23	उद्दीप्त
25	1	प्रेयसी	25	3	में
26	7	अगुली	26	11	अपने
27	14	तिलक	28	4	ग्रहण
29	8	का	29	13	अवेग
30	19	व्रत	32	7	रहे
34	22	के लिए	34	23	और
36	6	महर्षि	36	7	ओतप्रोत
37	24	कविचक्रवर्ती	38	14	त्याग
40	26	लोक	46	3, 7, 8	चक्रवर्ती
46	11	आश्वासन	99	1	आश्चय
102	26	पुरा	108	3	मूंछो
108	17	समझी	116	1	लिपटा
116	12	मखमली	125	17	सताने
133	18	कल्पना	133	18	विभार
152	16	समथन	163	16	तो
164	19	दिया	179	24	लिए
182	1	मत्र	184	19	से
188	3	ताक	191	16	वहाइए
199	6	वताई	200	8	विशेप

पृ. सं.	पंक्ति	शुद्धपाठ	पृ. सं.	पंक्ति	शुद्धपाठ
208	14	तुम्हारी	209	7	चीटी
209	15	पदार्थ	212	12	सुरूपा
212	18	मान		20	पोष को
	21	पालन	213	3	तो भी
213	18	दृष्टि		22	शारीरिक
	25	देह न	220	23	स्पर्श
220	25	सर्वांगी		25	प्रभु को
221	5	इस	225	15	रिझाने
225	22	के	226	24	पास
227	9	उनके	231	10	पीस
232	13	कहारो	233	3	आये यहा
233	13	पोछ	234	22	सरक
235	2	आशा	235	4	फिर
	7	करना		8	था
,,	22	अतिमन्यु ने	236	2	अतिमन्यु
236	5	तुम		10	अपने
	16	नाबोध		2	की
	26	बजाते			

अ. शु. पृ. 175 पंक्ति 7 में—संगीत नृत्य से नहीं — होना चाहिए, उसी पृ. पर 10 वीं पंक्ति में—से नहीं—पदपृष्ठ छोड़ कर पढ़ना चाहिए।

पृ. 234 की 9वीं पंक्ति में कुछ शब्द अधिक पड़े हैं— सही वाक्य यों है — उस विकृत आकार के निकट आ नहीं सकते थे।

उसी पृ. के 11 वीं पंक्ति के प्रारंभ में — कुछ एक को पहले से — जोड़कर पढ़ा जाय।

